मेरे कामकाजी जीवन के संस्मरण

एम० विश्वेश्वरैया

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नई दिल्ली

आश्विन १८८९ (सितंबर १९६७)

मूल्य : ५.००

भूमिका

इस पुस्तक मे मेरा प्रमुख उद्देश्य है अपने कामकाजी जीवन का सक्षिप्त और प्रामाणिक परिचय देना। सभव है कि पाठको को अन्त मे जोड़े गये तीन अध्याय इस प्रकार की पुस्तक के लिए कुछ असगत से लगें, क्योंकि वे जिन समस्याओ को लेकर लिखे गये है उनका इस पुस्तक से प्रत्यक्षत कोई सम्बन्ध नही है। यहा यह स्पष्ट करना होगा कि मैंने अपने अनुभवो से जो कुछ सीखा है उसे देश के राष्ट्रीय जीवन पर लागू करने का मेरा यह पहला प्रयास है, चाहे यह (प्रयास) कितना ही सक्षिप्त और दोषपूर्ण क्यो न हो।

पिछले कुछ वर्षों मे असाधारण ही नहीं कुछ क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं, और आगे भी होते रहेंगे। भारत का विभाजन कर दिया गया और उसके प्रधान भागीदार, भारत ने एक लोकतन्त्र की प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली।

कार्यकुशलता, कर्त्तव्यनिष्ठा और जीवन-स्तर की दृष्टि से आज के भारत और प्रगतिशील देशो मे, जिनमे अमरीका का उदाहरण सब से प्रत्यक्ष है, बहुत अन्तर है।

भारत की जनसंख्या, मेरे ही जीवनकाल मे, दुगनी हो गयी। देश के कृषि-प्रधान होने के बावजूद, इतनी तेजी से बढती हुई जनसख्या के लिए पर्याप्त अन्न का उत्पादन नही हो पाता। देश मे काम करने की सुस्त गति चिन्ताजनक है। यदि स्वतन्त्रता का कुछ अच्छा परिणाम होना है तो लोगो की शिक्षा, आदतों, कार्यक्षमता और ससार के बारे मे उनके ज्ञान की वृद्धि के लिए जल्दी ही प्रयत्न होने चाहिए। उन्हें अधिक काम करना है और अधिक उत्पादन करना है। सरकार की आर्थिक नीति मे भी आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है, जिससे जीवित रहने के लिए संघर्ष कम कठिन हो, और भविष्य अधिक उज्ज्वल हो।

भारत के लिए यह संभव नहीं है कि वह आगे न बढ़े और एक गतिहीन और योजनारहित देश बना रहे। यदि उसकी अधिकांश जनता संसार के मामलों, आधुनिकतम व्यावसायिक सिद्धान्तो और रचनात्मक विचारो के बारे मे व्याव-

हारिक ज्ञान हासिल नहीं करेगी और सृजनात्मक शक्ति से अनुप्राणित नहीं होगी तो उसका भविष्य खतरे में पड़ जाएगा।

मैं उन चारों मित्रों का भी ऋणी हूं, जिन्होंने इस पुस्तक की पाण्डुलिपि को पढ़ा और उसके सुधार के लिए बहुमूल्य सुझाव दिये।

—एम० विश्वेश्वरैया

विषय-सूची

अध्याय | पृष्ठ संख्या

अध्याय	पृष्ठ संख्या
१. सरकारी सेवा में प्रवेश	९
२. सिंचाई इंजीनियरिंग, जल-वितरण तथा जल-निकास	१७
३ बम्बई राज्य में किये गये कार्य	२६
४ बम्बई राज्य में काम	३३
५. हैदराबाद (दक्षिण) में विशेष सलाहकार— इंजीनियर के पद पर	४१
६. मैसूर में चीफ इंजीनियर के पद पर	४९
७. मैसूर मे दीवान के पद पर नियुक्ति	६०
८. सुधारवादी प्रयास	६८
९. शिक्षा-प्रसार तथा मैसूर विश्वविद्यालय	७६
१०. मैसूर मे लोक-सुधार के कार्य	८४
११. बाद की परिस्थितिया और नौकरी से ऐच्छिक अवकाश-ग्रहण	९४
१२. अवकाश-प्राप्त करने के बाद मैसूर मे किये गये कार्य	१०१
१३. सलाहकार इंजीनियर के रूप मे किये गये कार्य	१०९
१४. सरकारी तथा सार्वजनिक समितियों मे	११७
१५. राजनीतिक तथा अन्य सम्मेलन	१२५
१६. विदेश-यात्रा	१३१
१७ राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा	१४१
१८. राष्ट्रीय चरित्र	१५०
१९. राष्ट्रीय निर्माण और राष्ट्रीय कार्यकुशलता	१५७

अध्याय

सरकारी सेवा में प्रवेश

तेईस वर्ष की आयु में पूना कॉलिज ऑफ़ साइंस से इंजीनियरिंग की शिक्षा पूरी करने के पश्चात्, फ़रवरी सन् १८८४ में मुझे बम्बई प्रान्तीय सरकार के लोक-निर्माण विभाग में सहायक इंजीनियर की जगह मिल गयी। उन दिनों इस विभाग में हर साल एक स्थान बम्बई विश्वविद्यालय की इंजीनियरिंग परीक्षा में सर्व-प्रथम आनेवाले विद्यार्थी के लिए सुरक्षित रखा जाता था। नवम्बर, १८८३ में मैंने इंजीनियरिंग की उपाधि ली और मार्च, १८८४ में सरकारी नौकरी पर लग गया।

पहले-पहल मेरी नियुक्ति नासिक ज़िले में की गयी। पहली बार कार्यभार सभालने के लिए नासिक गया तो मेरे कुछ पूना-निवासी मित्रों ने मेरी बड़ी सहायता की। पूना के तत्कालीन विख्यात नेता श्री महादेव गोविन्द रानडे ने मुझे नासिक के डिप्टी कलक्टर के नाम एक परिचय-पत्र दिया और मेरे कुछ अन्य हितैषी मित्रों ने नासिक के मामलातदार को मेरा हर तरह से ध्यान रखने के लिए लिख दिया।

मुझे नासिक में अपना पद ग्रहण किये अभी थोड़े ही दिन हुए थे कि लोक निर्माण विभाग के अधिकारियों ने अपना विचार बदल कर मेरी बदली खानदेश ज़िले में कर दी, जिसका सदर मुकाम धुलिया नामक नगर में था। वहा मुझे एक उच्च सहायक इंजीनियर श्री डब्ल्यू० एल० स्ट्रेंज के साथ कुछ दिन काम करने के बाद उनका स्थान ग्रहण करने का आदेश मिला और श्री स्ट्रेंज ने, मुझे नये पद के नैतिक दायित्वों से भली-भांति अवगत करा कर, मुझे कार्यभार संभालने के योग्य बना दिया। कुछ हफ्ते मेरे साथ काम करने के बाद श्री स्ट्रेंज का तबादला नासिक को हो गया। उनके चले जाने के पश्चात् कुछ महीनों तक मैं उस छोटे-से कार्यालय का काम चलाता रहा। मेरा काम अपने इलाके के सिंचाई-मार्गों का दौरा करना तथा छोटे-छोटे ऐनिकट और नाले-नालियों की मरम्मत की देखरेख करना था। इसके अतिरिक्त यह काम भी मेरे ज़िम्मे था कि जब कभी ज़िला अध्यक्ष का आदेश हो, मैं पांजरा नदी के दोनो किनारों पर सिंचाई-मार्गों के निर्माण और में लगे हुए अधीनस्थ अधिकारियों के काम का निरीक्षण करूं।

कुछ महीनों तक इसी प्रकार के सामान्य कार्य करने के पश्चात् खानदेश औ[illegible] नासिक जिले के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर (सिंचाई) ने मुझे एक पाइप साइफ[illegible] निर्माण करने का आदेश दिया। यह पाइप साइफन उस सिंचाई मार्ग के आर-पा[illegible] बनाया जाना था, जिसके द्वारा पांजरा नदी का जल धुलिया से लगभग २५ मी[illegible] दूर पश्चिम की ओर स्थित दातारती नामक ग्राम तक जाता था। एक सहायक नदी सिंचाई-मार्गों के हैड वार्क्स तथा दातारती ग्राम के मध्य में पांजरा नदी में मिलती थी। इसी गांव के लिए सिंचाई के पानी की व्यवस्था की जानी थी और यह पाइप साइफन उसी सहायक नदी के आर-पार ले जाया जाना था। वहां पहले, संभवतः अंग्रेजी प्रशासन से भी पूर्व, जल-मार्ग को उस सहायक नदी के आर-पार ले जाने के लिए एक पत्थर की सेतुधारी बनी हुई थी। वह सेतुधारी बाढ़ के प्रकोप में बह गयी और अब उसकी जगह एक पाइप लगाने की आवश्यकता थी। इस साइफन के लिए आवश्यक पाइप की मांग भी स्टोर भेज चुके थे। जिले के [illegible] अध्यक्ष के आदेशानुसार स्थानीय सब-डिवीजनल अधिकारी ने इस निर्माण-कार्य का सारा भार मुझे सौंप दिया। सन् १८८८ में वर्षा ऋतु आरम्भ होने से कुछ पू[illegible]

दिखाई देगी, मैं धुलिया से वहीं वापस चला आऊंगा। इसका जो उत्तर मुझे प्राप्त हुआ, वह मेरी आशाओं के बिल्कुल विपरीत था। एक सरकारी ज्ञापन (मेमॉरेण्डम) द्वारा मुझे यह आदेश दिया गया कि काम कदापि बन्द न किया जाए। अन्त में टिप्पणी थी : 'आदेशों के प्रति उत्साह और उनके परिपालन की दृष्टि से सहायक इंजीनियर अपनी जीवन-वृत्ति का श्रीगणेश बड़े भद्दे ढंग से कर रहे हैं।'

यह पढ़ कर मैं बहुत हतोत्साह हुआ। इस मामले पर कुछ सोच-विचार करने के पश्चात् मैंने कार्यकारी इंजीनियर को लिखा कि आप के आदेशानुसार मैं काम को जारी रखूंगा और, यदि कोई अदृष्ट कठिनाई न आ खड़ी हुई तो, इसे पूरा कर के ही धुलिया लौटूंगा। मैंने बता दिया कि जहां तक सम्भव हो सका, मैं खर्च में पूरी-पूरी किफ़ायत करने का प्रयास करूंगा, किन्तु इतना करने पर भी अनुमानित व्यय से अधिक खर्चा हो गया तो आशा है आप मुझे क्षमा करेंगे। कुछ ही महीनों में स्थानीय राज-मजदूरों और भील कारीगरों की सहायता से मैं चट्टानें काट कर पाइप लगाने का कार्य पूरा करने में सफल हो गया।

साइफ़न तैयार हो गया और सिंचाई-मार्ग का पानी एक किनारे से दूसरे किनारे तक लगातार बहने लगा।

जब यह कार्य चल रहा था, तब मैं प्रतिदिन घोड़े पर बैठ कर पांजरा नदी पार करके मौके पर जाया करता था। एक दिन सुबह नियत समय पर मेरे नदी पार कर लेने के बाद नदी में भारी बाढ़ आ गयी। बाढ़ का पानी तीन-चार रोज तक चढ़ा रहा और मैं वापस बंगले में, जहां मेरा दफ्तर और कैम्प था, न लौट सका। नदी पार करने के लिए आस-पास कहीं कोई पुल भी न था। कार्य-स्थल बंगले से करीब ढाई मील दूर था और बीच में पांजरा नदी पड़ती थी। बंगले तक पहुंचना असम्भव था, अतः पहली रात मैंने कार्य-स्थल के समीप नन्दवन नामक ग्राम में बिताई और दूसरे दिन दातारती गांव में ठहरा। यह वही गांव था जिसके खेतों की सिंचाई के लिए यह पाइप साइफ़न बनाया जा रहा था। इस गांव के लोग इकट्ठे हो कर मेरे स्वागत को आये और उन्होंने मेरे ठहरने का प्रबन्ध करके मेरा बड़ा सत्कार किया। तीसरे दिन सुबह मैंने अपने भील कारीगरों तथा उनके बेड़ों की सहायता से नदी पार करके बंगले में पहुंचने का निश्चय किया। मेरे घोड़े और उसकी काठी को भी इन्हीं लोगों ने चढ़ी हुई नदी के पार पहुंचाया।

यहां इतना बताना ही काफ़ी होगा कि पाइप साइफ़न बनाने का काम मैंने

की विभागीय परीक्षा तथा जिले की भाषा (मराठी) में मौखिक तथा लिखित परीक्षा पास करें। इनको पास किये बिना न तो किसी की नौकरी पक्की हो सकती थी और न ही पदोन्नति हो सकती थी। इन परीक्षाओं को पास करने के लिए आवश्यक अनुभव और व्यावहारिक ज्ञान-सचय करने में एक नये अधिकारी को प्रायः दो-तीन वर्ष लग जाते थे। भाषा की परीक्षा पास करना मेरे लिए कोई मुश्किल बात न थी, किंतु मुझे सदेह था कि मैं व्यावहारिक इंजीनियरिंग की परीक्षा मे सफलता पूर्वक पास हो सकूँगा या नही। यह तो सत्य है कि इंजीनियरिंग की व्यावहारिक परीक्षा में बैठने का सुझाव दे कर एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ने मेरे प्रति बडी उदारता और सहृदयता का परिचय दिया था। मैंने उन्हे लिखा कि सभवतः व्यावहारिक परीक्षा पास करने के लिए मुझे अभी पर्याप्त अनुभव नही है, इसलिए मैंने प्रार्थना-पत्र नही भेजा था। उन्होंने मुझे डाटते हुए लिखा कि युवावस्था मे ही इस प्रकार का निराशावादी दृष्टिकोण अपनाना शोभा नही देता। फलत मैंने परीक्षा के लिए प्रार्थना-पत्र भेज दिया। तीन इंजीनियरो की एक परीक्षा-समिति, नियुक्त की गयी, जिसमे मेरे मुख्य अधिकारी भी थे। समिति ने मुझे पास कर दिया और न केवल मेरी नौकरी पक्की हो गयी, बल्कि मुझे द्वितीय श्रेणी का सहायक इंजीनियर भी बना दिया गया। इस प्रकार बीस माह के अन्दर उन्नति करते हुए मैं प्रथम श्रेणी मे पहुंच गया; जिसके परिणाम-स्वरूप मुझे ५०० रुपये मासिक वेतन मिलने लगा।

जिला खानदेश मे मलेरिया का प्रकोप होने के कारण मेरा स्वास्थ्य खराब रहने लगा और मैंने स्थान-परिवर्तन के लिए लिखा। केन्द्रीय डिवीजन के चीफ इंजीनियर ने मेरी बदली पूना में, पूना जिले के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर (सड़क व भवन निर्माण) के अधीन कर दी। अब तक मेरा संबंध सिंचाई और जल-सप्लाई के कामो से रहा था। बदली होने पर मुझे सिविल इंजीनियरिंग की एक नयी शाखा का अनुभव प्राप्त करने का अवसर मिला। कुछ समय के लिए मुझे गणेशखिण्ड (पूना) में स्थित 'गवर्नमेंट हाऊस' की देख-भाल का कार्य सौंपा गया। यहा प्रान्तीय सरकार का प्रधान कार्यालय था। इसके अतिरिक्त दूसरे निर्माण-कार्य, जिनमे नगर के आस-पास बनने वाली सड़कों का काम भी शामिल था, मेरे जिम्मे थे। यहा पूना के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ने भी मुझे हर तरह से परखा और मुझे लगा कि मेरे बारे मे उनकी अच्छी राय बन गयी है।

बड़े सन्तोषजनक ढंग से पूरा किया। इस बारे में जब एक्जीक्यूटिव इंजीनियर को मेरी रिपोर्ट मिली, तब उन्होंने मुझे लिखा कि उपरोक्त ज्ञापन में उन्होंने जो कुछ भी मेरे खिलाफ़ लिखा था, उसे रद्द कर दिया गया है।

इसके बाद मैं एक्जीक्यूटिव इंजीनियर की सहायतार्थ सब-डिवीजनल आफिसरों की देख-रेख में होने वाले कामों की प्रगति का निरीक्षण करता रहा। कुछ महीनों के बाद मुझे कुछ एक बड़ी नहरों की देख-भाल का कार्य सौंपा गया। ये नहरें जिले के दक्षिण-पूर्वी छोर पर स्थित थीं और केवल इनकी देख-भाल के लिए एक अलग सब डिवीजन कायम किया गया था। यह बहुत ही साधारण तथा आसान-सा काम था। सुधार कार्यों के लिए मिलनेवाले अनुदान की रकम इतनी कम हुआ करती थी कि उसमें नहरों की मरम्मत आदि की व्यवस्था ठीक ढंग से नहीं हो पाती थी। इस बीच खानदेश और नासिक जिले के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर (सिंचाई) ने कुछ महीनों की छुट्टी ली और मुझे उनके स्थान पर कार्य करने का अवसर मिला। इस थोड़े समय के लिए मेरा प्रधान कार्यालय नासिक जिले के [illegible] नामक स्थान में रहा।

की विभागीय परीक्षा तथा जिले की भाषा (मराठी) में मौखिक तथा लिखित परीक्षा पास करें। इनको पास किये बिना न तो किसी की नौकरी पक्की हो सकती थी और न ही पदोन्नति हो सकती थी। इन परीक्षाओं को पास करने के लिए आवश्यक अनुभव और व्यावहारिक ज्ञान-संचय करने में एक नये अधिकारी को प्रायः दो-तीन वर्ष लग जाते थे। भाषा की परीक्षा पास करना मेरे लिए कोई मुश्किल बात न थी, किंतु मुझे संदेह था कि मैं व्यावहारिक इंजीनियरिंग की परीक्षा में सफलता पूर्वक पास हो सकूंगा या नहीं। यह तो सत्य है कि इंजीनियरिंग की व्यावहारिक परीक्षा में बैठने का सुझाव दे कर एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ने मेरे प्रति बड़ी उदारता और सहृदयता का परिचय दिया था। मैंने उन्हें लिखा कि संभवतः व्यावहारिक परीक्षा पास करने के लिए मुझे अभी पर्याप्त अनुभव नहीं है, इसलिए मैंने प्रार्थना-पत्र नहीं भेजा था। उन्होंने मुझे डांटते हुए लिखा कि युवावस्था में ही इस प्रकार का निराशावादी दृष्टिकोण अपनाना शोभा नहीं देता। फलत. मैंने परीक्षा के लिए प्रार्थना-पत्र भेज दिया। तीन इंजीनियरों की एक परीक्षा-समिति, नियुक्त की गयी, जिसमें मेरे मुख्य अधिकारी भी थे। समिति ने मुझे पास कर दिया और न केवल मेरी नौकरी पक्की हो गयी, बल्कि मुझे द्वितीय श्रेणी का सहायक इंजीनियर भी बना दिया गया। इस प्रकार बीस माह के अन्दर उन्नति करते हुए मैं प्रथम श्रेणी में पहुंच गया; जिसके परिणाम-स्वरूप मुझे ५०० रुपये मासिक वेतन मिलने लगा।

जिला खानदेश में मलेरिया का प्रकोप होने के कारण मेरा स्वास्थ्य खराब रहने लगा और मैंने स्थान-परिवर्तन के लिए लिखा। केन्द्रीय डिवीज़न के चीफ इंजीनियर ने मेरी बदली पूना में, पूना जिले के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर (सड़क व भवन निर्माण) के अधीन कर दी। अब तक मेरा संबंध सिंचाई और जल-सप्लाई के कामों से रहा था। बदली होने पर मुझे सिविल इंजीनियरिंग की एक नयी शाखा का अनुभव प्राप्त करने का अवसर मिला। कुछ समय के लिए मुझे गणेशखिण्ड (पूना) में स्थित 'गवर्नमेंट हाउस' की देख-भाल का कार्य सौंपा गया। यहां प्रान्तीय सरकार का प्रधान कार्यालय था। इसके अतिरिक्त दूसरे निर्माण-कार्य, जिनमें नगर के आस-पास बनने वाली सड़कों का काम भी शामिल था, मेरे जिम्मे थे। यहां पूना के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ने भी मुझे हर तरह से परखा और मुझे लगा कि मेरे बारे में उनकी अच्छी राय बन गयी है।

मेरे कुछ वर्ष तक पूना जिले में कार्य करने के पश्चात् सन् १८९३ में बम्बई सरकार की ओर से सक्खर (सिंध प्रांत) में काम करने के लिए एक इंजीनियर की मांग आयी। सक्खर नगर में वाटर वर्क्स के निर्माण के लिए नियुक्त किये गये एक यूरोपियन अधिकारी का अचानक देहांत हो गया था और उनके स्थान की पूर्ति के लिए सरकार को एक इंजीनियर की जरूरत थी। पूना में मेरे अधिकारी श्री ई० के० रेनाल्ड्स ने मुझे इस पद के लिए उपयुक्त समझ कर मुझे लिखा कि यदि मैं इस पद को ग्रहण करना चाहूं तो उन्हें शीघ्र सूचित करूं। चूंकि यह पत्र श्री रेनाल्ड्स के हृदय की विशालता और उदारता का एक नमूना है, अतः मैं उसे यहां उद्धृत करता हूं :

पूना, [illegible] मार्च १८९३

प्रिय विश्वेश्वरैया,

मुझसे कहा गया है कि मैं एक विशेष कार्य के लिए किसी यूरोपियन इंजीनियर का नाम दूं। वर्ना, सक्खर में जल-वितरण तथा जल-निकास की व्यवस्था करनी है।

उपर्युक्त प्रस्ताव को मेरे पास भेजते हुए बम्बई सरकार ने २ अगस्त, १८९९ के अपने शासकीय प्रस्ताव सं० २७८ E-१०९९ में अपनी ओर से निम्नलिखित पंक्तियां जोड़ीं :

"बम्बई के महामहिम गवर्नर सपरिषद् इस अवसर पर सक्कर वाटर वर्क्स के निर्माण में श्री विश्वेश्वरैया द्वारा की गयी सेवाओं की प्रशंसा करते हैं।"

छुट्टी से लौटने के पश्चात् मुझे गुजरात के सूरत जिले में नियुक्त किया गया। सूरत शहर में एक योजना के अन्तर्गत वाटर वर्क्स का निर्माण हो रहा था और काम को शुरू हुए थोड़े दिन ही हुए थे। इस योजना के अनुसार शुद्ध पानी प्राप्त करने के लिए तापती नदी के तल में गोलाकार कुएं खोदे जाने थे। ऊपर से इन कुओं का मुंह बन्द किया जाना था ताकि नदी का जल-प्रवाह भीतर न आ सके और साफ़ पानी तल की रेतीली तहों में से छन-छन कर आता रहे। इस पानी को पाइप द्वारा नदी-तट के एक कुएं में पहुंचाना था, जहां इंजन लगा हुआ था। योजना का नक्शा जिले के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर ने तैयार किया था और नदी-तल में कुएं खोदने का काम मुझे सौंपा गया। उस समय मुझे कुछ महीनों तक सूरत और भड़ौंच जिलों के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर पद पर काम करने का अवसर भी मिला। यह काम सूरत वाटर वर्क्स की मेरी जिम्मेदारियों के अतिरिक्त था।

सिंचाई इंजीनियरिंग, जल-वितरण तथा जल निकास

मुख्य इंजीनियर केन्द्रीय डिवीजन के सहायक के पद से अप्रैल, सन् १८९९ में मेरी बदली जिला पूना के सिंचाई विभाग में हो गयी। सिंध को छोड़ कर बम्बई प्रेजीडेंसी में यह सबसे बड़ा सिंचाई जिला था। इसमें प्रेजीडेंसी के दो सबसे बड़े जलाशय थे और यहां प्रेजीडेंसी भर में सबसे अधिक इलाका नहरों द्वारा सींचा जाता था। पूना के उपनगरीय क्षेत्र तथा पूना और किरकी छावनियों में जल वितरण का कार्य भी मेरे जिम्मे था। पूना नगर की आवश्यकताओं के लिए बिना साफ किया हुआ जल, मूठा नामक नहर से सीधा आता था। यह नहर पूना नगर के दक्षिण में कुछ ऊंची सतह पर बहती थी।

जिला पूना की सिंचाई व्यवस्था में मेरे सामने सबसे बड़ी समस्या यह पेश आयी कि पानी के अनियमित वितरण तथा किसानों द्वारा उसके दुरुपयोग को कैसे रोका जाय। पानी को नष्ट होने से बचाने के लिए यह जरूरी था कि वितरण व्यवस्था पर नियन्त्रण रखा जाय। परन्तु वहां के किसान उसके आदी न थे। नहर के पानी के निकास-स्थल पर लगे फाटकों की मरम्मत तथा निगरानी सिंचाई विभाग के कर्मचारी भली-भांति करते थे, लेकिन सहायक सिंचाई मार्गों में जरूरत से अधिक जल पहुँच जाता था और किसान उसका दुरुपयोग करते थे। पूना नगर के निकटवर्ती इलाके की सिंचाई व्यवस्था एक बहुत ही सुयोग्य भारतीय सहायक इंजीनियर श्री वी० एन० वर्तके के अधीन थी। श्री वर्तके पूना शहर के ही रहने वाले थे। उन्होंने जल वितरण पर नियन्त्रण करने के लिए एक नयी व्यवस्था लागू की, जिसके अनुसार बारी-बारी से दस-दस दिन के लिए सबको निश्चित जल-राशि दी जाती थी। परन्तु वहां के किसान और जमींदार, जो मनमाने ढंग से पानी लेने के आदी थे, इस नियमन के विरुद्ध आवाज उठाने लगे और एक अच्छा खासा हंगामा खड़ा हो गया। इस नियन्त्रण के विरुद्ध महाराष्ट्र के महान् नेता श्री बाल गंगाधर तिलक के संरक्षण में निकलने वाले प्रसिद्ध मराठी समाचार पत्र 'केसरी' में बहुत कुछ लिखा जाने लगा। इस पत्र ने लिखा कि मेरे अधीन काम करनेवाले

२

सिंचाई विभाग के अधिकारियों ने जल वितरण व्यवस्था पर, मनमाने ढंग से, अनेक अनावश्यक प्रतिबन्ध लगा दिये हैं।

मैंने 'केसरी' की कतरनें सरकार को भेज दीं और साथ में यह स्पष्ट कर दिया कि इस नियन्त्रण को लागू करने की जरूरत क्यों पड़ी। मैंने यह भी लिखा कि पानी द्वारा सिंचित खेत ज्यादातर पूना निवासियों के हैं और इस मामले में इतना हाय-तोबा मचने का कारण यह है कि पूना के ये लोग अपने शहर में काफी असर-रसूख रखते हैं।

बम्बई सरकार ने अपने उत्तर में लिखा कि सरकार को नहर विभाग के अधिकारियों पर पूरा भरोसा है, और इसके साथ ही उन्होंने मुझे जल-वितरण सम्बन्धी सब मामलों को निपटाने का अधिकार दे दिया।

फिर भी हमारी ओर से इस बात का प्रयत्न किया गया कि किसान लोग स्वयं ही सारी स्थिति को समझ लें। मैंने भूमि-स्वामियों की एक बैठक बुलाने के लिए फर्ग्युसन कालेज के प्रिंसिपल डॉ० आर० पी० परांजपे से (जिन्हें बाद में 'सर' की उपाधि मिली) उनके कालेज का हाल मांगा। यह कालेज नहर द्वारा सींचे जाने वाले खेतों के समीप ही था।

बल्कि इस काम में सहायता के लिए, अपने खर्च पर, एक पटवारी भी देने को तैयार थी। अन्त में किसान इस प्रकार की कोई भी ज़िम्मेदारी लेने के लिए तैयार नहीं हुए और उन्होंने आग्रह किया कि नहर-विभाग जल-वितरण व्यवस्था पर अपने इस नियन्त्रण को बनाये रखे।

श्री बाल गंगाधर तिलक के प्रसिद्ध सहयोगी स्वर्गीय श्री एन० सी० केलकर ने इस समस्या के बारे में पूरी छान-बीन की और इस बात से संतुष्ट हो गये कि सरकार ने जो कुछ किया वह ठीक है। इस संबंध में उन्होंने अपने द्वारा सम्पादित पत्र 'केसरी' में कई लेख लिखे, जिनमें सरकार द्वारा अपनायी गयी नीति को किसानों के लिए हितकारी बताया। इस प्रकार खुले तरीके से निपटाने तथा प्रकाश में लाने से यह समस्या सुलझ गयी। किसानों ने जल-वितरण सम्बन्धी सरकारी कानूनों का पालन करना आरम्भ कर दिया और फिर उनकी कभी कोई शिकायत सुनने में नहीं आयी।

सिंचाई आयोग का दौरा

उन्हीं दिनों भारत सरकार ने भारतार्थ राज्य सचिव की स्वीकृति से भारतीय सिंचाई आयोग की नियुक्ति की। यह आयोग भारत भर में दौरा करके सरकार को सिंचाई द्वारा खेती में वृद्धि करने के तरीकों के बारे में परामर्श देने के लिए नियुक्त किया गया था। आयोग के अध्यक्ष के पद पर मिस्र के ख्याति प्राप्त इंजीनियर सर कॉलिन स्कॉट मानिक्र की नियुक्ति हुई और केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों के राजस्व तथा सिंचाई विभागों के कुछ उच्चाधिकारी इस आयोग के सदस्य बनाये गये। बम्बई प्रेज़ीडेंसी में आयोग ने केवल पूना सिंचाई क्षेत्र का ही दौरा किया, क्योंकि नहरों द्वारा सिंचाई की दृष्टि से यह ज़िला बम्बई प्रेज़ीडेंसी में प्रमुख माना जाता था। सिंध को छोड़ कर, बम्बई प्रेज़ीडेंसी में सिंचाई व्यवस्था की स्थिति को आयोग के सम्मुख स्पष्ट रूप से रखने के लिए मैंने एक ज्ञापन तैयार किया। ज्ञापन का मुख्य उद्देश्य यह था कि बम्बई प्रेज़ीडेंसी की सिंचाई सम्बन्धी विशिष्ट बातों को समझाकर, उनमें प्रशासन, मूल्यांकन और व्यवस्था सम्बन्धी आवश्यक परिवर्तन किये जायें और सिंचाई के तरीकों में सुधार करके तथा नहरों द्वारा अधिक भूमि की सिंचाई करके राजस्व में वृद्धि की जाय। बम्बई सरकार ने

सिचाई विभाग के अधिकारियों ने जल वितरण व्यवस्था पर, मनमाने ढंग से, अनेक अनावश्यक प्रतिवन्ध लगा दिये हैं।

मैंने 'केसरी' की कतरनें सरकार को भेज दीं और साथ में यह स्पष्ट कर दिया कि इस नियन्त्रण को लागू करने की ज़रूरत क्यों पड़ी। मैंने यह भी लिखा कि पानी द्वारा सिंचित खेत ज़्यादातर पूना निवासियों के हैं और इस मामले में इतना हाय-तोवा मचने का कारण यह है कि पूना के ये लोग अपने शहर में काफ़ी असर-रसूख रखते हैं।

वम्बई सरकार ने अपने उत्तर में लिखा कि सरकार को नहर विभाग के अधिकारियों पर पूरा भरोसा है, और इसके साथ ही उन्होंने मुझे जल-वितरण सम्बन्धी सव मामलों को निपटाने का अधिकार दे दिया।

फिर भी हमारी ओर से इस वात का प्रयत्न किया गया कि किसान लोग स्वयं ही सारी स्थिति को समझ लें। मैंने भूमि-स्वामियों की एक बैठक बुलाने के लिए फ़र्ग्यूसन कॉलेज के प्रिंसिपल डॉ० आर० पी० परांजपे से (जिन्हें वाद में सर की उपाधि मिली) उनके कॉलेज का हॉल मांगा। यह कॉलेज नहर द्वारा सींचे जाने-वाले खेतों के समीप ही था।

कॉलेज के हॉल में किसानों की बैठक का आयोजन हुआ। प्रमुख किसानों के साथ सिंचाई विभाग के छोटे कर्मचारियों को भी बैठक में उपस्थित होने के लिए कहा गया, ताकि जल-वितरण सम्वन्धी अव्यवस्था के आरोपों के बारे में सवाल-जवाव किये जा सकें। हमने किसानों के सामने यह प्रस्ताव रखा कि हम नहर के प्रत्येक निकास स्थल पर दस दिन की अवधि में दिये गये पानी को उनकी उपस्थिति में मापने के लिए तैयार हैं, ताकि यह ज्ञात हो जाय कि जिस हिसाव से नहर से पानी का निकास होता है, उस हिसाव से कितने क्षेत्रफल भूमि की सिंचाई होती है। ऐसा करते समय विभिन्न प्रकार की फसलों के लिए दिये जानेवाले पानी की मात्रा को ध्यान में रखा जायगा। हमने उन्हें यह विश्वास भी दिलाया कि इस व्यवस्था को लागू करते समय विभिन्न फसलों के लिए जितना पानी देना निश्चित किया गया था, हम उससे भी कुछ अधिक मात्रा में पानी देने के लिए तैयार हैं, वशर्ते कि काश्तकार उपलव्ध जल राशि को आपस में समझौते द्वारा वांट लेने के लिए राजी हों। इस वारे में सरकार किसानों को न केवल उनकी इच्छानुसार जल-वितरण पर नियन्त्रण रखने का अधिकार देने को तैयार थी,

बल्कि इस काम में सहायता के लिए, अपने खर्च पर, एक पटवारी भी देने को तैयार थे। अन्त में किसान इस प्रकार की कोई भी जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार नहीं हुए और उन्होंने आग्रह किया कि नहर-विभाग जल-वितरण व्यवस्था पर अपने इस नियन्त्रण को बनाये रखे।

श्री बाल गंगाधर तिलक के प्रसिद्ध सहयोगी स्वर्गीय श्री एन० सी० केलकर ने इस समस्या के बारे में पूरी छान-बीन की और इस बात से संतुष्ट हो गये कि सरकार ने जो कुछ किया वह ठीक है। इस संबंध में उन्होंने अपने द्वारा सम्पादित पत्र 'केसरी' में कई लेख लिखे, जिनमें सरकार द्वारा अपनाई गयी नीति को किसानों के लिए हितकारी बताया। इस प्रकार खुले तरीके से निपटाने तथा प्रकाश में लाने से यह समस्या सुलझ गयी। किसानों ने जल-वितरण सम्बन्धी सरकारी कानूनों का पालन करना आरम्भ कर दिया और फिर उनकी कभी कोई शिकायत सुनने में नहीं आयी।

सिंचाई आयोग का दौरा

उन्हीं दिनों भारत सरकार ने भारतार्थ राज्य सचिव की स्वीकृति से भारतीय सिंचाई आयोग की नियुक्ति की। यह आयोग भारत भर में दौरा करके सरकार को सिंचाई द्वारा खेती में वृद्धि करने के तरीकों के बारे में परामर्श देने के लिए नियुक्त किया गया था। आयोग के अध्यक्ष के पद पर मिस्र के ख्याति प्राप्त इंजीनियर सर कॉलिन स्कॉट मांक्रिफ की नियुक्ति हुई और केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों के राजस्व तथा सिंचाई विभागों के कुछ उच्चाधिकारी इस आयोग के सदस्य बनाये गये। बम्बई प्रेजीडेंसी में आयोग ने केवल पूना सिंचाई क्षेत्र का ही दौरा किया, क्योंकि नहरों द्वारा सिंचाई की दृष्टि से यह जिला बम्बई प्रेजीडेंसी में प्रमुख माना जाता था। सिंध को छोड़ कर, बम्बई प्रेजीडेंसी में सिंचाई व्यवस्था की स्थिति को आयोग के सम्मुख स्पष्ट रूप से रखने के लिए मैंने एक ज्ञापन तैयार किया। ज्ञापन का मुख्य उद्देश्य यह था कि बम्बई प्रेजीडेंसी की सिंचाई सम्बन्धी विशिष्ट बातों को समझाकर, उनमें प्रशासन, मूल्यांकन और व्यवस्था सम्बन्धी आवश्यक परिवर्तन किये जायें और सिंचाई के तरीकों में सुधार करके तथा नहरों द्वारा अधिक भूमि की सिंचाई करके राजस्व में वृद्धि की जाय। बम्बई सरकार ने

श्री विश्वेश्वरैया द्वारा तैयार की गयी एक अत्यन्त विशिष्ट और दिलचस्प योजना प्राप्त हुई है, जिसमे उन्होंने दीर्घकालीन पट्टे की खण्ड प्रणाली के सम्बन्ध मे विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की है। इस योजना को हम पहले ही स्वीकार कर चुके हैं और इसकी चर्चा रिपोर्ट के बम्बई अध्याय मे की गयी है। हम इस योजना को हर दृष्टि से पूर्ण और सोच-विचार कर बनायी गयी समझते हैं। यद्यपि बम्बई सरकार ने अभी इस योजना पर विचार नही किया तथापि हम समझते हैं कि इसका मूल सिद्धान्त हर दृष्टि से परिपूर्ण है। यदि इस प्रकार की कोई प्रणाली दक्षिण में सिंचाई कार्यों के लिए लागू की जाय तो निश्चय ही इससे लोगों को अधिक लाभ होगा और साथ ही सरकारी आय में भी वृद्धि होगी। इसलिए हम आशा करते हैं कि श्री विश्वेश्वरैया द्वारा तैयार की गयी इस प्रणाली को शीघ्र ही पूर्णरूपेण कार्यान्वित करना सम्भव हो सकेगा।"

रिपोर्ट के अनुसार इस प्रणाली का उद्देश्य यह था कि सिंचाई की सुविधाओं को अधिक गांवों तक पहुंचाया जाय, और, विशिष्ट खण्डों में विशिष्ट प्रकार की भूमि तथा परिस्थितियों के अनुसार, प्रत्येक गांव की सिंचाई की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाय। प्रत्येक गांव में खण्ड का कुछ क्षेत्र इतना विस्तृत अवश्य होना चाहिए था, जिससे प्रत्येक किसान को, जो नहरी पानी से सिंचाई करता हो, सिंचाई की सुविधा प्राप्त हो सके। साथ ही प्रत्येक किसान के हिस्से मे इतना अधिक पानी भी न जाना चाहिए कि अनुकूल ऋतुओं मे वह जल आपूर्ति के महत्व को ही भुला दे, जैसा कि अब तक होता आया था।

प्रत्येक खण्ड में भूमि के केवल एक तिहाई भाग मे गन्ना तथा अन्य बारहमासी फसलें बोयी जावें और बाकी दो-तिहाई भाग मे या तो रबी की फसल हो या वर्षा ऋतु की, और या फरवरी के अन्त तक सब्जियां उगायी जावें। फरवरी के बाद, वर्षा ऋतु के आरम्भ होने तक, केवल उस एक-तिहाई भाग के लिए ही नहरी-पानी द्वारा सिंचाई की व्यवस्था हो, जिसमें बारहमासी फसलें उगायी गयीं हों। इस प्रकार प्रत्येक खण्ड मे, बारी-बारी से, तीन तरह की खेती की जा सकेगी।

बम्बई सरकार ने नीरा नहर पर इस योजना को लागू करने का काम मुझे सौंपा। परन्तु जिला कलक्टर और वहां के 'सब-डिवीजनल-आफिसर,' जो यूरोपियन थे, इस योजना के पक्ष में नही थे। वहा के मामलतदारों और राजस्व

जब मैं इस जलाशय को देखने गया तो पाया कि यद्यपि इन फाटकों को लगाये ४५ वर्ष से अधिक समय हो चुका है, तब भी ये बड़े सन्तोषजनक रूप से काम दे रहे हैं।

बाद में मेरे परामर्श से इसी किस्म के फाटक ग्वालियर जल-सप्लाई से सम्बन्धित टीगरा डैम के फ़ालतू पानी को रोकने के लिए तथा मैसूर नगर के समीप, कृष्णराजा सागर बांध के फ़ालतू पानी को रोकने के लिये, लगाये गये थे।

पूना तथा किरकी जल-वितरण व्यवस्था

पूना नगर में बिना साफ़ किया हुआ नहरी पानी दिया जाता था और पूना तथा किरकी छावनियों में साफ़ किया हुआ पानी दिया जाता था। ये दोनों जल-वितरण व्यवस्थाएं लगभग छः वर्ष तक मेरी देख-रेख में रहीं। छावनी की जल वितरण व्यवस्था में कई सुधार करने की ज़रूरत थी। भारत के तत्कालीन सेनापति लॉर्ड किचनर छावनी की जल-वितरण व्यवस्था का निरीक्षण करने तथा उसके सुधारों के लिए आवश्यक धन-राशि की मंजूरी देने के अभिप्राय से दो बार पूना के दौरे पर आये। चूंकि स्थानीय ग़ैर सैनिक प्रशासन अधिकारियों का सैनिक छावनी की जल-वितरण व्यवस्था में कोई हाथ नहीं था, अतः पहली बार बम्बई के गवर्नर लॉर्ड लेमिंगटन ने तथा दूसरी बार लॉर्ड सिडेनहाम ने मुझे जल-सप्लाई सम्बन्धी समस्याओं पर लॉर्ड किचनर के साथ विचार-विमर्श करने के लिए कहा। तीसरी बार लॉर्ड किचनर से मेरी मुलाक़ात बड़े विचित्र ढंग से हुई। बम्बई के गवर्नर लार्ड सिडेनहाम का अंगरक्षक एक दिन दोपहर के समय पूना में मेरे निवास स्थान पर पहुंचा और उसने कहा कि गवर्नर ने मुझे उसी शाम पांच बजे खड़गवासला के "लेक फ़ाइफ़" जलाशय पर बुलाया है। मैंने कहा कि खड़ग-वासला झील की देख-रेख का काम अब किसी अन्य अधिकारी के ज़िम्मे है और मैं तो सफ़ाई इंजीनियर के पद पर काम कर रहा हूँ।

फिर भी उसने मुझसे साथ चलने का आग्रह किया और कहा कि गवर्नर मुझ से ही मिलना चाहते हैं। ख़ैर, पूना से लगभग नौ मील दूर जब मैं उस जलाशय पर पहुंचा तो गवर्नर ने लॉर्ड किचनर से मेरा परिचय कराया। तब मैं समझा कि मेरे स्वचालित नहरी फाटकों के काम का निरीक्षण करने के लिए ये दोनों अधिकारी पहले ही से खड़गवासला पहुंच चुके हैं। वहां फाटकों का काम देखने

तथा उनके बारे में पूछ-ताछ करने के पश्चात् वे गणेशखंड के 'गवर्नमेंट हाऊस' में लौट आये।

सन् १९०४ में जब मैं पूना में नियुक्त था, मुझे शिमला में आयोजित एक सिंचाई सम्मेलन में आमंत्रित किया गया। इस सम्मेलन में भारत के सभी प्रांतों के सिंचाई विभाग के इंजीनियर उपस्थित थे। बम्बई प्रेज़ीडेंसी से मुझे तथा एक कनिष्ठ यूरोपियन अधिकारी को सम्मेलन में भाग लेने के लिए भेजा गया था। मैंने सम्मेलन में चार प्रस्ताव पेश किये, जिनमें से कुछेक पर बहस भी हुई, और मैं समझता हूं कि उन चारों को प्रकाशित किया गया।

सन् १९०१ में बम्बई सरकार के सफाई इंजीनियर छुट्टी लेकर यूरोप चले गये और मुझे पूना के कार्यकारी इंजीनियर (सिंचाई) के अपने पद के साथ साथ, उनका काम भी संभालने के लिए कहा गया। बाद में उनके स्थान पर काम करते हुए मैंने पूना नगर के लिए पहली बार आधुनिक मलमार्ग (पाइप सीवरेज) योजना तैयार की। नगरपालिका की जिस बैठक में इस योजना पर विचार करके इसकी स्वीकृति दी गयी थी, उसकी अध्यक्षता महाराष्ट्र के प्रसिद्ध नेता श्री गोपालकृष्ण गोखले कर रहे थे।

यहाँ यह बता देना असंगत न होगा कि पूना में काम करते समय इंजीनियरिंग विभाग की सरकारी नीतियों से मेरा निकट का सम्पर्क रहा था और मुझे काफी दिलचस्प काम करने पड़ते थे। बम्बई लोकनिर्माण विभाग में, अपनी सेवा के, अन्तिम काल में, लगातार दस वर्ष के अपने आवास में, मुझे बड़े सुखद और लाभप्रद अनुभव प्राप्त हुए। इस अवधि में मुझे सदा यूरोपियन विभागीय अध्यक्षों के निकट सम्पर्क में काम करने का अवसर मिला। ये अधिकारी बहुत उदार और सहृदय हुआ करते थे। इसके अतिरिक्त, मैं समझता हूं कि मुझे पूना और दक्षिण में बहुत से भारतीय नेताओं का भी विश्वास प्राप्त था।

बम्बई सरकार के दफ्तर, हर साल, वर्षा के तीन-चार महीनों के लिए पूना चले जाते थे। अतः मुझे उच्च सरकारी अधिकारियों से तथा बम्बई विधान परिषद् के पूना में होनेवाले अधिवेशन में भाग लेने के लिए बम्बई प्रान्त के विभिन्न भागों से आये प्रमुख देशवासियों से सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने के अवसर प्राप्त होते रहते थे।

तथा इसे चलाने का वार्षिक खर्च, ऋण की अदायगी तथा व्याज की रकम मिला कर, ३०,००० रु० के करीब होगा। जनता पर इस खर्च का भार फ़ी व्यक्ति बहुत सामान्य होगा, क्योंकि अदन शहर और शेख ओथमान के मलमार्गों को समुद्र में बहाया जा सकता है, और इस प्रकार उन पर अधिक लागत नहीं आयेगी।"

अदन की जल-वितरण समस्या के बारे में मैंने निम्नलिखित रिपोर्ट दी:

"जल-वितरण व्यवस्था के लिए वर्षा के पानी पर निर्भर नहीं किया जा सकता। सैनिक तथा व्यापारी वर्ग द्वारा अधिकांशतः समुद्र का ही साफ़ किया हुआ जल इस्तेमाल किया जाता है। अदन में बहुत-सी ऐसी व्यापारिक संस्थाएं हैं, जो पानी जमा करके बेचने का काम करती हैं। कुछ पानी, जोकि थोड़ा खारा होता है, एक सेतुवाही द्वारा प्रधान द्वीप से बन्दरगाह में लाया जाता है। यह सेतुवाही सैनिक अधिकार में है। इसके अतिरिक्त व्यापारी बन्दरगाह के पार के इलाके से बैलगाड़ियों द्वारा पानी लाते हैं।

"जमा हुआ पानी ३ रु० प्रति सौ गैलन के हिसाब से बिकता है और शेख-ओथमान के पानी की दूसरी किस्में एक रुपये से डेढ़ रुपये प्रति सौ गैलन के हिसाब से बिकती हैं। अनुमान है कि अदन निवासी लगभग सात लाख रुपये वार्षिक पानी की आवश्यकताओं को पूरा करने में खर्च करते हैं।

"पीने योग्य पानी की बड़ी कमी है, परन्तु इस कमी को पूरा करने के लिए प्रधान द्वीप से ही जल प्राप्त करना होगा। मैंने इस बारे में कोई जांच नहीं की, परन्तु लगता है कि शुरू में जल-वितरण व्यवस्था के निर्माण पर काफ़ी व्यय होगा।

"अदन में पानी की बहुत अधिक मांग होने के कारण लोग इसके लिए ऊंचे से ऊंचे दाम दे रहे हैं। अतः, इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि यहां किसी जल-वितरण व्यवस्था का निर्माण हो जाय तो वह अच्छी खासी लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

"अदन से ६० मील दूर उत्तर की ओर पहाड़ी इलाका है जहां पर्याप्त वर्षा होती है। वर्षा का जल पहाड़ियों से नीचे बहकर एक नदी में मिल जाता है। बहुत-सी दूसरी नदियों की भांति इस नदी का जल समुद्र तक नहीं पहुंचता और कुछ दूर आगे जाकर, लहेज नामक स्थान पर नदी के रेतीले तल में ही समा जाता है। एक तजवीज़ यह थी कि नदी तल में बन्द मुंह वाले ज़मींदोज़ कुएं खोदकर उनमें पानी जमा किया जाये और उसे पम्प करके पाइप द्वारा १८ मील दूर अदन

मे पहुंचाया जाय। यह योजना काफी सन्तोषजनक रहती, परन्तु इस पर एक तो अधिक व्यय हो जाने की सम्भावना थी, और दूसरा यह डर भी था कि कही लहेज के आस-पास बसनेवाले उपद्रवी कबीलो के लोग पाइप को काट न दें।"

जैसा कि बताया जा चुका है, मैंने एक रिपोर्ट जल-निकास और दूसरी जल-वितरण व्यवस्था के लिए तैय्यार की। बाद मे एक सरकारी आदेश द्वारा बताया गया कि अदन के मेजर जनरल बराथ ने जल-निकास तथा जल-वितरण योजनाओं की सिफारिश करते हुए लिखा :

"श्री विश्वेश्वरैया ने, जिन्हे मल-निकास के प्रश्न पर सुझाव देने के लिए नियुक्त किया गया था, एक अत्यत लाभदायक रिपोर्ट तैय्यार की, जो कि २० जनवरी, १९०७ को सरकार को भेजी जा चुकी है। हालाकि मल-मार्ग के निर्माण की बड़ी जरूरत थी, परन्तु ताजा जल देने के लिए शीघ्र ही कोई कदम उठाना उससे भी अधिक आवश्यक था।"

बम्बई सरकार के ३० जून, १९०९ के एक अन्य प्रस्ताव मे कहा गया कि सरकार ने आदेश दिया है कि जल-वितरण योजना के नक्शे तथा अनुमानित व्यय विवरण तैय्यार किये जायें और लहेज में जमीन लेकर वहा कुआं खोदने तथा भविष्य मे उसकी रक्षा करने के बारे मे लहेज के सुल्तान के साथ बातचीत की जाय।

जब मैं अदन में था तो मुझे उस समिति मे शामिल होने के लिए भी कहा गया जो कि अदन में निर्मित सड़को पर हुए खर्च को लेकर भारत तथा बम्बई राज्य सरकार के मध्य हुए कुछ मत-भेदों का निपटारा करने के लिए बनायी गयी थी।

कोल्हापुर शहर की जल-वितरण व्यवस्था

कोल्हापुर शहर में दिया जानेवाला पानी एक तालाब से आता था। इस तालाब के कच्चे बाध को टूटने से रोकने के बारे में परामर्श देने के लिए मुझे दो-तीन बार वहां जाने का अवसर मिला। कोल्हापुर के राजनैतिक एजेंट लैफ्टीनेंट कर्नल डब्ल्यू० बी० फैरिस ने बम्बई सरकार को लिखा कि तालाब के कच्चे बाध मे जगह-जगह दरारें हो गयी हैं और उसके टूटने का खतरा है, और दोषपूर्ण निर्माण के कारण, बांध की सारी ढलान पर पलस्तर काफी सरक गया था जिससे उसको भयंकर खतरा था। उन्होंने यह भी लिखा कि :

"यह अत्यंत आवश्यक है कि जल-वितरण व्यवस्था को बिल्कुल ठप हो जाने से रोकने के लिए महाराज कोल्हापुर किसी योग्य इंजीनियर का परामर्श लें। हमारे पास सलाहकारों की तो कमी नहीं, पर वे इस मामले में कोई जानकारी नहीं रखते। अतः मैं चाहता हूं कि इस काम के लिए किसी अनुभवी यूरोपियन इंजीनियर को नियुक्त किया जाय, जो पूरी छानबीन करने के पश्चात्, यह सलाह दे कि क्या कुछ करना ज़रूरी है।"

इस काम के लिए मुझे कोल्हापुर भेजा गया और स्थानीय इंजीनियरों ने मेरे सुझावों के अनुसार बड़ी लगन से मरम्मत आदि का काम पूरा किया। इस काम के लिए मुझे कोई तीन बार कोल्हापुर जाना पड़ा। मरम्मत हो जाने के पश्चात् तालाब का कच्चा बांध बिल्कुल सुरक्षित हो गया।

इसके बाद कर्नल फ़ैरिस ने मुझे उस पत्र की प्रतिलिपि भेजी जिसमें कोल्हापुर के दीवान ने उनसे कहा था कि वह श्री विश्वेश्वरैया की सेवाओं के लिए दरबार की ओर से बम्बई सरकार का आभार प्रकट कर दें। उन्होंने लिखा :

"श्री विश्वेश्वरैया के सुझाव अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुए। दरबार को यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि उनकी देखरेख में हुआ कार्य बहुत ही संतोषजनक है और गत मास हुई भारी वर्षा से भी इसे कोई क्षति नहीं पहुंची। कृपा कर श्री विश्वेश्वरैया को सूचित कर दिया जाय कि अब जलाशय लबालब भरा हुआ है और बांध सुरक्षित है।"

पत्र को भेजते हुए कर्नल फ़ैरिस ने लिखा कि श्री विश्वेश्वरैया का दरबार की ओर से आभार प्रकट कर दिया जाय।

अन्य छोटे-मोटे कार्य

१५ मई, १९०७ की सरकारी सूचना, संख्या ई-१३२५, के अनुसार बम्बई प्रेज़ीडेंसी के तीन सुपरिण्टेंडिंग इंजीनियर डिवीज़न छः महीनों के लिए मेरे अधीन कर दिये गये। दक्षिणी डिवीज़न और परियोजना डिवीज़न श्री एच० एफ० बीले के अधिकार में थे और मैं सफ़ाई इंजीनियर के अपने स्थायी पद पर कार्य कर रहा था। श्री बीले छः महीने की छुट्टी लेकर चले गये और उनकी दो डिवीज़नों का कार्य भी मुझे सौंप दिया गया। सरकारी आदेश में कहा गया कि गोदावरी मुला

और कुकारी का सर्वेक्षण-कार्य, जो कि दक्षिणी डिवीजन के सुपरिण्टेंडिंग इंजीनियर के अधीन था, जारी रहेगा। इस अवधि में मुझे पूना और बेलगाम, दो प्रधान कार्यालयों का काम देखना पड़ा।

बेलगाम में मैंने सड़कों की मरम्मत सम्बन्धी कुछ नियम जारी किये। सड़कों की देख-रेख करनेवाले कई छोटे अधिकारियों को मैंने बेलगाम में बुलाया और उनके साथ पहले से लागू नियमों पर विचार-विमर्श करके नये नियम तैय्यार किये। बाद में सरकार ने इन नियमों को छपवा कर सिंध के अतिरिक्त बम्बई प्रेज़ीडेंसी के लोक निर्माण विभाग की तीनों स्थायी डिवीजनों में भेजा।

इस अवधि में मुझे दक्षिणी डिवीज़न के धारवार और बीजापुर नगरों के लिए जल-वितरण योजनाओं की रूपरेखा तैयार करने का अवसर प्राप्त हुआ। फिर उसके अनुसार काम करते हुए, इन दोनों ज़िलों के एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियरों ने योजना कार्य सम्पन्न किया।

अक्तूबर १९०८ में बम्बई के गवर्नर लॉर्ड सिडनहाम बीजापुर आये और नगर पालिका तथा ज़िला मण्डल के मान-पत्रों का उत्तर देते हुए उन्होंने नगर की जल-वितरण व्यवस्था के बारे में जो कुछ कहा वह इस प्रकार है

> "मैं यह भलीभाँति जानता हूं कि बीजापुर नगर का भविष्य इस कठिनाई के हल पर निर्भर है। श्री विश्वेश्वरैया जैसे सुयोग्य इंजीनियर द्वारा तैय्यार की गयी योजना तथा उसे कार्य रूप देने के लिए चार लाख रुपया इकट्ठा करने की तजवीज़ पर विचार किया जा रहा है।"

इसके पश्चात् सरकार की ओर से जल-वितरण व्यवस्था की स्वीकृति दे दी गयी। योजना की समाप्ति पर नगर-पालिका ने मेरे प्रति आभार प्रकट किया।

सफ़ाई इंजीनियर के रूप में कार्य करते समय मैं बम्बई प्रेज़ीडेंसी के सफ़ाई बोर्ड का सचिव तथा अध्यक्ष भी था। इस पद पर कार्य करते हुए मैंने प्रेज़ीडेंसी के कई शहरों की जल-वितरण व्यवस्थाओं के सम्बन्ध में तथ्य और आंकड़े एकत्रित करके उन्हें मुद्रित करवाया।

मुख्य इंजीनियर के पद पर काम करते हुए नौकरी के अन्तिम दिनों में मुझे उस समिति का सदस्य बनाया गया जो कि बम्बई नगर के कई गन्दे इलाकों में सुधार करने के लिए नियुक्त की गयी थी। इस समिति के अध्यक्ष बम्बई सरकार

के सर्जन जनरल थे। बम्बई के तत्कालीन देशभक्त नेता सर फ़िरोज़शाह मेहता भी समिति के सदस्य थे।

फ़रवरी, १९०५ में बम्बई सरकार ने मुझे बम्बई सचिवालय में विशेष कार्याधिकारी नियुक्त कर दिया। यहां मेरा काम उन सिंचाई परियोजनाओं से सम्बन्धित था जिनके बारे में अभी विचार हो रहा था। इस बारे में एक सरकारी आदेश द्वारा बताया गया कि श्री विश्वेश्वरैया सफ़ाई इंजीनियर के पद के साथ-साथ लोक-निर्माण विभाग में सिंचाई परियोजनाओं के लिए विशेष कार्य करेंगे।

तकनीकी या प्रशासन सम्बन्धी मतभेद उत्पन्न हो जाने पर उनके निपटारे के लिए मुझे कई समितियों में काम करने का अवसर मिला। पूना इंजीनियरिंग कॉलेज में शिक्षा सम्बन्धी सुधार करने के लिए एक समिति बनायी गयी। मेरे अतिरिक्त, निदेशक, शिक्षा-विभाग तथा कॉलेज के प्रिंसिपल इस समिति के सदस्य थे। उस समय तक यह कॉलेज 'साइंस कॉलेज' के नाम से पुकारा जाता था। समिति ने इसका नाम बदल कर इंजीनियरिंग कॉलेज रख दिया और पाठ्यक्रम में भी उचित परिवर्तन किये। सरकार ने समिति द्वारा दिये गये तमाम सुझाव मान कर उन्हें लागू कर दिया।

नगर-पालिकाओं के लिए मैं जो भी कार्य कर रहा था उसकी सरकार ने बड़ी उदारता से सराहना की। २८ जनवरी, १९०८ के दिन अहमदाबाद में, नगर-पालिका के मान-पत्र के उत्तर में, बम्बई के गवर्नर लॉर्ड सिडनहाम ने जो कुछ कहा उसकी कुछ पंक्तियां मैं यहां उद्धृत करता हूं:

> "यह ठीक है कि सरकार नगर-पालिकाओं के प्रति उदार है। परन्तु मैं समझता हूं कि नयी योजनाओं के बारे में इस बात की तसल्ली होनी ज़रूरी है कि वे हर दृष्टि से पूर्ण हों और जल-वितरण व्यवस्था के प्रबन्ध कार्य में किसी प्रकार का अपव्यय न हो। मेरा तो यह सुझाव है कि आप इस बारे में श्री विश्वेश्वरैया जैसे सुयोग्य इंजीनियर का परामर्श लें।"

सितम्बर, १९०४ में मुझे बम्बई विश्वविद्यालय का अधिसदस्य नामजद किया गया। इस बारे में सूचित करते हुए बम्बई के गवर्नर के निजी सचिव ने मुझे लिखा—"महामहिम गवर्नर आशा करते हैं कि आप विश्वविद्यालय के अधिनियम बनाने के महत्वपूर्ण काम में योग दे सकेंगे। ये अधिनियम नयी सिनेट के बनते ही उसके सामने रखे जायेंगे।"

अध्याय ४

बम्बई राज्य में काम

बम्बई सरकार की सेवा मे मैंने अपने जीवन के लगभग चौदह वर्ष पूना में ही विताये। पूना में मेरा प्रवास, कई प्रकार से, मेरे लिए विशेष महत्व रखता है। पूना बम्बई प्रेज़ीडेंसी के तीन प्रधान नगरों मे से एक था। दूसरे दो नगर बम्बई तथा महाबलेश्वर थे। महाबलेश्वर एक पर्वतीय स्थल है। समय-समय पर मुझे सरकारी काम से बम्बई और महाबलेश्वर भी जाना पड़ता था। बम्बई सरकार के सबसे बड़े यूरोपियन अधिकारी सख्त गर्मी के दिनों में काम करने के लिए महाबलेश्वर चले जाते थे। जैसा कि मैं पहले बता चुका हूं, १९०५ मे मैं लगभग दस महीनों तक बम्बई सचिवालय मे विशेष कार्य पर लगा रहा। फिर भी मै समझता हू कि इतने दीर्घकाल तक पूना मे रखकर मुझे एक प्रकार की सुविधा दी गई थी। जिन चार वर्षों तक मैं प्रान्तीय अधिकारी के पद पर रहा मुझे अपने काम के सिलसिले मे—बम्बई प्रेज़ीडेंसी के सिंध सहित अधिकांश भागो मे घूमने-फिरने के अवसर प्राप्त हुए। इस प्रकार के विविध अनुभवों द्वारा मुझे प्रान्त के शासन प्रबन्ध के बारे मे और तत्कालीन नेताओं की राजनीतिक तथा सामाजिक गति-विधियों के बारे मे जानकारी प्राप्त करने के अवसर मिले। साधारणत सरकारी नौकरी मे इस प्रकार की सुविधाएं प्राप्त नही होती।

सफाई इंजीनियर के अतिरिक्त और भी बहुत से विभागीय अध्यक्ष ऐसे थे जिनके प्रधान कार्यालय स्थायी रूप से पूना मे ही थे।

इसके अतिरिक्त पूना बौद्धिक तथा शिक्षा-केन्द्र भी था और बहुत से भारतीय अधिकारी नौकरी से अवकाश पाकर वही बस जाते थे। फरग्यूसन कॉलेज के प्रोफ़ेसर, समाचार पत्रों के सम्पादक और कुछ अन्य सरकारी अधिकारी राजनीति मे विशेष रुचि रखते थे और इस बात के पक्षपाती थे कि हिन्दुस्तानियों को राज-नीतिक सुविधाएं तथा सरकारी नौकरियां प्राप्त करने के और अधिक अवसर मिलने चाहिएं। उनमे श्री महादेव गोविंद रानाडे जैसे योग्य, विद्वान्, सतुलित विचारों वाले तथा सतर्क नेता का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वह सरकारी कर्मचारी होने के साथ-साथ पूना तथा महाराष्ट्र की अबुद्ध जनता के मित्र, दार्शनिक

के सदैव समर्थक थे। बम्बई के तत्कालीन देशभक्त नेता सर फिरोजशाह मेहता भी समिति के सदस्य थे।

फरवरी, १९०७ में बम्बई सरकार ने मुझे बम्बई सचिवालय में विशेष कार्याधिकारी नियुक्त कर दिया। वहां मेरा काम उन सिंचाई परियोजनाओं से सम्बन्धित था जिनके बारे में अभी विचार हो रहा था। इस बारे में एक सरकारी आदेश द्वारा बताया गया कि श्री विश्वेश्वरैया सफाई इंजीनियर के पद के साथ-साथ लोक-निर्माण विभाग में सिंचाई परियोजनाओं के लिए विशेष कार्य करेंगे।

नगरपालिका या प्रशासन सम्बन्धी मतभेद उत्पन्न हो जाने पर उनके निपटारे के लिए मुझे कई समितियों में काम करने का अवसर मिला। पूना इंजीनियरिंग कॉलेज में शिक्षा सम्बन्धी सुधार करने के लिए एक समिति बनायी गयी। मेरे अतिरिक्त, निदेशक, शिक्षा-विभाग तथा कॉलेज के प्रिंसिपल इस समिति के सदस्य थे। उस समय तक यह कॉलेज 'साइंस कॉलेज' के नाम से पुकारा जाता था। समिति ने इसका नाम बदल कर इंजीनियरिंग कॉलेज रख दिया और पाठ्यक्रम में भी उचित परिवर्तन किये। सरकार ने समिति द्वारा दिये गये तमाम सुझाव मान कर उन्हें लागू कर दिया।

नगर-पालिकाओं के लिए मैं जो भी कार्य कर रहा था उसकी सरकार ने बड़ी उदारता से सराहना की। २८ जनवरी, १९०८ के दिन अहमदाबाद में, नगर-पालिका के मान-पत्र के उत्तर में, बम्बई के गवर्नर लॉर्ड सिडनहाम ने जो कुछ कहा उसकी कुछ पंक्तियां मैं यहां उद्धृत करता हूं:

> "यह ठीक है कि सरकार नगर-पालिकाओं के प्रति उदार है। परन्तु मैं समझता हूं कि नयी योजनाओं के बारे में इस बात की तसल्ली होनी जरूरी है कि वे हर दृष्टि से पूर्ण हों और जल-वितरण व्यवस्था के प्रबन्ध कार्य में किसी प्रकार का अपव्यय न हो। मेरा तो यह सुझाव है कि आप इस बारे में श्री विश्वेश्वरैया जैसे सुयोग्य इंजीनियर का परामर्श लें।"

सितम्बर, १९०४ में मुझे बम्बई विश्वविद्यालय का अधिसदस्य नामजद किया गया। इस बारे में सूचित करते हुए बम्बई के गवर्नर के निजी सचिव ने मुझे लिखा—"महामहिम गवर्नर आशा करते हैं कि आप विश्वविद्यालय के अधिनियम बनाने के महत्वपूर्ण काम में योग दे सकेंगे। ये अधिनियम नयी सिनेट के बनते ही उसके सामने रखे जायेंगे।"

अध्याय ४

बम्बई राज्य में काम

बम्बई सरकार की सेवा मे मैंने अपने जीवन के लगभग चौदह वर्ष पूना मे ही बिताये। पूना में मेरा प्रवास, कई प्रकार से, मेरे लिए विशेष महत्व रखता है। पूना बम्बई प्रेज़ीडेंसी के तीन प्रधान नगरो मे से एक था। दूसरे दो नगर बम्बई तथा महाबलेश्वर थे। महाबलेश्वर एक पर्वतीय स्थल है। समय-समय पर मुझे सरकारी काम से बम्बई और महाबलेश्वर भी जाना पड़ता था। बम्बई सरकार के सबसे बड़े यूरोपियन अधिकारी सख्त गर्मी के दिनों मे काम करने के लिए महाबलेश्वर चले जाते थे। जैसा कि मैं पहले बता चुका हूं, १९०५ में मैं लगभग दस महीनों तक बम्बई सचिवालय में विशेष कार्य पर लगा रहा। फिर भी मैं समझता हू कि इतने दीर्घकाल तक पूना में रखकर मुझे एक प्रकार की सुविधा दी गई थी। जिन चार वर्षों तक मैं प्रान्तीय अधिकारी के पद पर रहा मुझे अपने काम के सिलसिले मे—बम्बई प्रेज़ीडेंसी के सिंध सहित अधिकाश भागों मे घूमने-फिरने के अवसर प्राप्त हुए। इस प्रकार के विविध अनुभवों द्वारा मुझे प्रान्त के शासन प्रबन्ध के बारे मे और तत्कालीन नेताओं की राजनीतिक तथा सामाजिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के अवसर मिले। साधारणतः सरकारी नौकरी मे इस प्रकार की सुविधाएं प्राप्त नहीं होती।

सफाई इंजीनियर के अतिरिक्त और भी बहुत से विभागीय अध्यक्ष ऐसे थे जिनके प्रधान कार्यालय स्थायी रूप से पूना मे ही थे।

इसके अतिरिक्त पूना बौद्धिक तथा शिक्षा-केन्द्र भी था और बहुत से भारतीय अधिकारी नौकरी से अवकाश पाकर वही बस जाते थे। फ़रग्यूसन कॉलेज के प्रोफ़ेसर, समाचार पत्रों के सम्पादक और कुछ अन्य सरकारी अधिकारी राजनीति में विशेष रुचि रखते थे और इस बात के पक्षपाती थे कि हिन्दुस्तानियों को राजनीतिक सुविधाएं तथा सरकारी नौकरियां प्राप्त करने के और अधिक अवसर मिलने चाहिएं। उनमें श्री महादेव गोविंद रानाडे जैसे योग्य, विद्वान्, संतुलित विचारों वाले तथा सतर्क नेता का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वह सरकारी कर्मचारी होने के साथ-साथ पूना तथा महाराष्ट्र की प्रबुद्ध जनता के मित्र, दार्शनिक

तथा मार्ग-दर्शक माने जाते थे। वे केवल पूना और महाराष्ट्र में ही नहीं, बल्कि सारे देश में, स्वतंत्र विचारों वाले राजनैतिक नेता प्रसिद्ध थे। उन्होंने समाज सुधार सम्बन्धी कई सम्मेलनों में भाग लिया और उनकी अध्यक्षता भी की, जिसमें राष्ट्रीय और सामाजिक सुधारों की मांग की जाती थी। राजनीतिक क्षेत्र में जिस प्रकार गांधी जी पंडित जवाहरलाल नेहरू को अपना उत्तराधिकारी मानते थे, उसी प्रकार श्री रानाडे श्री गोपालकृष्ण गोखले को अपना उत्तराधिकारी मानते थे। श्री रानाडे महाराष्ट्र में छोटी-छोटी उद्योग प्रदर्शनियों को तथा उद्योग विकास को बड़ा प्रोत्साहन देते थे। इसके अतिरिक्त बम्बई तथा भारत के अन्य भागों के राजा तथा उच्चकोटि के राजनीतिक नेता इनसे सदा परामर्श लेते रहते थे।

श्री गोपालकृष्ण गोखले पूना में बहुत दिनों तक फ़रग्यूसन कॉलेज में प्रोफ़ेसर रहे और इस अवधि में उन्होंने कुछ वर्षों तक सार्वजनिक सभा के सचिव का पद संभाले रखा। बाद में इन्होंने 'सर्वेन्ट्स आफ़ इंडिया सोसाइटी' की स्थापना की जिसने भारत के कई योग्य, देशभक्त तथा निःस्वार्थ नेताओं को आकर्षित किया। सार्वजनिक सभा की पत्रिका दरअसल श्री रानाडे ने आरम्भ की थी और शिवराम हरि साठे नामक एक वयोवृद्ध सज्जन उसके नाममात्र के सचिव थे। पत्रिका में अंग्रेज़ी के बड़े महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित होते थे। और जहां तक मुझे ज्ञान है सचिव अंग्रेज़ी नहीं जानते थे। श्री रानाडे ने देश के अनेक भागों से इस पत्रिका के लिए लेखकों की सेवाएं प्राप्त कीं, परन्तु इसका अधिक प्रचार प्रेज़ीडेंसी के महाराष्ट्र डिवीज़न में ही था।

सन् १८९३ में मुझसे भी इस पत्रिका के लिए एक लेख लिखकर भेजने को कहा गया। मैंने राष्ट्रीय उत्थान पर एक लेख लिखकर भेजा और श्री रानाडे ने उसे प्रकाशित कर दिया।

श्री बाल गंगाधर तिलक अंग्रेज़ी नीति और प्रशासन की कटु आलोचना करते थे, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें कई वर्ष जेल में रहना पड़ा। जेल में उन्होंने अपने समय का सदुपयोग इतिहास तथा दर्शन पर पुस्तकें लिखकर किया। वे श्री रानाडे और गोखले जैसे नेताओं द्वारा अपनाये गये अंग्रेजी सरकार से निपटने के नर्म तरीकों का अक्सर मज़ाक उड़ाया करते थे।

सन् १८९० के आस-पास पूना में ऐसे बहुत से शिक्षित लोग थे जो कि समाज सुधारकों के रूप में कार्य करने के लिए तैयार थे। एक बार करीब ४२ ब्राह्मण

सज्जनों ने पूना की एक ईसाई संस्था के न्यौते पर उनके साथ चाय-पार्टी में भाग लिया, जिसके परिणामस्वरूप वहां के कट्टर ब्राह्मणों ने उनका बहिष्कार कर दिया। मराठी पत्रों में उनका नाम बेबाकी से धर कर (दावत में भाग लेने वाले व्यक्तियों की गिनती ब्यालीस थी) उनकी निन्दा भी की गई, परन्तु पूना की जनता को सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाने में अधिक समय नहीं लगा।

दक्षिण क्लब की स्थापना

अपने मित्रों के संग घूमने-फिरने तथा खेलों में भाग लेते हुए मुझे विचार आया कि पूना में अंग्रेज़ी तरीके के क्लब का होना ज़रूरी है। अपने पूना प्रवास में मैं शुरू-शुरू के दिनों में स्थानीय खेल के मैदानों में खेलने के लिए जाया करता था और उन सभाओं में भी भाग लेता था जिनमें श्री रानाडे, गोखले तथा वहां के कुछ जागीरदार और वकील जाया करते थे। मैंने पूना के सब-जज स्व० श्री चिन्तामन राव भट के साथ मिलकर १४ जुलाई, १८९१ के दिन पूना के प्रमुख व्यक्तियों को एक परिपत्र भेजा कि हम पूना में एक क्लब की स्थापना करना चाहते हैं, जिसके लिए उनके सहयोग की आवश्यकता है। फिर हम श्री रानाडे के पास गये और उनके सामने अपना प्रस्ताव रखकर उनसे प्रार्थना की कि वह हमें 'हीरा बाग' नामक एक पुराना भवन, जिसका ऐतिहासिक महत्व था, क्लब के लिए ले दें। श्री रानाडे को हमारा प्रस्ताव अधिक नहीं जचा और वह बोले कि पूना निवासी शाम का समय आम तौर पर पान-सुपारी की पार्टियों में ही बिताते हैं अत अंग्रेज़ी तरीके के क्लब के लिए अधिक सहयोग प्राप्त होने की सम्भावना नहीं। दुर्भाग्यवश मेरे उत्साही मित्र श्री चिन्तामन राव की प्लेग से मृत्यु हो गयी। परन्तु शीघ्र ही पूना के समीप रहनेवाले कुछ पारसी सज्जन मुझे सहयोग देने को तैयार हो गये और क्लब की स्थापना के काम में प्रगति होने लगी।

हम एक बार पुनः जाकर श्री रानाडे से मिले और उन्होंने हीराबाग कमेटी पर अपना प्रभाव डालकर वह भवन हमें क्लब के लिए ले दिया। हमने क्लब के उद्देश्य और उसे चलाने के लिए अनुमानित खर्च का विवरण देकर परिपत्र छपवाए और उन्हें शहर में बटवाया। पूना निवासी दो सज्जन—नारायण भाई डांडेकर जो बरार के अवकाश प्राप्त शिक्षा निदेशक थे, तथा एक पारसी सज्जन खां बहादुर

दिनशा डी० खम्माटा जो पूना में सैनिक सेवाओं से सम्वन्धित थे, क्लव में सम्मिलित होकर मेरे साथ सचिव के रूप में कार्य करने के लिए तैयार हो गये। इसके पश्चात् हमने १७ नवम्बर, १८९१ के दिन क्लव का उद्घाटन करने का निश्चय किया और इसकी सूचना शहर के प्रमुख व्यक्तियों को देकर कार्यक्रम की प्रतीक्षा करने लगे।

इस अवसर के लिए हमने हीरा बाग भवन की मरम्मत कराई। निश्चित समय पर क्लव की वैठक आरम्भ हुई और केवल दस व्यक्ति इस वैठक में भाग लेने के लिए पहुंचे। यह देखकर मुझे बड़ी निराशा हुई। परन्तु आधे घण्टे के अन्दर-अन्दर पूना के लगभग २५ व्यक्ति (प्रतिष्ठित व्यक्ति) आ पहुंचे और होते-होते यह संख्या ७५ तक पहुंच गयी। उन दिनों आमतौर पर लोग सभाओं में निश्चित समय पर नहीं पहुंचा करते थे और जब तक उन्हें इस बात का विश्वास नहीं हो जाए, कि कोई प्रसिद्ध प्रवक्ता कार्यक्रम में भाग लेने के लिए आ रहा है, वे वहां नहीं जाया करते थे।

सभा की अध्यक्षता अवकाश प्राप्त ज़िलाधीश सरदार राव बहादुर गोपाल राव हरि देशमुख ने की तथा कई प्रमुख व्यक्तियों के भाषण हुए जिनमें बड़ौदा के अवकाश प्राप्त दीवान खां बहादुर खाजी शहावुद्दीन तथा श्री रानाडे भी थे।

> "श्री रानाडे ने अपने भाषण में कहा कि जब एक बार पहले पूना में एक क्लव स्थापित करने का प्रस्ताव रखा गया था तो हमारे कुछ मित्र जनों ने समझा कि यह-उन व्यक्तियों की एक चाल मात्र है जो दूसरे लोगों द्वारा धर्म विरुद्ध काम करवाकर उन्हें फंसाना चाहते हैं। फिर उन्होंने अन्य क्लवों के नामों का उल्लेख किया जिन्हें शुरू करने की तजवीजें पहले भी हो चुकी थीं। उन्होंने कहा—"इन सब क्लवों की विशेषता यह थी कि उन्हें देसी रूप दिया गया था, हालांकि क्लव एक यूरोपियन संस्था है। अब जिस क्लब की स्थापना का प्रयास किया जा रहा है, मैं समझता हूं कि इसका पूरा-पूरा स्वागत होना चाहिए।"
>
> हीरा बाग भवन के सम्बन्ध में श्री रानाडे ने कहा:
>
> "हम एक ऐतिहासिक स्थान पर इकट्ठे हुए हैं। सन् १७६८ में जब प्रथम पेशवा सेरिंगापटम के स्थान पर हैदर से युद्ध कर रहे थे तब उन्हें अपना

एक वचन याद आया। इस वचन में उन्होंने अपनी पत्नी से कहा था कि वह उसके लिए किसी सुन्दर बाग में एक भवन बनवा देंगे, ताकि जब वह दूर देश के अभियान पर गये हुए हों तो वह उसमें विश्राम कर सकें। श्रीरंगापटम में उन्हें अपना वचन याद आया और उन्होंने अपने मंत्री को लिखकर हीरा बाग भवन बनवा दिया। इस भवन का निर्माण और उद्यान की सजावट एक राजा ने रानी के लिए किया था सो, यह हमारा सौभाग्य है कि क्लब के लिए हमें यह जगह मिली। परन्तु यहा क्लब को स्थायी रूप से नहीं रखा जायगा। हमें आशा है कि हम शीघ्र ही इससे अच्छी जगह की व्यवस्था कर लेंगे।" इसके पश्चात् श्री रानाडे ने क्लब के अवैतनिक सचिवों के प्रति आभार प्रकट किया और श्री विश्वेश्वरैया द्वारा किये गये कार्य की विशेष रूप से सराहना की।"

(दी डेली टेलीग्राफ तथा डैक्कन हैराल्ड, पूना, १९ नवम्बर, सन् १८९१)

पूना के प्रमुख व्यापारी सरदार दोराबजी पदमजी क्लब के सभापति चुने गये और श्री रानाडे तथा श्री गोखले व्यवस्थापिका समिति के सदस्य बनाये गये।

सन् १८९४ में सक्खर तबदील हो जाने तक मैं एक सचिव के रूप मे काम-काज की देख-भाल करता रहा। जब क्लब के सदस्यों को पता चला कि मेरी तबदीली सक्खर में हो गयी है तो उन्होंने मुझे दावत दी और क्लब के प्रति की गयी मेरी सराहनीय सेवाओं के बदले मे मुझे एक एल्बम भेंट की जिसमें सब सदस्यों के चित्र लगे हुए थे।

क्लब १८९१ में शुरू किया गया था और ५० वर्ष बाद नवम्बर, १९४१ मे उसकी स्वर्ण जयन्ती मनायी गयी। क्लब का अवैतनिक सदस्य होने के नाते मुझे की अध्यक्षता करने के लिए विशेष रूप से बुलाया गया। इस अवसर पर पूना के समारोह प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। यह क्लब आज भी विद्यमान है और गत ६० वर्षों से पूना निवासियों का मन बहलावा कर रहा है। यह आज भी उसी हीरा बाग भवन में है जहा इसका उद्‌घाटन हुआ था।

सन् १८९८ मे मैं अपनी जापान यात्रा के पश्चात् बम्बई लौटा। एक शाम श्री रानाडे ने, जो तब तक हाईकोर्ट के जज हो गये थे, अपने साथ खाने पर बुलाया। हम मुख्यत. जापान में हुई प्रगति के बारे में ही बातचीत कर रहे थे। मेरे विदा होते समय श्री रानाडे अपने मकान के एक कमरे की ओर इशारा करके मुझे बताने लगे

कि उनके एक मित्र श्री वामन आवा रावजी मोदक, जो एक सुप्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री थे, वहां बीमार पड़े हैं। उनके ठीक-ठीक शब्द ये थे—"क्या आप जानते हैं कि उस कमरे में मेरा एक मित्र एक ऐसे रोग से बीमार पड़ा है जिससे सारा भारत पीड़ित है। अधिक पूछने पर उन्होंने बताया कि श्री मोदक को लकवा हो गया है।

पूना में हर साल एक दरबार लगता था, जिसकी अध्यक्षता एक यूरोपीय अधिकारी महाराष्ट्र के डिवीज़नल जज किया करते थे। इस दरबार में दो तरह के लोग बुलाए जाते थे—एक जागीरदार व सरदार और दूसरे सरकारी अफ़सर। एक बार दरबार के अफ़सर पर सरकारी अफ़सर बायीं पंक्ति में बैठे हुए थे और जागीरदार दायीं ओर। मैं बायीं पंक्ति में श्री रानाडे के साथ सबसे आगे बैठा था। हमें वहां काफ़ी देर तक निठल्ले बैठना पड़ता था। श्री रानाडे मुझे सामने बैठे हुए कुछ सरदारों व जागीरदारों का इतिहास—उनके स्वभाव की अच्छाइयाँ और बुराइयां बताने लगे। जब वे मुझे क़रीब आधे दर्जन जागीरदारों के विचित्र स्वभावों के किस्से सुना चुके तो मैंने उनसे पूछा कि क्या आप उन लोगों के पास अक्सर आते जाते रहते हैं। वह बोले—"मैं उनके यहां कभी नहीं जाता। परन्तु सरकारी मामलों में किसी प्रकार की मुश्किल आ पड़ने पर या अपनी जागीर में कोई समस्या खड़ी हो जाने पर वे परामर्श लेने के लिए मेरे पास आते रहते हैं।" यह श्री रानाडे की बड़ी भारी विशेषता थी कि वह महाराष्ट्रवासियों के प्रिय नेता, मित्र तथा मार्गदर्शक थे। उनमें आत्मसंयम, योग्यता और देशभक्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने जीवन के अंतिम दिनों में वह भारत के सबसे बड़े नेताओं में गिने जाते थे और यह बात बिल्कुल ठीक थी।

हालांकि मैं सफ़ाई इंजीनियर के पद को संभाले हुए था, फिर भी समय-समय पर मुझे इसके अलावा दूसरे काम सौंप दिये जाते थे। जैसा कि मैं बता चुका हूं, तीन सुपरिटेंडिंग इंजीनियर डिवीज़न छः महीनों तक मेरे अधीन रहे। सन् १९०७ में मुझे दो बड़ी रियासतों से मुख्य इंजीनियर के पद के लिए बुलावा आया। जब मैंने अपने महकमे के उच्चाधिकारियों को इसके बारे में बताया तो वे बोले कि वे मेरे बम्बई सरकार की नौकरी छोड़कर जाने के पक्ष में नहीं हैं। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि मेरे हितों का पूरा-पूरा ध्यान रखा जायगा। विशेष कार्यों के लिए नियुक्ति होने के कारण मैं कई वर्षों तक अपने वरिष्ट अधिकारियों से जिनकी

गिनती एक बार १८ तक पहुंच गयी थी, आगे निकल जाता रहा। सरकार ने दो तीन अधिकारियों के पद हटाकर उन्हें पहले वाले पद पर लगा दिया और मुझे यह ज्ञान हुआ कि मुझे दूसरों से पहले तरक्की दिये जाने के कारण बड़ा असंतोष फैला हुआ है। उस समय देश में राजनीतिक चेतना की लहर दौड़ रही थी, सो मैंने सोचा कि जब तक मेरी अपनी बारी न आ जाए, मेरे लिए मुख्य इंजीनियर के पद को प्राप्त करना असंभव है। तब मैंने बम्बई सरकार की नौकरी से अवकाश ग्रहण करने का निश्चय किया और अवकाश के पूर्व छुट्टी के लिए प्रार्थनापत्र दे दिया। जब इस बात की खबर सरकारी क्षेत्रों में पहुंची तो बड़ा आश्चर्य किया गया। लोग हैरान थे कि जब मुझे दूसरों से पहले तरक्की दी जा रही है तो मैं इस प्रकार का कदम क्यों उठा रहा हूँ। इसके अतिरिक्त मेरे कुछ ऐसे हितैषी मित्र उच्च अधिकारियों सहित भी मेरी नौकरी से अवकाश ग्रहण करने के पक्ष में नहीं थे और फिर मेरी नौकरी अभी इतनी नहीं हुई थी जो मैं पेन्शन पाने का अधिकारी होता। मेरे कुछ मित्रों को यह डर था कि मुझे पेन्शन मिलेगी ही नहीं। परन्तु अन्त में बम्बई सरकार ने भारत सरकार से अपने ६ मार्च, १९६० के पत्र, संख्या १०८६, द्वारा मुझे पेन्शन देने की सिफारिश करते हुए लिखा कि :

"महामहिम गवर्नर श्री विश्वेश्वरैया द्वारा की गयी अत्यंत सराहनीय सेवाओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें पेन्शन पाने का पूर्ण अधिकार देते है।"

बम्बई के गवर्नर लॉर्ड सिडनहाम द्वारा मुझे लिखे गये एक पत्र से यह पता चलता है कि बम्बई सरकार ने मेरी नौकरी के अन्तिम दिन तक मेरी सेवाओं की प्रशंसा की है।

पत्र का अंश कुछ इस प्रकार है

"यदि आप सरकारी नौकरी में रहते और मैं भारत में रहता तो मुझे आशा है कि मैं आपकी मूल्यवान सेवाओं की पूरी-पूरी कीमत चुकाने में अवश्य सफल होता। आप तरक्की पाकर अपने कई वरिष्ट अधिकारियों से आगे निकल गये। मुझे आशा है कि आप इस बात को मानते होंगे कि आपके साथ विशेष उदारता का सलूक किया गया।

आप जो कुछ भी करने का निश्चय करें, मेरी तो यह हार्दिक अभिलाषा है कि आपको जीवन में सफलता प्राप्त हो। इस बात का मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप अपनी मेहनत और योग्यता के बल पर एक दिन उन्नति के शिखर

पर पहुंचेंगे। मैं समझता हूं कि सरकारी नौकरी में जो अनुभव प्राप्त हुए वह अत्यंत सुखद थे।"

इस प्रकार बम्बई राज्य में मेरी सरकारी नौकरी के अध्याय की समाप्ति होती है।

अध्याय ५

हैदराबाद (दक्षिण) में विशेष सलाहकार इंजीनियर के पद पर

मूसी नदी हैदराबाद नगर के बीचों-बीच होकर गुजरती है और नगर को दो हिस्सों मे बांट देती है। २८ सितम्बर, १९०८ के दिन यह नगर घोर वर्षा और तूफान की लपेट मे आ गया। हैदराबाद के निकट रामगावाद मे, जो कि स्रवण क्षेत्र के प्रमुख वर्षा मापने के केन्द्रो मे से एक था, उस दिन २४ घंटों में १२·८ इंच और ४८ घंटो मे १८·९० इंच वर्षा हुई। इस वर्षा से इतनी विनाशकारी बाढ आयी, जिसकी मिसाल पिछले सत्तर-अस्सी वर्षों मे भी नही मिलती थी। नदी का उत्तरी किनारा दक्षिणी किनारे से अपेक्षाकृत नीचा था। नदी के स्रवण क्षेत्र में शहर से ऊपर लगभग ८६० वर्ग मील भूमि मे ७८८ छोटे-छोटे तालाब थे, यानी स्रवण क्षेत्र की एक वर्ग मील भूमि मे लगभग एक तालाब पडता था। मूसी नदी की वादी मे, जहा बाढ़ आयी थी, दो स्रवण क्षेत्र थे, जिनमे से एक २८५ वर्ग मील और दूसरा ५२५ वर्ग मील था। नदी मे पानी की सतह के निशानों से पता चला कि बाढ़ के कारण नदी मे पानी का निकास ११०,००० क्यूसेक्स से शुरू होकर ४२५,००० क्यूसेक्स तक गया। नतीजा यह हुआ कि नदी की वादी मे कोई भी तालाब टूटने से न बच सका। कुल मिलाकर २२१ तालाबों के टूटने की खबर मिली, जिनमे से १८२ ईसी अपवाद क्षेत्र मे थे और ३८ मूसी मे।

बाढ से जो हानि हुई उसकी जांच करने तथा भविष्य मे इस प्रकार की तबाही को रोकने के लिए जो कदम उठाने जरूरी थे, उसके बारे मे सलाह देने के लिए हैदराबाद सरकार को एक इंजीनियर की जरूरत पड़ी।

अवकाश ग्रहण करने से पूर्व जब मैं छुट्टी लेकर विदेश यात्रा कर रहा था तो इटली में मिलान नामक स्थान पर मुझे लदन स्थित भारतीय कार्यालय के उप-सचिव की ओर से एक पत्र प्राप्त हुआ। पत्र मे बम्बई के गवर्नर की ओर से प्राप्त एक तार की पंक्तियां अंकित थीं और यह भी लिखा था कि पत्र का उत्तर शीघ्र दिया जाए। तार में लिखा था :

श्री अहमदी ने, जो हैदराबाद के सर अकबर हैदरी के निकट सम्बन्धी थे मुझे कतरन भेजते हुए लिखा :

"मैं हैदराबाद मे आपकी नियुक्ति के बारे में पढ़कर बहुत प्रसन्न हुआ। प्रसन्नता इस बात पर हुई कि उन्होंने एक भारतीय को इस पद के उपयुक्त समझकर उसे इस पर नियुक्त किया।"

हैदराबाद मे मुझे तीन विशेष कार्य करने थे।

१. हैदराबाद नगर का पुनर्निर्माण करने के बारे में सुझाव देना।
२. भविष्य मे नगर को बाढ़ो के प्रकोप से बचाने के लिए कोई व्यवस्था करना।
३. हैदराबाद नगर और चन्द्रघाट के लिए एक जल-निकास योजना तैयार करना।

१५ अप्रैल, १९०९ के दिन हैदराबाद पहुंचकर मैंने दो बड़ी योजनाओं का सर्वेक्षण कार्य आरम्भ करने के लिए कर्मचारियों की तलाश शुरू की। हैदराबाद सरकार बाढ़ से नगर के बचाव के कार्य को तथा नगर के लिए एक आधुनिक जल-निकास योजना तैयार करने के काम को बहुत महत्व देती थी। इन दोनों योजनाओं के लिए सर्वेक्षण कार्य करके अनुमानित व्यय विवरण तैयार करना आवश्यक था। नगर मे पक्की सड़कें बनाने तथा अन्य छोटे-छोटे कामो की व्यवस्था बाद मे की गयी थी।

इसमें सन्देह नहीं कि हैदराबाद मे १९०८ की बाढ़ वर्षा के कारण ही आयी थी। परन्तु यदि इसके साथ नदी के स्रवण क्षेत्र के अनेक तालाब न टूट जाते तो यह बाढ़ इतना भीषण रूप धारण न करती और शहर नष्ट होने से बच जाता।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, सोमवार, २८ नवम्बर, १९०८ के दिन बाढ़ आयी और दोपहर होते-होते वह अपनी चरम सीमा पर पहुंच गयी। आधी रात के समय बड़े जोर की वर्षा होने लगी। नतीजा यह हुआ कि तालाबों मे लबालब पानी भर गया और वे एक-एक करके टूटने लगे। फिर तो बाढ़ के पानी ने शहर में जो प्रलय मचायी उसकी मिसाल मिलनी मुश्किल है। कहा जाता है कि कोलसावाड़ी नामक मुहल्ले मे ही लगभग दो हजार व्यक्ति बह गये थे।

सर्वेक्षण तथा जांच कार्य को पूरा करने के लिए कुछ इंजीनियर तथा बहुत

मे श्री एलन ने हैदराबाद सरकार के लोक निर्माण विभाग के सचिव श्री एफ० मूरज को जो पत्र लिखा वह इस प्रकार है :

"मैं हैदराबाद सरकार को एक तो इस बात पर बधाई देता हूं कि वह एक बहुत बडी विपत्ति को एक वरदान मे बदलने का प्रयास कर रही है और दूसरी इस बात पर कि इस काम के लिए उन्होंने जिसको चुना है, वह भारत के योग्यतम इंजीनियरो में से हैं। मैं समझता हू कि अधिक वाद-विवाद न कर के शीघ्र ही इस योजना के अनुसार कार्य आरभ कर देना चाहिए। जहा तक नक्शों का संबंध है, मैं समझता हूं कि एक योग्य इजीनियर द्वारा तैयार किये गये नक्शे ऐसे ही होने चाहिए।"

मार्च, १९१३ मे, यानी मेरे हैदराबाद छोड़कर चले जाने के साढ़े तीन वर्ष बाद, हैदराबाद सरकार ने मूसी जलाशय का निर्माण आरभ किया। जब जलाशय के बाध का शिलान्यास किया गया तो रियासत के लोक निर्माण विभाग के अध्यक्ष श्री टी० डी० मैकेंज़ी ने महामहिम निज़ाम को मान-पत्र भेंट करते समय अन्य बातों के साथ यह भी कहा :

"स्वर्गीय महामहिम निज़ाम के सलाहकार बचाव के तरीकों की योजना बनानेवाले कार्याधिकारी के चुनाव मे भी भाग्यशाली रहे। उन्होंने श्री विश्वेश्वरैया को चुना, जिनकी गिनती भारत के योग्यतम इजीनियरों मे होती है। वह जीवन के किसी भी क्षेत्र मे अपना नाम पैदा कर सकते है। और आज वे मैसूर के दीवान के रूप मे बडा ही सराहनीय काम कर रहे है। श्री विश्वेश्वरैया को श्री अहमद अली द्वारा जो सहायता प्राप्त हुई, उसके लिए उन्होंने अपनी रिपोर्ट मे उनके प्रति बड़ा आभार प्रकट किया है।"

(टाइम्स आफ इण्डिया, २४ मार्च, १९१३)

ईसी जलाशय के निर्माण का कार्य बाद मे आरंभ हुआ। इसके लिए मैंने श्री सी० टी० दलाल नामक एक बहुत ही सुयोग्य भारतीय इंजीनियर की सेवाए प्राप्त कर ली। श्री दलाल अवकाश प्राप्त एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर थे और मैसूर के लोक-निर्माण विभाग मे बांध बनाने के काम में काफ़ी नाम कमा चुके थे।

सन् १९०८ मे मूसी बांध के निर्माण की विस्तृत रिपोर्ट तैयार करनेवाले अधिकारी थे, श्री अहमद अली, जिनका उल्लेख श्री टी० डी० मैकेन्ज़ी ने किया है। इस कार्य से सबधित मेरे अधीन काम करनेवाले लोगों में वह नि सदेह सबसे योग्य

अधिकारी थे। वह अपनी कार्य-कुशलता के बल पर, बाद में, हैदराबाद के मुख्य इंजीनियर हो गये और उन्हें नवाब अली नवाज़जंग की उपाधि भी दी गयी। सन् १९२९ में बम्बई सरकार द्वारा स्थापित एक समिति में उन्हें ही मेरे साथ एक सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया था। यह समिति सिंध नदी पर बने सक्खर बांध सम्बन्धी कुछ समस्याओं की जांच करने के लिए नियुक्त की गयी थी। इस समिति को लॉयड बांध व नहर निर्माण कार्य (सक्खर) के नाम से भी पुकारा जाता था।

ईसी बांध के निर्माण का कुछ काम श्री सी० टी० दलाल ने पूरा किया और शेष काम श्री क्लेमेंट टी० मुलिंग्स, जिन्हें बाद में सर की उपाधि मिली, ने किया। श्री मुलिंग्स वही इंजीनियर थे जिन्हें मद्रास में मेट्टूर बांध बनाने का श्रेय प्राप्त हुआ था।

हैदराबाद में जल-निकास योजना

हैदराबाद में जो दूसरा महत्वपूर्ण कार्य मुझे सौंपा गया, वह था, हैदराबाद नगर के लिए एक आधुनिक मलमार्ग का निर्माण करना।

जैसा कि बताया जा चुका है, मूसी नदी हैदराबाद नगर के बीच में से होकर गुज़रती है और नदी के दोनों ओर का गन्दा जल नालियों द्वारा नदी में बहा दिया जाता था। इस प्रकार कभी-कभी, विशेषकर गर्मी के मौसम में, मूसी नदी स्वयं एक गन्दे नाले में बदल जाती थी।

शहर में जहां कहीं आबादी अधिक थी और गलियां तंग थीं, लोग गन्दे जल के निकास के लिए अपने घरों के सामने गढ़े खोद लिया करते थे। कभी कभी तो इन गढ़ों के ऊपर तक भर जाने से गन्दा जल बाहर बहने लगता था और कभी-कभी यह सूख जाते। गन्दगी के इन गढ़ों में मच्छर पलते रहते। उन दिनों यह कहा जाता था कि यदि कोई परदेशी शहर में पहली बार आये और लोगों की इस आदत से अनभिज्ञ हो तो वह यही समझेगा कि शहरवालों ने मच्छर पालने का धंधा शुरू कर रखा है।

सबसे पहला काम यह किया गया कि नदी के दोनों ओर की गन्दी नालियों के पानी को पाइप द्वारा एक अलग खाद बनाने के फ़ार्म में ले जाया गया। यह फ़ार्म

नगर के पूर्व मे नदी के बायें किनारे पर बनाया गया था। नदी के दक्षिणी किनारे का मल एक पाइप द्वारा चन्द्रघाट पुल के नीचे मे नदी के पार ले जाकर उस फार्म में पहुँचा दिया गया।

मैंने हैदराबाद सरकार से यह तय कर रखा था कि मैं बाढ नियन्त्रण की तथा आधुनिक मलमार्ग निर्माण की योजनाएं तैयार करके दूंगा। यह दोनों योजनाएं तैयार करके व्यय विवरण तथा नक्शों सहित मैंने हैदराबाद छोड़ने से पूर्व सरकार को पेश कर दी। बाढ़ नियन्त्रण योजना की रिपोर्ट १ अक्तूबर, १९०९ के दिन और दोनों नदियों पर जलाशय के निर्माण की योजना २० अक्तूबर, १९०९ को पेश की गयी।

नगर मे मलमार्ग निर्माण की योजना ६ नवम्बर, १९०९ के दिन पेश की गयी। इस योजना के अन्तर्गत नगर की सारी गन्दी बस्तियों को, जो नगर के लिए एक बुराई बनी हुई थी, रखा गया था। चूंकि सरकार सारे नगर में मलमार्ग निर्माण एक ही साथ नही करना चाहती थी, इसलिए नगर के बहुत से भागों का काम बाद के ब्योरेवार सर्वेक्षण पर छोड दिया गया। अंग्रेजी रेजीडेंट के कहने पर ४ जुलाई, १९०९ के दिन मैंने उन्हे सिकन्दराबाद छावनी मे जल-निकास सम्बन्धी एक रिपोर्ट तैयार करके दी, अपने १८ अक्तूबर,१९०९ के पत्र मे उन्होंने मुझे लिखा :

"छावनी की जल-निकास सम्बन्धी रिपोर्ट तैयार करके देने के लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। यह रिपोर्ट छावनी के अधिकारियों द्वारा स्वीकार कर ली गयी है और इस पर शीघ्र ही काम शुरू किया जायगा।"

नवम्बर, १९०९ मे मैंने हैदराबाद सरकार की नौकरी छोड़ी। इसके पश्चात् १३ वर्षों तक उस नगर के इंजीनियरिंग सम्बन्धी कामो से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रहा। सन् १९२२ मे मुझे हैदराबाद की जल-निकास योजना के बारे में सलाह देने के लिए एक बार फिर बुलाया गया, क्योकि योजना के काम मे सन्तोषजनक प्रगति नही हो रही थी। इस काम के लिए मुझे छ-सात बार हैदराबाद जाना पड़ा।

जल-निकास योजना के अन्तर्गत किये गये कार्य में खाद फार्म बनाने और नदी के दोनो ओर के गन्दे पानी को पाइपों द्वारा खाद फार्म तक पहुंचाने का काम ही सबसे जरूरी था। गली-कूचों और घरों के साथ मिली नालियों के विकास की ओर भी विशेष ध्यान दिया गया।

जिन दिनों मुझे पुन हैदराबाद बुलाया गया, उन दिनों जल-निकास योजना

इस पद को स्वीकार करने के पूर्व मैंने जिन दो बातों पर जोर दिया था, अर्थात् तकनीकी शिक्षा और उद्योग, महाराज ने उनके विकास को प्रोत्साहन दिया। सरकार ने दोनों के लिए अलग-अलग समिति नियुक्त की। तकनीकी शिक्षा के लिए बनाई गयी समिति में रियासती शिक्षा विभाग के इन्स्पेक्टर जनरल श्री जे० वीर तथा तीन अन्य भारतीय अफसर थे। मुझे इस समिति का अध्यक्ष बनाया गया।

सितम्बर, १९१२में हमने एक रिपोर्ट तैयार कर के सरकार को पेश कर दी।

आर्थिक सम्मेलन

राज्य के उद्योग और आर्थिक समस्याओं के लिए महाराज ने, मेरे सुझाव पर, मैसूर राज्य के उच्च अधिकारियों और प्रमुख ग़ैर सरकारी व्यक्तियों का एक आर्थिक सम्मेलन स्थापित करने का निश्चय किया जिसमें अत्यन्त आवश्यक मामलों पर विचार किया जाए और उनकी उन्नति का कार्यक्रम निर्धारित किया जाय । इस सम्मेलन का उद्घाटन महाराज ने १० जून, १९११ को स्वयं किया । इस अवसर पर उन्होंने जो भाषण दिया, उसका सारांश इस प्रकार है:

"आर्थिक बुराइयों का सबसे बड़ा इलाज शिक्षा है। इधर कुछ वर्षों में हमारी सरकार ने जनता की बुद्धि के विकास तथा शिक्षा प्रसार के लिए पहले से अधिक अनुदान देकर, तथा अन्य प्रकार से, बहुत कुछ किया है और पहले से अधिक अनुदान भी दिये हैं। शिक्षा के सवाल को महत्व देने के लिए हमने इस विषय को अपने कार्यक्रम में सबसे पहले रखा है।"

"रियासत की आर्थिक स्थिति के बारे में जाँच करने का अभिप्राय होगा अज्ञान, गरीबी, बीमारी और अकाल-मृत्यु के कारणों की जाँच करना। ये महासंकट हर देश में और हर काल में थोड़े-बहुत विद्यमान रहते हैं। परन्तु हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि हम उन्हें जितना हो सके, उतना कम कर दें। समय बदल रहा है। संचार साधनों की प्रगति ने दूरी को समाप्त कर दिया है, जिससे कृषि तथा अन्य उद्योग-धंधों में प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है। यह जमाना परिश्रमी और बलवान लोगों का है।

और वे स्वयं बहुत ही योग्य अधिकारी थे, परन्तु उनकी रुचि [illegible] इंजन बनाने, डाक जहाजों के लिए ढांचे बनाने तथा बंगलौर में रेल डिब्बों के कारखाने स्थापित करने जैसे कुछ विशेष उद्योग-धंधों तक ही सीमित थी। उन्होंने लोहा और दूसरी मशीनें आदि तैयार करने के उद्योगों में, जिनकी रियासत को जरूरत थी, दिलचस्पी नहीं ली।

रेल विभाग

यहां यह बता देना संगत होगा कि लोक-निर्माण विभाग में चीफ इंजीनियर के रूप में काम करते समय मैं रेल विभाग का सचिव भी था। रेल विभाग का कार्य पिछले १५ वर्षों से ठप्प पड़ा था। तब तक रियासत की रेल व्यवस्था मद्रास तथा दक्षिण मराठा रेलवे कम्पनी के अधीन थी। रियासत में रेलों के विस्तार के

लिए यह जरूरी था कि मैसूर सरकार रेल व्यवस्था को अपने अधिकार में ले ले। तब मैसूर सरकार ने रेल व्यवस्था को अपने अधिकार में लेने तथा रेलों का विस्तार करने के लिए कार्य-क्रम तैयार किया।

कावेरी जलाशय (कृष्णराज सागर)

मेरा अगला महत्त्वपूर्ण काम कावेरी नदी के आर-पार एक बांध निर्माण का था। सन् १९०२ में शिव समुद्रम् प्रपात पर, कावेरी के जोरदार बहाव द्वारा बिजली पैदा कर, के एक बिजली घर का निर्माण किया गया था। इस बिजली घर में १३,००० हार्स पावर बिजली तैयार की जा रही थी जिसमें से ११,००० हार्सपावर बिजली वहां से करीब ९० मील दूर कोलार की सोना खानों में दी जाती थी। शिवसमुद्रम् को दिया जानेवाला पानी घटता-बढ़ता रहता था। श्रीरंग-पट्टम से लगभग दस मील पश्चिम में, कन्नमबाडी नामक गांव में, एक जलाशय बनाने का प्रस्ताव था। लेकिन इसके लिए ऐसा कोई नक्शा तैयार नहीं किया गया था, जिसका व्यावहारिक दृष्टि से कोई महत्त्व था। पानी को कावेरी घाटी में, बड़े पैमाने पर, बिजली-उत्पादन तथा सिंचाई दोनों के लिए इस्तेमाल करने की दृष्टि से, एक विशाल जलाशय के निर्माण के लिए सर्वेक्षण का काम फिर से शुरू किया गया। क्योंकि मैंने मिस्र के असवान बांध जैसे-बड़े बड़े बांध देखे थे और बम्बई प्रेज़ीडेन्सी के हैदराबाद इलाके में बड़े बड़े जलाशयों के नक्शे बनाने के सिलसिले में भी काम किया था, इसलिए मैसूर की कावेरी घाटी की जरूरतों के लिए उपयुक्त सिंचाई तथा बिजली-उत्पादन की एक संपूर्ण परियोजना तथा नक्शे तैयार करने में मुझको अधिक समय नहीं लगा।

शिव समुद्रम् बिजलीघर का निर्माण उस काल में, जब सर के० शेषाद्रि अय्यर मैसूर के दीवान थे, सार्वजनिक निर्माण विभाग की सहायता से मेजर ए० सी० डि० लाट बिनिसर, आर० ई०, जो उस समय राज्य के सुपरिटेंडिंग इंजीनियर थे, की देख-रेख में हुआ।

कोलार की सोना खानों के व्यवस्थापक एजेन्टों ने देखा कि खानों में दी जाने-वाली बिजली काफी नहीं थी। गर्मियों में नदी में पानी कम हो जाने के कारण बिजली और भी कम हो जाती थी। मैं बिजली-विभाग में सरकारी सचिव भी

था, इसलिए मैंने व्यवस्थापक एजेन्टों के प्रतिनिधि जान टेलर एण्ड सन्ज़ के साथ इस समस्या पर बातचीत की।

रियासत के बिजली विभाग के मुख्य बिजली-इंजीनियर श्री एच० पी० गिब्स भी इस बातचीत में शरीक़ हुए। बातचीत के बाद जलाशय के आकार और निर्माण की अवस्थाएं निश्चित की गयीं, ताकि शिवसमुद्रम् बिजलीघर को आवश्यक जल मिल सके तथा कावेरी घाटी के उन क्षेत्रों की सिंचाई हो सके जो रियासत के अंतर्गत आते थे।

१२४ फ़ुट ऊंचा पक्का बांध बना कर, ४८,०० घन फ़ुट पानी जमा करने की योजना बनायी गयी। इस भूमि से १५०,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होनी थी। और ८०,००० हार्स पावर बिजली पैदा की जानी थी। यह बिजली कोलार की सोना खानों के अतिरिक्त नदी की वादी में बसे शहरों और क़स्बों में घरेलू इस्ते-माल और कारखानों के लिए भी चाहिए थी।

नदी पर जलाशय के लिए ऐसा बांध बनाने की योजना थी, जो नदीतल से १३० फ़ुट ऊंचा तथा निम्नतम नींव से १४० फ़ुट ऊंचा हो, लम्बाई ८,६०० फ़ुट हो तथा नींव के पास तले की चौड़ाई १११ फ़ुट हो।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है जलाशय के निर्माण से पूर्व १३,००० हार्स पावर बिजली पैदा की जाती थी, जिसमें से कोलार की सोना खानोंके लिए ११,००० हार्स पावर बिजली दी जाती थी। खानों के मैनेजिंग एजेन्ट, जान टेलर एण्ड सन्ज़ ने, पांच वर्षों के लिए, ५,०००हार्स पावर बिजली की और मांग की और उस के बाद, १०,००० हार्सपावर बिजली की मांग की, शुरू में जलाशय के अन्दर जो पानी जमा किया गया वह शिवसमुद्रम् में २०,०००हार्सपावर बिजली, जिसमें पहले दी जा रही बिजली भी शामिल थी, पैदा करने के लिए काफ़ी था। शिवसमुद्रम् प्रपात से कुछ ही नीचे, शिमशा नामक स्थान पर भी बिजली पैदा करने की एक बढ़िया तजवीज़ थी। अनुमान था कि दोनों बिजली घरों के तैयार हो जाने पर ८०,००० हार्सपावर बिजली पैदा की जा सकेगी। अब इतनी बिजली की पूरी खपत हो रही है।

यहां यह बता देना आवश्यक होगा कि जलाशय के निर्माण की योजना तो तैयार हो गयी, पर कुछ समय तक महाराज की ओर से इसका निर्माण कार्य आरम्भ करने की अनुमति नहीं आयी। अनुमान था कि यह योजना २५३ लाख रुपये की

लागत से तैयार होगी। शायद रियासत के कुछ अधिकारियों ने महाराज पर दबाव डाल कर उन्हें इतनी बड़ी रकम खर्च करने से मना कर दिया। रियासत की ओर से इतनी बड़ी रकम पहले किसी एक परियोजना पर खर्च नहीं की गयी थी। परन्तु रियासत के दीवान श्री टी० आनन्दराव इस तजवीज का पूरा-पूरा समर्थन कर रहे थे। जब मुझे लगा कि मैं महाराज को सहमत नहीं कर सकता, तो मैंने रियासत की नौकरी से अवकाश ग्रहण करने की ठान ली। मैं कुछ दिनों की छुट्टी लेकर उत्तर भारत की ओर घूमने चला गया। जब मैं वापस आया तो देखा कि योजना के निर्माण का काम तब भी ठप्पा पड़ा था और उसमें कोई गति नहीं आयी थी। यह सब देख कर मैंने मौन साध लिया और कुछ समय तक अपने दफ्तर के काम के सिवा किसी और बात की ओर ध्यान देना बन्द कर दिया।

मेरे इस बदले हुए व्यवहार को देख कर महाराज ने मुझे अपने पास बुलाया। उन दिनों वे बंगलौर में ठहरे हुए थे। जब मैं उनके पास पहुंचा तो पूछने लगे कि पहले की भांति मैं नये विकास कार्यों में दिलचस्पी क्यों नहीं ले रहा। मैंने महाराज से सही बात साफ-साफ कह दी कि विकास कार्यों के लिये दी गयी सुविधाओं से मुझे काफी असन्तोष हुआ है। मुझे कोई भी सुविधा नहीं दी जा रही है। चूंकि रियासत में अब कोई ऐसा काम रहा ही नहीं जिसके प्रति उत्साह दिखाया जा सके, अत: मैं नौकरी छोड़ कर जाना चाहता हूँ। महाराज बोले :

"आप जल्दी मत करें। जो आप चाहते हैं, सो हो जायगा।" फिर वह बोले कि अगले सप्ताह मुझसे मैसूर में मिलना। वहां उन्होंने हर एक तजवीज की पूरी-पूरी जांच करने के पश्चात् मेरे द्वारा पेश की गयी सारी तजवीजों की मंजूरी दे दी। इन सब में जलाशय के निर्माण की योजना सब से अधिक महत्वपूर्ण थी। मैं नहीं जानता कि इस योजना के बारे में महाराज ने बाहर के किसी इंजीनियर से परामर्श किया था या नहीं। परन्तु इससे मेरा यह मतलब हल हो गया कि जो योजना मैंने सरकार को पेश की थी वह, बिना किसी जोड़-तोड़ या परिवर्तन के, मंजूर कर ली गयी।

जलाशय के निर्माण में अगली कठिनाई मद्रास सरकार के साथ पेश आ ी। मद्रास सरकार इसी नदी पर, कन्नमवाड़ी से लगभग ६० मील नीचे, मिट्टूर नामक स्थान पर एक जलाशय के निर्माण की योजना तैयार कर चुकी थी। रियासत की ऊंची वादी में जलाशय बना कर पानी रोक लेने से मद्रास सरकार के जलाशय

के लिए उतना पानी नहीं बचता था जितना कि वह एकत्रित करना चाहते थे। हमारे जलाशय की योजना तैयार हो जाने पर मद्रास सरकार के लिए यह ज़रूरी था कि वह अपनी योजना में आवश्यक परिवर्तन करे, परन्तु कुछ समय तक वह ऐसा करने के लिए तैयार नहीं हुई। तव हमने भारत सरकार के पास अपनी अपील भेजी और वादी के पानी में से अपना उचित हिस्सा प्राप्त करने के लिए डटे रहे। जैसा कि मेरा विश्वास है, भारत सरकार के इंजीनियरों ने भी हमारे इस अधिकार का समर्थन किया। हमने भारत के वाइसराय लार्ड हार्डिंग से अपील की कि हमें बांध के निर्माण का काम शुरू करने को अनुमति दी जाय। वाइसराय ने हमारी अपील मान ली, परन्तु अभी ८० फुट ऊंचा बांध बनाने की ही अनुमति दी। हमने बांध वनाना शुरू कर दिया और नीचे से उसकी चौड़ाई उतनी ही रखी जितनी कि १२४ फुट ऊंचे बांध के लिए ज़रूरी थी। हम जानते थे कि हमारा अधिकार न्यायोचित है और अन्त में हमें बांध वनाने की अनुमति मिल जायगी। तव इस झगड़े का निपटारा करने के लिए एक समिति वनायी गयी और फ़ैसला हमारे पक्ष में हो गया। इस सम्वन्ध में हमें जो समर्थन लार्ड हार्डिग तथा मैसूर के अंग्रेज़ रेजीडेंट सर ह्यू डाली की ओर से प्राप्त हुआ, उसके लिए हम उनके वहुत आभारी हैं।

७ अक्तूवर, १९१६ को मैंने प्रतिनिधि सभा में इस वांध के सम्बन्ध में एक भाषण दिया, जिसमें उन विवादास्पद बातों को स्पष्ट किया गया था जो कि निपटारा समिति के सामने रखी गयी थीं। भाषण का सारांश इस प्रकार है:

> "डेल्टा के निवासियों में, विशेषकर तंजौर और त्रिचिनापल्ली ज़िले के लोगों में पुरस्कार के सम्वन्ध में वड़ा भ्रम फैला हुआ है। अख़बारों में और सार्वजनिक सभाओं में यही शोर मचा हुआ है कि समिति ने पक्षपात-पूर्वक फ़ैसला मैसूर के पक्ष में दे दिया है, जो मद्रास के हितों के लिए घातक है। यह वात जनता में सम्भवतः एक तो इस कारण से फैली कि विवाद तकनीकी क़िस्म का था और दूसरे यह समस्या ही कुछ ऐसी थी कि मद्रास में हो रहे एकतरफ़ा प्रदर्शन का खण्डन पहले नहीं किया जा सकता था।
>
> "इस समय मैसूर के अन्तर्गत कावेरी वादी में नदी द्वारा ११५,००० एकड़ भूमि सींची जा रही है। इसके विपरीत मद्रास प्रेज़ीडेंसी के निचले इलाक़ों में नदी के पानी द्वारा १,२२५,५०० एकड़ भूमि की सिंचाई की जा

रही है। पानी नदी के पानी से सींचा जाने वाला ९२ प्रतिशत इलाका मद्रास प्रेजीडेंसी में पड़ता है और केवल ८ प्रतिशत मैसूर में है। नदी के कुल पानी का तीन चौथाई भाग मैसूर के इलाके में से होकर बहता है, परन्तु जैसा कि बताया जा चुका है, रियासत को इस पानी से जो लाभ पहुंचता है, उसका अनुपात बहुत कम है। नदी का बहुत सा फालतू पानी हर साल बिना किसी काम आये, समुद्र में जा गिरता है। मैसूर की योजना में तो इस फालतू पानी का बहुत थोड़ा हिस्सा काम में लाया जा रहा है।

"मैसूर के जलाशय में जहां ४८०० करोड़ घनफुट पानी जमा करने की तजवीज है, वहां मद्रास सरकार उतने ही स्रवण-क्षेत्र से इससे दुगुने आकार का जलाशय बनाने की योजना तैयार कर चुकी है।

"मैसूर के जलाशय से मैसूर राज्य में पहले से १५०,००० एकड़ अधिक भूमि की सिंचाई होगी, जब कि मद्रास के जलाशय से ३२०,००० एकड़ भूमि में सिंचाई का विस्तार होगा। यह क्षेत्र मैसूर के जलाशय द्वारा सींचे जाने वाले क्षेत्र से दुगने से भी अधिक है।

"ये दो तथ्य कि नदी में पर्याप्त फालतू पानी रहता है और मद्रास सरकार हमसे दुगुने आकार का जलाशय बनाने का विचार रखती है, इस बात का सबूत है कि हमारे जलाशय के निर्माण से मद्रास सरकार के जलाशय में किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़ेगी। इस बात को सब मानते हैं कि मद्रास सरकार को केवल उतना ही जल प्राप्त करने का अधिकार है, जितना कि उसकी जमीनों की सिंचाई के लिए आवश्यक है।"

जब हमने कोलार की सोना खानों के मैनेजिंग एजण्ट मेसर्स जॉन टेलर एण्ड सन्ज को यह वचन दिया कि हम १ जुलाई, १९१५ तक जलाशय का निर्माण पूरा कर देंगे, तो उन्होंने इस बारे में सन्देह प्रकट किया। परन्तु जब यह काम निश्चित समय पर पूरा हो गया और बिजली घर को पानी मिलने लगा तो कम्पनी के व्यवस्थापकों ने महाराज के प्रति बड़ा आभार प्रकट किया।

५ मई, १९११ के दिन मैंने इस योजना के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट दी, वह इस प्रकार है:

"एक बार आरम्भ हो जाने पर इस योजना से राज्य में प्रगति के अनेक रास्ते खुल जायेंगे। लेकिन प्रगति की रफ्तार किसी एक व्यक्ति के

वश में नहीं रहती, बल्कि सरकार की शक्ति और दूरदर्शिता पर निर्भर करती है। इस प्रकार के निर्माण कार्य से राज्य को, परोक्ष आय के रूप में, यदि ३ प्रतिशत का लाभ होता है तो वह भी बहुत है। परन्तु आशा है कि इस योजना के पूर्ण हो जाने पर, राज्य को प्रत्यक्ष आय के रूप में ही काफ़ी लाभ हो जायगा।"

भारत भर में इस जलाशय की कुछ अपनी ही विशेषताएं हैं। यह विशेषताएं इस प्रकार हैं:

१. यह भारत भर में अब तक बने सब जलाशयों से बड़ा है।

नोट: मद्रास सरकार द्वारा इसी नदी पर बनाया गया मिठ्टूर डाम इससे कहीं बड़ा है। परन्तु इसका निर्माण १३ वर्ष बाद आरम्भ हुआ था।

२. कावेरी की बायीं ओर वाली नहर को एक पहाड़ी में, पौने दो मील लम्बी एक सुरंग बना कर, उसमें से गुज़ारा गया है। सिंचाई नहर की यह सुरंग भारत भर में सबसे लम्बी है।

३. कृष्णराज सागर योजना से कई प्रयोजन सिद्ध होते हैं और इसे अमरीका की टी० वी० ए० योजना का ही छोटा रूप समझना चाहिए।

इससे लगभग १००,००० एकड़ भूमि में सिंचाई का विस्तार हुआ है तथा अभी और होगा।

इससे कोलार की सोना खानों को बिजली मिलती है।

इससे बंगलौर, मैसूर तथा राज्य के अनेक गांवों और क़स्बों को घरेलू इस्तेमाल तथा कारखानों के लिए बिजली प्राप्त होती है।

इससे राज्य में गन्ने की खेती बढ़ गयी है और, अधिक बिजली उपलब्ध होने से, चीनी की मिलों को प्रोत्साहन मिला है।

इससे मैसूर तथा बंगलौर की कपड़ा मिलों के अतिरिक्त वहां के अन्य बहुत से उद्योग-धंधों के लिए बिजली प्राप्त हुई है।

४. तीन वर्ष पूर्व मैसूर के चीफ़ इंजीनियर ने, मेरे कहने पर, योजना सम्बन्धी एक आर्थिक रिपोट तैयार की। सारी योजना पर राज्य की ओर से लगभग १० करोड़ रुपया ख़र्च किया गया था। इस योजना द्वारा जनता को लगभग १५ करोड़ रुपये वार्षिक का लाभ हो रहा था

और सरकार को, प्रत्यक्ष तथा परोक्ष आय के रूप में, १ करोड़ रुपये वार्षिक की आमदनी हो रही थी। इस प्रकार सरकार को इस योजना पर लगायी गयी कुल पूंजी पर १५ प्रतिशत लाभ हो रहा था।

अध्याय ७

मैसूर में दीवान के पद पर नियुक्ति

अंग्रेज़ी शासन प्रवन्ध के पचास वर्ष

सन् १८३१ से लेकर १८८१ तक मैसूर, राज्य अंग्रेज़ी प्रशासन के अधीन रहा। तव २५ मार्च, १८८१ के दिन राज्य की वागडोर मैसूर के पैत्रिक राजवंश के हाथों में सौंप दी गयी। तव तक राज्य में वहुत-सी सड़कों तथा ५० मील लम्वी रेलवे लाइन का निर्माण हो चुका था और आधुनिक प्रशासन की वहुत-सी वातें लागू हो चुकी थीं। दूसरे शव्दों में, राज्य के अन्दर एक सुव्यवस्थित शासन प्रवन्ध क़ायम हो चुका था।

सन् १८७६-७८ में मैसूर में भीषण अकाल पड़ा, जिससे राज्य की भौतिक समृद्धि को वड़ा भारी धक्का लगा। रियासत के प्रथम दीवान श्री सी० रंगाचारलु के अनुसार सरकार को अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए १६० लाख रुपये ख़र्च करने पड़े और सरकार पर ८० लाख रुपये का ऋण हो गया। राज्य के दस लाख व्यक्ति इस अकाल का ग्रास वन गये और भौतिक साधनों को वड़ी भारी हानि पहुंची। अकाल के घातक परिणाम के कारण, १८८१ में शासन वदलते समय अंग्रेज़ी प्रशासन द्वारा लायी गयी अच्छाइयों की पूरी-पूरी सराहना नहीं हुई।

भारतीय दीवानों द्वारा शासन प्रवन्ध के तीस वर्ष

सन् १८८१ के पश्चात् राजवंश के महाराजा या महारानी के अधीन भारतीय दीवान राज्य का शासन प्रवन्ध वड़ी लगन और कुशलता से चलाते रहे। इसके साथ साथ उन्होंने प्रगतिवादी दृष्टिकोण अपना कर राज्य के कुछ विभागों में कई प्रकार के सुधार तथा परिवर्तन किये।

भारतीय राजाओं के शासन काल में रियासत में जो-जो महत्त्वपूर्ण सुधार तथा निर्माण कार्य किये गये, वे इस प्रकार हैं:

दीवान सी० रंगाचार्लू के समय मे प्रतिनिधि सभा की स्थापना की गयी। दीवान सर के० शेषाद्रि अय्यर के समय में शिवसमुद्रम् पर कावेरी के पानी द्वारा बिजली पैदा करने की योजना तैयार हुई, मारीकानव पर जलाशय का निर्माण हुआ और कावेरी, काविनी तथा हेमावती की वादियों मे सिंचाई के लिए नहरें बनायी गयी। बंगलौर तथा मैसूर के नगरों में बहुत-से सुधार करके उनका विस्तार किया गया। सन् १८८१ तक २५ लाख रुपये की लागत से ५० मील लम्बी रेलवे लाइन का निर्माण किया गया था। सन् १९१०-११ तक यह लाइन बढ़ा कर ४११ मील लम्बी कर दी गयी और इस पर कुल २५० लाख रुपए खर्च हुए। इन ३० वर्षों मे राज्य की सड़कें भी पहले से दुगुनी हो गयी।

सन् १९०७ मे जब श्री वी० पी० माधव राव मैसूर के दीवान थे, तब राज्य मे विधान परिषद् की स्थापना की गयी।

मैसूर प्रतिनिधि सभा मे मैंने अपने प्रथम भाषण मे जो आंकड़े पेश किये, वह उल्लेखनीय हैं। *रियासत की जन-संख्या, जो १८७१ मे ५,०५५,४०२ थी, अकाल* पड़ने के कारण १८८१ मे ४,१८६,१८८ रह गयी। सन् १९११ मे इस मे पुन. वृद्धि हो गयी और यह ५,८०६,१९३ तक पहुँच गयी। यह वृद्धि इसलिए हुई कि अकाल के दिनों मे जो लोग घरबार छोड़ कर दूसरे इलाकों में चले गये थे, वे रियासत की हालत सुधरने पर अपने घरों को वापस आ गये।

कस्बों की आबादी जो कि १८८१ मे १३ प्रतिशत थी, संभवत: कस्बों में लोगों को काम-धंधा न मिलने के कारण १९११ मे ११ प्रतिशत रह गयी।

खेती-बाड़ी पर निर्वाह करने वाले लोगों की संख्या, जो १८८१ मे ३३ लाख थी, बढ़ते-बढ़ते १९११ मे ४२ लाख तक पहुंच गयी। जहां तक खेती-बाड़ी का सम्बन्ध है, बाकी उत्पादन को छोड़ कर १८८१-८२ में ४,२१३,५०५ एकड़ भूमि मे जोताई होती थी और १९११-१२ मे ७,४३८,४६३ एकड़ भूमि मे होने लगी थी। यानी खेती मे ७९ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् १८८१ के पश्चात् खेतों में विस्तार अवश्य हुआ है, पर अधिक उत्पादन पर बल नहीं दिया गया।

रियासत का कुल राजस्व, जो पिछली शताब्दी के आरम्भ में ५० लाख रुपये के करीब था, १८८०-८१ मे १०१ लाख रुपये हो गया और १९१०-११ में २४७ लाख रुपये तक जा पहुंचा, जिसमे सोना खानों से प्राप्त होनेवाली आय भी शामिल

थी। इसी प्रकार रियासत का ख़र्च भी पहले से दुगना हो गया था। सन् १८-८०-८१ में यह २२३ लाख रुपये तक पहुंच गया।

राज्य में शिक्षा पर होनेवाला खर्च, जो कि १८८०-८१ में ३,९१,०२८ रुपये था, १९१०-११ में १८,७९,१३५ रुपये हो गया और स्कूलों में जानेवालों की संख्या, जो कि १८८०-८१ में ५३,७८२ थी, १९१०-११ में १३८, १५३ तक पहुंच गयी।

राज्य में कुछ छोटे-बड़े उद्योग जिनमें कोलार की सोना खानें तथा शिमोगा की मैंगनीज़ खानें और कुछ कपड़े की मिलें शामिल थीं, आरम्भ हो चुके थे। परंतु इनमें से अधिकांश किसी भी स्थानीय उद्यम से सम्बन्धित नहीं थे और इनसे लोगों की तकनीकी कुशलता या सहकारी उद्यम की प्रगति का प्रमाण न मिलता था।

मेरे दीवान पद ग्रहण करने के समय मैसूर की स्थिति

नवम्बर १९१२ में महाराज ने टी० आनन्दराव के पश्चात् मुझसे दीवान का पद संभालने को कहा। यद्यपि मेरी यह तीव्र इच्छा थी कि उद्योग, शिक्षा तथा अन्य विकासकार्यों द्वारा मुझको देश और जनता की आर्थिक स्थिति सुधारने का मौक़ा मिले, परंतु इस प्रकार के किसी भी उच्च पद को ग्रहण करने की इच्छा कदापि नहीं थी। रियासत में मुख्य इंजीनियर का पद संभालने के पूर्व भी मैंने यही इच्छा प्रकट की थी कि तकनीकी शिक्षा के प्रसार और उद्योग-धन्धों का विकास करने के अवसर मुझको मिलने चाहिए। इस वार भी महाराज से मैंने यही कहा कि यदि मुझको विकास विभाग की परिषद में सदस्य नियुक्त कर दिया जाय तो मेरे लिए वही काफ़ी होगा। इससे मुझे राज्य के अन्दर शिक्षा प्रसार, उद्योग विकास तथा लोकहित के अन्य कार्य करने के अवसर प्राप्त होंगे। पर महाराज इस वात के लिए सहमत नहीं हुए। उनका आग्रह यही था कि मैं दीवान के पद को स्वीकार कर लूं। ख़ैर, तो उस पद को ग्रहण करने में मुझे वड़ा हर्ष हुआ, क्योंकि इस पर कार्य करते हुए मुझे लोगों की सेवा करने के वहुत से अवसर प्राप्त हुए। मेरे कार्य भार संभालने के तुरन्त वाद, मैसूर इंजीनियर मण्डल ने ३० नवम्बर, १९१२ को, एक सभा बुला कर मुझे मान-पत्र भेंट किया। श्री वी० पी० माधव राव सभा के अध्यक्ष थे। मानपत्र के उत्तर में मैंने जो भाषण दिया, उसका सारांश इस प्रकार है:

"मैंने देखा है कि आपने अपने मानपत्र में मेरे लिए इससे भी अधिक

मान और समृद्धि की कामना की है। आप जानते ही होंगे कि मेरी सदा यही इच्छा रही है कि मुझे काम करने के अधिक से अधिक अवसर प्राप्त हों। पिछले कुछ वर्षों मे मैंने जो कुछ भी किया है वह व्यक्तिगत लाभ के लिए या अपने पद की उन्नति के लिए नहीं किया। महाराज ने कृपापूर्वक जो महत्त्वपूर्ण काम मुझे सौंपा है उसमें उस कार्य की तमाम गुजाइश है जिसकी मुझे हमेशा चाह रही है।"

अब तक रियासत के इस पद पर आई० सी० एस० अफसर काम करते रहे थे और अब इस पद पर एक इंजीनियर की नियुक्ति होने के कारण सरकारी क्षेत्रो मे बड़ा आश्चर्य प्रकट किया गया। परन्तु मैसूर की जनता ने इस बारे मे किसी प्रकार की हैरानी प्रकट नही की। जब मैंने इस पद का कार्य संभाला तो राज्य की जिन-जिन कमियो की ओर मेरा ध्यान गया, वह इस प्रकार हैं :

शिक्षा का निम्नस्तर,

कार्य आरम्भ करने की लगन तथा संगठन शक्ति की कमी,

प्रमुख अधिकारियो में योजना बना कर कार्य करने की अक्षमता,

निम्नस्तर की अर्थव्यवस्था जिसे सुधारने के लिए किसी प्रकार का प्रयत्न नहीं किया जा रहा था।

मेरा सब से मुख्य लक्ष्य यही था कि शिक्षा, उद्योग तथा वाणिज्य और लोक-निर्माण कार्यों के विकास को प्रोत्साहन दिया जाय, जिससे लोगों को काम मिले, उनकी कमाई मे वृद्धि हो और उनका जीवनस्तर ऊंचा उठे। शीघ्र ही राज्य के अधिकारियो तथा जनता का ध्यान उनके जीवनस्तर की कमियों की ओर आकृष्ट किया गया और आवश्यक सुधार तथा विकास के लिए वही तरीके अपनाने के सुझाव दिये गये जो जापान, पश्चिम यूरोप तथा अमरीका जैसे देशो में अपनाये जा रहे हैं और जिन का अध्ययन मैंने इन देशों की यात्रा के दौरान मे किया। इन सब बातो की चर्चा मैंने अक्तूबर, १९१३ में प्रतिनिधि सभा मे दिये गये अपने प्रथम भाषण में ही की। भाषण इस प्रकार है.

"आजकल रेलवे ट्रामवे या अन्य लोकोपयोगी कार्यों का निर्माण करने मे किसी प्रकार की कठिनाई नहीं रह गयी, क्योंकि इन कामों के लिए कुशल विदेशी एजेंसियो की सहायता प्राप्त की जा सकती है। यदि हम उचित

प्रतिफल देने का जिम्मा लें तो विदेशी पूंजी प्राप्त हो सकती है। लोक सेवाओं के कार्य को चलाने के लिए योग्य भारतीय या विदेशी व्यक्तियों की सेवाएं भी प्राप्त हो सकती हैं, क्योंकि ऐसे बहुत से लोग नौकरी की तलाश में रहते हैं। मैं समझता हूँ कि विदेशी एजेंसियों की सहायता का स्वागत होना चाहिए, क्योंकि उनके अपने हित के साथ हमारा हित भी जुड़ा हुआ है। लेकिन पूर्ण रूप से विदेशी सहायता द्वारा शुरू किये जानेवाले बड़े-बड़े कामों से न हमारा सामर्थ्य बढ़ेगा और न हमारे देश की सामाजिक स्थिति में सुधार होगा। और जब तक राज्य के लोगों की सूझ-बूझ और राज्य के प्राकृतिक साधनों तथा पूंजी को एक साथ काम में नहीं लाया जाता, तब तक स्थायी रूप से प्रगति नहीं हो सकती।

"हमारी वर्तमान आर्थिक स्थिति में कुछ ऐसी बातें भी हैं जिनके प्रति हमें सतर्क रहना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि राज्य में पिछले ३० वर्षों में काफ़ी प्रगति हुई है, परन्तु यह प्रगति हमारे संगठित प्रयत्नों से नहीं हुई, बल्कि यह तो व्यापक प्रगति है जिसका रूप सारे भारत में दिखायी दे रहा है।

"राज्य के प्रत्येक सोलह व्यक्तियों में से केवल एक व्यक्ति ऐसा है जो पढ़ लिख सकता है। जब खेतों में काम के दिन होते हैं, तब भी किसान लोग पूरी तरह से व्यस्त नहीं रहते और जब किसी कारण से फ़सलें ख़राब हो जाती हैं तो वे महीनों हाथ पर हाथ रखे बिना काम-धंधे के बैठे रहते हैं। राज्य के तीन चौथाई लोग खेती-बाड़ी पर निर्भर रहते हैं और उनमें से अधिकांश गांवों में रहते हैं। गांवों के इन लोगों के पास कुछ करने-धरने के लिए नहीं है और इनका जीवन घर की चारदीवारी तक ही सीमित है। हमारे किसानों के पास थोड़ी-थोड़ी ज़मीनें हैं, व्यापार छोटे पैमाने पर किया जाता है। हर कोई अपना अलग धंधा लिये बैठा है। समाज के उच्चवर्ग ने भी संगठन और सहकारिता के पाठ को सीखने का प्रयास नहीं किया।

"शासन प्रबन्ध बदलने के बाद रियासत के प्रथम दीवान श्री रंगाचार्लु ने भी, जो १८७६-७८ में अपनी आंखों से रियासत को अकाल का ग्रास बनते देख चुके थे, इन सब बातों की ओर हमारा ध्यान दिलाया था। सन् १८८१ में उन्होंने इस सभा में भाषण देते हुए उद्योग विकास पर बड़ा बल दिया था और कहा था कि कोई भी देश तब तक समृद्धिशाली नहीं बन सकता

जब तक कि उस देश की कृषि और निर्माण उद्योग साथ-साथ नहीं पनपते। उनका यह कहना था कि जब बाकी सारा संसार दिन दुगुनी रात चौगुनी तरक्की कर रहा है तो इस देश की ३० करोड़ जनता अपनी चिरनिद्रा में ज्यादा देर तक नहीं पड़ी रह सकती। जब तक हम लकीर के फकीर बने रहेंगे तब तक यह फस्ताहाली हमारा पीछा नहीं छोड़ेगी और अकाल जैसे किसी भी संकट की पहली चोट ही हमें कुचल देने के लिए काफी होगी।"

"३० वर्ष पूर्व कहे गए इन शब्दों में आज भी उतनी ही सचाई है जितनी कि पहले थी, और यदि हम अपनी हालत को सुधारने का प्रयत्न नहीं करते तो ३० वर्ष बाद भी इनकी सच्चाई कम नहीं होगी।

"हमें लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने और उनमें सामर्थ्य पैदा करने के लिए उन्हें स्वावलम्बी बनाना है, उन्हें साहस का पाठ पढ़ाना है ताकि वे लकीर के फकीर न बने रह कर नव-निर्माण के लिए उठ खड़े हों और संगठन तथा सहकारिता की भावना से प्रेरित होकर एक हो जाएं।"

"आर्थिक सम्मेलन नामक संस्था ने राज्य के लोगों में सहकारिता का उचित क्षेत्र तैयार किया है, भले ही संस्था का काम ठीक ढंग से नहीं हो पा रहा। कोई भी व्यक्ति जिसने पश्चिम के विकसित देशों में शिक्षा और उद्योग धंधों को बड़ी तेजी से विकास होते देखा है, व्यापार की प्रतियोगिता के साथ पनपते देखा है, इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति प्रकट किये और सहयोग दिये बिना नहीं रह सकता।"

"यह संस्था शहरों, कस्बों और फिर धीरे-धीरे गांवों में भी, सहकारी आन्दोलन को प्रोत्साहन देने के लिए बनाई गई है। चूंकि हमारे राज्य में ९० प्रतिशत लोग अब भी गावों में बसते हैं, इसलिए मैं समझता हूँ कि गांवों की अर्थव्यवस्था में सुधार करने के लिये विशेष रूप से प्रयत्न करने पड़ेंगे।"

"आर्थिक विकास के लिये एक गांव को इकाई मान कर वर्ष भर में हुई प्रगति का अनुमान बड़ी आसानी से लगाया जा सकता है। यदि हर एक गांव तरक्की के रास्ते पर कुछ आगे बढ़ता है तो सामूहिक रूप से होने वाली प्रगति काफी सन्तोषजनक होगी। जिस गांव में ५ से १० प्रतिशत नर लोग पढ़े लिखे नहीं होंगे उस गांव की शिक्षा का स्तर अच्छा नहीं कहा जा सकता। प्रत्येक गांव में देहाती पाठशालाओं के एक-दो अच्छे समाचार-प

नियमित रूप से मंगा कर पढ़े जाने चाहिए, ताकि लोगों को वाहिरी दुनियां के वारे में भी जानकारी प्राप्त होती रहे। गांव के प्रत्येक कुटुम्व के पास इतना अनाज या धन जमा रहना चाहिए कि यदि कभी अकाल पड़ जाए तो वह इस अनाज या धन के सहारे कम-से-कम दो वर्ष काट सकें। प्रत्येक किसान कुटुम्व को कोई-न-कोई सहायक धंधा अपनाना चाहिए, ताकि जब खेतों में काम के दिन न हों या कोई आड़ा वक्त आ पड़े, तो वे अपना निर्वाह भली-भाँति कर सकें। हर एक गांव के वासियों को चाहिए कि प्रगति की किसी न किसी दिशा में क़दम वढ़ा कर वे हर साल सामूहिक विकास में अपना योग दें।"

"हर एक गांव में साल भर में हुई आर्थिक प्रगति का आवश्यक लेखा-जोखा साल में एक वार प्रकाशित किया जाना चाहिए।"

रियासत के दीवान के रूप में कार्य करते हुए मेरी नौकरी के छः वर्ष के दौरान मेरी हर तरह से यही कोशिश रही कि जो भी विकास कार्य किया जाय, वह योजना के अनुसार हो और उसके लिए एक स्तर निश्चित कर दिया जाए। यद्यपि शिक्षा और उद्योग को प्राथमिकता दी गई थी, तथापि राष्ट्रीय जीवन के अन्य पहलुओं की उपेक्षा न कर के राज्य में उपलब्ध साधनों के अनुसार उन के विकास की ओर भी पूरा-पूरा ध्यान दिया गया था।

दुर्भाग्यवश मेरे कार्य संभालने के २१ महीने बाद अगस्त, १९१४ में प्रथम महायुद्ध छिड़ गया और दिसम्बर, १९१८ तक, जब तक कि मैं रियासत का दीवान रहा, युद्ध का अन्त नहीं हुआ।

महाराज ने रियासती सेना देकर तथा समस्त साधनों द्वारा अंग्रेज़ी सरकार की हर तरह से सहायता की। इसके अतिरिक्त महाराज ने भारतीय सेना के ख़र्चे के लिये ५० लाख रुपये नक़द दिये। इस भेंट को पेश करते हुए २० अगस्त, १६१४ के एक पत्र में महाराज ने भारत के वाइसराय को लिखा :

"मैं आप को यह आश्वासन दिलाना चाहता हूँ कि रियासत की राज-भक्त प्रजा अपनी सरकार के लिए हर प्रकार की कुर्वानी देने और साझे हितों की रक्षा के लिए तैयार है।"

महामहिम वाइसराय ने उत्तर में एक वहुत ही प्रशंसा भरा पत्र लिखा, जो इस प्रकार है :

"इस समय तो मैं केवल इतना ही कहूंगा कि आप जैसे मित्र की राज-भक्ति तथा देशभक्ति से मेरा मन अत्यधिक प्रसन्न हुआ है।"

महायुद्ध के परिणामस्वरूप राज्य में होने वाले बहुत से महत्वपूर्ण विकास-कार्यों को विशेषकर औद्योगिक विकास को बड़ा भारी धक्का लगा। इस सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी अगले कुछ खण्डों में प्रस्तुत की गई है कि युद्ध की स्थिति में क्या कुछ करने का प्रयास किया गया और उस में कहां तक सफलता प्राप्त हुई। यह सब विवरण कुछ लम्बे जरूर हैं, परन्तु इनसे पता चलता है कि उस समय महायुद्ध के कारण शासन प्रबन्ध चलाने तथा विकास व सुधार कार्य करने के लिये मार्ग में कौन-कौन-सी कठिनाइयां पेश आईं।

रियासत राजनीतिक दृष्टि से भारत के साथ मिला दी गई हैं और यद्यपि वह भारत के लोकतन्त्र का ही भाग है, फिर भी उनकी जो प्रतिष्ठा अंग्रेजी शासन काल मे थी, सो अब नही है। आशा है कि नये प्रजातन्त्र के क्रमिक विकास मे यह केवल थोड़े दिनों की ही बात है।

६ नवम्बर, १९१३ के दिन मैसूर मे भाषण देते हुए लार्ड हार्डिंग ने सधि के बारे में निम्नलिखित विचार प्रकट किये :

"जितनी खुशी मुझे आज इस घोषणा को आप के सामने पेश करने में हो रही है, मेरा ख्याल है कि उसे सुनकर महाराज भी उतने ही खुश होंगे। लगभग चार मास पूर्व महाराज आपने मुझे एक पत्र लिखा था, जिसमे आपने सन् १८८१ के "इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ ट्रान्सफर" के कुछ अंशों पर आपत्ति की थी जिसके अनुसार मैसूर का शासन-प्रबन्ध महाराज के पिता को सौंपा गया था। आपने इस बात की ताकीद की कि इस दस्तावेज के रूप और सार मे इस तरह का परिवर्तन किया जाए, जिससे अंग्रेजी सरकार तथा रियासत के बीच सबंधो का और अधिक स्पष्टीकरण हो जाए। इस प्रश्न पर काफ़ी सोच विचार करने के पश्चात् मैंने भारत सरकार के सचिव के साथ मिल कर यह निर्णय किया है कि 'इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ ट्रान्सफर' को रद कर के उसके बदले एक नई सधि पर समझौता किया जाय, जिससे अंग्रेजी सरकार के मैसूर राज्य के साथ वैसे ही सम्बन्ध स्थापित हो जाएं, जैसे कि दूसरी रियासतों के साथ हैं। सरकार ने मेरी तजवीज़ को स्वीकार कर लिया और यह देखा कि इस प्रश्न पर महाराज के विचार बड़े प्रभावशाली ढंग से सरकार के सामने रखे गए थे। महाराज के उच्च चरित्र तथा उनकी प्रसिद्धि ने उन्हें और भी प्रभावशाली बना दिया। मैं इन बातों से पूर्णतया सहमत हूँ और मुझे इसकी बड़ी खुशी है कि इस शुभ अवसर पर आप को यह बताने के लिए मुझे भेजा गया कि इस विशाल साम्राज्य के उच्चाधिकारियों की दृष्टि मे आपका कितना मान है।"

अंग्रेजी सरकार के साथ सधि हो जाने के पश्चात् २२ नवम्बर, १९१३ के दिन महाराज ने मुझे एक पत्र लिखा, जिसमे उन्होंने नई संधि तैयार करने के लिए मेरे द्वारा दिये गए सहयोग की चर्चा की। यह पत्र मेरे प्रति महाराज की उदारता को प्रकट करता है। पत्र मे लिखा था:

"वाइसराय का दौरा समाप्त होने के पश्चात् मुझे अवसर मिला है कि

प्रतिनिधि सभा में सुधार

रियासत में प्रतिनिधि सभा की स्थापना १८८१ में हुई थी। उस समय मैसूर की राजगद्दी पर महाराज चामराज वाडियार बहादुर विराजमान थे और श्री सी० रंगाचार्लू जैसे देशभक्त तथा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ रियासत के दीवान थे। प्रतिनिधि सभा के अधिकार केवल सरकार के पास प्रार्थनाएं लेकर जाने तक ही सीमित थे और मेरे कार्य संभालने तक सभा के अधिकारों में कोई वृद्धि नहीं हुई थी।

आधुनिक प्रजातन्त्र की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए इस बात का निश्चय किया गया कि प्रतिनिधि सभा को कुछ ठोस अधिकार दिए जाएं। इस बारे में महाराज की अनुमति प्राप्त करके ११ अक्तूबर, १९१३ के दिन सभा की पहली ठक में मैंने जो भाषण दिया, वह इस प्रकार है:

"यह उचित होगा कि प्रतिनिधि सभा के निर्माण, इस अधिवेशन में सदस्यों का चुनाव करने के तरीक़ों तथा उसके अधिकारों व काम करने की विधियों पर विचार किया जाए। यदि सदस्य इन प्रश्नों पर विचार-विमर्श

करके इस बारे में अपना-अपना मत प्रकट करें, तो उन सबके विचारों को महाराज के सामने रखा जाएगा।"

तब जो निर्णय हुआ उसके अनुसार सभा को रियासत के बजट पर बहस करने की अनुमति दे दी गई। इस उद्देश्य के लिए मैसूर की भाषा कन्नड़ में एक संक्षिप्त बजट प्रकाशित कर उसकी प्रतियां प्रकाशित कर सदस्यों में बांट दी गई।

उन दिनों दशहरा होने के कारण सितम्बर और अक्तूबर में सभा का केवल एक ही अधिवेशन हो सका और बजट की मंजूरी उसके बाद दी गई। बजट स्वीकृत होने से पूर्व सदस्यों को उस पर बहस करने का अवसर देने के लिए सभा का दूसरा अधिवेशन बुलाया गया। इस प्रकार का पहला अधिवेशन २३ अप्रैल, १९१७ को हुआ था। सभा को विधान परिषद् के लिए दो की बजाय चार सदस्यों का चुनाव करके भेजने का अधिकार भी दिया गया। बाद में चुनाव के लिए खड़े होने वाले सदस्यों तथा मतदाताओं की योग्यताओं में भी कमी कर दी गई।

विधान परिषद में सुधार

जैसा कि पहले बताया जा चुका है विधान परिषद् का आरम्भ १९०७ में हुआ, जब कि श्री वी० पी० माधवराव रियासत के दीवान थे। परिषद् में १५ से १८ तक सरकारी तथा गैरसरकारी मनोनीत सदस्य हुआ करते थे जिनमें से केवल दो सदस्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निर्वाचित किए जाते थे। परिषद् का सब से महत्वपूर्ण काम रियासत का विधान बना कर, उस पर बहस करके उसे लागू करना था। विधान परिषद् की रचना तथा उसके अधिकारों में भी बहुत कुछ परिवर्तन किए गए। परिषद् के सदस्यों की संख्या १८ से बढ़ा कर २४ कर दी गई। इनमें से चार सदस्य प्रतिनिधि सभा द्वारा चुने जाते थे, चार सदस्य ज़िलों के चुनाव हलकों के होते थे, दस सदस्य सरकारी होते थे और छः मनोनीत सदस्य होते थे। निर्वाचित सदस्यों की संख्या दो से बढ़ा कर आठ कर दी गई।

परिषद् के अधिकारों को बढ़ा दिया गया और उन्हें बजट पर बहस करने की छूट भी दे दी गई। आरम्भ में यह अधिकार सीमित थे, परन्तु बाद में सदस्यों को पूरक प्रश्न करने का अधिकार भी दे दिया गया।

आजकल की स्थिति को देखते हुए इन सुधारों का कुछ भी महत्व नहीं रह

जाता, परन्तु यह उस समय की स्थिति के अनुसार प्रगति की राह पर काफ़ी महत्त्व-पूर्ण क़दम कहे जा सकते हैं और इस समय इनका बड़ा महत्त्व था।

शासन प्रबन्ध में सुधार

सबसे पहले राज्य के शासन प्रबन्ध तथा न्याय प्रबन्ध को अलग-अलग करने का काम हाथ में लिया गया। अंग्रेज़ी शासन काल में इस विषय पर बहुत समय तक वाद-विवाद चलता रहा, परन्तु लोगों की स्वतन्त्रता के लिए इन दोनों प्रबन्धों का अलग-अलग होना आवश्यक माना जाता था। शुरू-शुरू में केवल दो ज़िलों में ही इस प्रणाली को अपना कर देखने का निश्चय किया गया और इसकी व्यवस्था मेरे रियासत में होते हुए ही कर ली गई। परन्तु १ जनवरी, १९१९ को लागू किया गया, जब कि मुझे अवकाश प्राप्त किए कुछ सप्ताह हो चुके थे।

इस योजना की सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि रियासत के राजस्व अफ़सरों से न्यायिक अधिकार छीन कर इस काम के लिए अलग न्यायाध्यक्ष नियुक्त कर दिए गए। राजस्व अफ़सरों तथा अमिलदारों को फौजदारी मुक़दमों के फ़ैसले नहीं करने दिए जाते थे। परन्तु राज्य में शान्ति की स्थापना के लिए उन्हें न्याया-ध्यक्षों के अधिकार प्राप्त थे। ज़िलाधीशों के स्थान पर डिप्टी कमिश्नरों को ही कार्य करने दिया गया। संविधान तथा स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के कार्यों पर विचार करने के लिए तथा आय के स्रोतों का सुधार करने के लिए दो समितियों की स्थापना की गई। इस प्रश्न पर विचार किया गया और स्थानीय स्वायत्त शासन को पुनर्गठित करने के लिए आवश्यक क़ानून बना दिए गए। इस योजना का प्रयोजन नगर पालिकाओं के निर्वाचन तत्व तथा स्थानीय मंडलों को सुचारु ढंग से स्थानीय प्रशासन चलाने के लिए अधिक अधिकार देना तथा उनकी आय के साधनों में वृद्धि करना था तथा इन संस्थाओं को वास्तव में ऐसा बनाया जाय, जो ज़िम्मेदार हों तथा अपना स्थानीय प्रबन्ध करने की क्षमता हो।

नगर पालिकाओं को उनकी जन संख्या के अनुसार तीन श्रेणियों—नगरों, क़स्बों तथा छोटी जगहों की नगरपालिकाओं में बांट दिया गया और शहरों के लिए निर्वाचित तत्व कम-से-कम दो तिहाई, नगरों के लिए आधा तथा क़स्बों के लिए एक तिहाई निश्चित कर दिया गया। कुछ खास नगरपालिकाओं के अध्यक्षों

तथा बहुत-सी नगरपालिकाओं के उपाध्यक्षों का चुनाव होता था। बंगलोर नगरपालिका को अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया।

ज़िला मंडलों में निर्वाचित सदस्यों की संख्या कुल सदस्य संख्या से दो तिहाई कर दी गई और तालुक मंडलों में यह संख्या कम-से-कम आधी कर दी गई। इन दोनों मंडलों को स्वतन्त्र रूप से पैसा इकट्ठा करने तथा खर्च चलाने के अधिकार दे दिए गए।

ग्राम मंडलों के स्थापना तथा व्यय संबंधी अधिकारों में वृद्धि कर दी गई तथा अपने-अपने क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा, औषधालय तथा पशु चिकित्सालयों का नियन्त्रण भी उन्हीं के हाथ सौंप दिया गया।

डिप्टी कमिश्नरों को ज़िला मंडलों के अध्यक्ष पद से हटा दिया गया और जहां तक हो सका, उनकी जगह पर अन्य गैर सरकारी लोगों को नियुक्त कर दिया गया। नई स्कीम में गांव को महत्ता दी गई, ताकि ये लाछन हटाये जा सकें कि स्थानीय संस्थान ऊपर से बनाए जाते हैं। यह तजवीज भी रखी गई कि धीरे-धीरे ज़िला मंडलों के अधिकारों को बढ़ा कर उन्हें ज़िला का सामान्य शासन-प्रबन्ध चलाने योग्य बना दिया जाए, जैसे कि इंगलैण्ड तथा अन्य देशों की ज़िला परिषदों में होता है।

मैसूर में आर्थिक सम्मेलन

आर्थिक सम्मेलन का काम तभी आरंभ हो गया था, जब मैं मैसूर का चीफ इंजीनियर था। इस सम्मेलन की तीन समितियों—कृषि, वाणिज्य व उद्योग तथा शिक्षा का और अधिक विस्तार किया गया। इन समितियों तथा विभिन्न सरकारी विभागों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए सरकार की ओर से एक सचिव नियुक्त कर दिया गया।

रियासत के आर्थिक साधनों के सर्वेक्षण के लिए एक अफसर नियुक्त किया गया और इस सम्बन्ध में एक बड़ी ही विस्तृत तथा लाभदायक रिपोर्ट प्रकाशित की गई।

जब आर्थिक सम्मेलन का काम बहुत बढ़ गया तो प्रत्येक ज़िले में एक अधीक्षक नियुक्त कर दिया गया। ये अधीक्षक डिप्टी कमिश्नरों तथा ज़िला समितियों को

सूचना प्रसार के काम में हाथ वटाने तथा अन्य स्थानीय उद्योग धंधों तथा योजना कार्यों में लोगों को व्यावहारिक सहायता देने के लिए नियुक्त किए गए थे। रियासत के आठों ज़िलों की स्थिति तथा उनकी आवश्यकताओं के वारे में एक आर्थिक रिपोर्ट पुस्तिका रूप में प्रकाशित की गई।

आर्थिक सम्मेलन का अधिवेशन हर साल हुआ करता था और उसकी अध्यक्षता रियासत के दीवान किया करते थे। इन अधिवेशनों में सम्मेलन द्वारा साल भर में किए गए विकास कार्यों पर विचार किया जाता था और आगामी वर्ष के कार्य की रूपरेखा तैयार की जाती थी।

सम्मेलन समितियां अपने-अपने कार्यक्षेत्र की वहुत-सी समस्याओं पर विचार करती थीं और आर्थिक विकास के लिए नई योजनाएं बनाती थीं। समितियों ने मैसूर वैंक स्थापित करने, मैसूर विश्वविद्यालय क़ायम करने, प्राथमिक शिक्षा का प्रसार करने, अनिवार्य शिक्षा लागू करने तथा अन्य सांस्कृतिक व औद्योगिक योजनाएं लागू करने के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया। इसके अतिरिक्त समितियों ने कन्नड़ साहित्य अकादमी की, जो कि कन्नड़ भाषा में वैज्ञानिक साहित्य रचना के लिए वनाई गई थी, स्थापना के प्रश्न पर विचार किया।

जैसा कि मैं पहले वता चुका हूँ महाराज ने यह निर्णय किया कि आर्थिक सम्मेलन को रियासत में एक स्थायी संस्थान के रूप में काम करने दिया जाए।

कार्य-कुशलता की जाँच

सरकारी महकमों में कार्य-कुशलता तथा अनुशासन को वनाए रखने के लिए 'कार्य-कुशलता की जांच' प्रणाली लागू की गई। इस प्रकार की जांच करने की ज़रूरत क्यों थी? अक्तूबर, सन् १९१३ को प्रतिनिधि सभा में भाषण देते हुए इस जांच पड़ताल की आवश्यकता को मैंने अपने भाषण में इन शब्दों में वताया :

> "हमारे राज्य में जहां सरकारी महकमों में यूरोपियन ढंग से काम-काज चलता है और काम करने वाले अभी यूरोपियन ढंग की आदतों को नहीं अपना पाये, वहां हिसाव-किताव की जांच की तरह कार्य-कुशलता की जांच भी वड़ी ज़रूरी है।"

"कार्य-कुशलता जाँच" की शाखा ने, जो कि सचिवालय में खोली गई थी,

सरकारी दफ्तरों के काम को व्यवस्थित कर के बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया। इसने कई दफ्तरों के काम-काज के बारे में नियम बनाए और दफ्तरी नियमावलियां को तैयार कर के विभिन्न दफ्तरों में भेजने और समय-समय पर उनका संशोधन करने के लिए एक विस्तृत योजना बनाई। दफ्तरों के निरीक्षणों को प्रामाणिकता दी गई और सरकारी अभिलेखों को ठीक ढंग से रखने के सम्बन्ध में नियम बनाए गए। सरकारी काम में कहीं भी कोई गड़बड़ नजर आने पर इस शाखा के अफसर जांच के लिए तुरन्त वहां भेज दिये जाते। कार्य-कुशलता जांच शाखा एक त्रैमासिक पत्रिका "ब्लू बुक जनरल" भी प्रकाशित करती थी, जिसमें सरकारी सूचनाएं तथा सरकारी कर्मचारियों के काम में आने वाली अन्य तकनीकी बातें भी रहती थी।

राज्य सरकार द्वारा जब कभी भी कोई सराहनीय कार्य किया जाता, महाराज उसकी प्रशंसा किये बिना न रहते। २४ जुलाई, १९१४ को उन्होंने मुझे एक व्यक्तिगत पत्र लिखा जो इस प्रकार है:

> "मुझे यह बात आप पर प्रकट करने में जरा भी झिझक महसूस नहीं होती कि जितनी खुशी और मानसिक शान्ति का अनुभव मैंने पिछले २१ महीनों में किया है, उतना सन् १९०२ से कभी नहीं किया था। यह सब आपकी योग्यता और कार्य-कुशलता के कारण ही है। मुझे आशा है कि भविष्य में भी बहुत दिनों तक आपका सहयोग प्राप्त होता रहेगा।"

अध्याय ९

शिक्षा प्रसार तथा मैसूर विश्वविद्यालय

प्रतिनिधि सभा में मैंने जो भाषण दिये, उनके अनुसार राज्य में सहकारी दृष्टि-कोण से जिन बातों की सब से अधिक ज़रूरत थी, उन्हें तीन मुख्य श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

१. उत्पादन बढ़ाना और लोगों की उपार्जन शक्ति को बढ़ा कर उनके जीवन स्तर को ऊंचा उठाना।

२. जनता के सब वर्गों में शिक्षा तथा ज्ञान का प्रसार करना।

३. लोगों में स्वावलम्बन, सहयोग तथा उद्यम की भावना उत्पन्न करना।

जैसा कि मैंने प्रतिनिधि सभा में अपने २२ अप्रैल, १९१८ के भाषण में कहा, ऊपर बताये तीन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्न किये गए और उनमें सफलता भी प्राप्त हुई।

जिन दो विकास कार्यों—उद्योग तथा शिक्षा पर मैंने सब से अधिक बल दिया उनमें शिक्षा के प्रसार को प्राथमिकता दी गई थी। उद्योग विकास को युद्ध छिड़ जाने के कारण सरकार तथा मैसूर के व्यापारियों की ओर से पूरा-पूरा सहयोग नहीं मिल सका। इसके अतिरिक्त विदेशी निर्माताओं का सहयोग भी प्राप्त नहीं हो सका।

पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा शिक्षा को जो महत्व दिया जा रहा था, अपनी विदेश यात्राओं के दौरान में मैं उनसे बड़ा प्रभावित हुआ। मुझे तो इस बात का पूर्ण विश्वास हो गया कि मैसूर की आर्थिक हीनता का सब से बड़ा कारण शिक्षा की उपेक्षा ही है। इस दिशा में मैं उन्नीसवीं सदी के अन्त में की गई अपनी जापान यात्रा के समय सब से अधिक प्रभावित हुआ था। जापानी नेताओं ने यह महत्व जान लिया था कि शिक्षा ही सारी प्रगति का आधार है। जापानी शिक्षा विभाग का लक्ष्य यह था कि जापानियों को सुनियोजित ढंग से सोचने तथा काम करने का अभ्यास डाला जाए। इस दिशा में जापान द्वारा जो सब से पहला कदम उठाया

गया वह यह था कि देश में एक शिक्षा-संहिता जारी की गई, जिसका आशय जापान के सम्राट् मिकाडो ने राष्ट्र को इन शब्दों में समझाया

"सामान्य जीवन के लिए जो समस्त ज्ञान आवश्यक है, और वह उच्च-कोटि का ज्ञान जिसके कारण बड़े-बड़े अफसर, किसान, व्यापारी, कारीगर चिकित्सक आदि अपना-अपना धंधा चलाते हैं, शिक्षा द्वारा ही प्राप्त होता है। इस बात का निश्चय कर लिया गया है कि शिक्षा का इस प्रकार प्रसार किया जाएगा कि भविष्य में ऐसा कोई गांव न होगा जिसमें कोई भी परिवार अशिक्षित हो ऐसा कोई परिवार न होगा जिसमें कोई व्यक्ति अपढ़ होगा।"

सन् १८७७ में टोकियो विश्वविद्यालय की स्थापना की गई और उसमें वाणिज्य तथा अन्य व्यावहारिक विषयों की शिक्षा देने के लिए विदेशी भाषाओं में कई स्कूल आरंभ किए गए। शिक्षा कोड का बार-बार पुनरावलोकन कर के सुधार किया गया। एक बार जिन सिद्धान्तों के आधार पर सुधार किए गए, वे इस प्रकार वर्णित हैं—"नैतिक चरित्र का विकास, देशभक्ति तथा स्वामिभक्ति की भावना का विकास तथा असली धन्धों के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान की प्राप्ति।"

अनुशासन का पाठ पढ़ाने के लिए कई स्कूलों में फौजी कवायद सिखाई जाती थी। बच्चों को सदा प्रसन्नचित्त रखा जाता था और उन्हें नैतिकता, देशभक्ति, राजभक्ति तथा मानव सम्बन्धों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। जापान में जिस बात ने मेरा ध्यान अधिक आकर्षित किया वह थी स्त्री-शिक्षा का विकास। मैंने देखा कि जहां जापान के स्कूलों में १५,००,००० लड़कियां पढ़ रही थीं, वहां भारत जैसे विशाल देश में स्कूल जाने वाली लड़कियों की संख्या केवल ४,००,०० थी।

सन् १८९८ में जब मैं पहली बार जापान यात्रा पर गया तो मुझे टोकियो और क्योटो के प्रोफ़ेसरों ने बताया कि विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के लिए पुस्तकें खरीदनी जरूरी नहीं हैं। प्रोफेसर विद्यार्थियों को कक्षा में नोट लिखा देते थे। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी पुस्तकालय की किताबों की सहायता भी लेते थे। मैंने देखा कि विश्वविद्यालयों में जो शिक्षा दी जाती थी, असली प्रशिक्षण होता था। इसलिए विश्वविद्यालय से परीक्षा पास करते ही विद्यार्थियों को सरकारी गैर सरकारी नौकरियां मिल जाती थीं।

जापान में विश्वविद्यालय के प्रोफेसर देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर कठोर परिश्रम करते थे और उनका जीवन बड़ा सादा होता था। हालांकि वे

अपनी योग्यताओं के बल पर ग़ैर सरकारी जगहों पर काम कर के इससे अच्छा वेतन पा सकते थे, परन्तु वे उच्च भावनाओं से प्रेरित हो कर सादा जीवन व्यतीत करते हुए विश्वविद्यालय के थोड़े वेतन में ही संतोष कर लेते थे। बाहर काम करते समय उनकी वेश-भूषा यूरोपियन होती थी और घर में वे जापानियों की भाँति रहते थे। उनकी बहुत-सी आदतें परम्परागत होती थीं।

११ जुलाई, १९१३ को मैसूर आर्थिक सम्मेलन में मैंने मैसूर राज्य की सामान्य शिक्षा स्थिति पर निम्नलिखित भाषण दिया :

"मैसूर की ५७ लाख की जन संख्या में केवल ३॥ लाख व्यक्ति ऐसे हैं जो लिखना पढ़ना जानते हैं। यानी केवल ६ प्रतिशत लोग पढ़े-लिखे हैं, जहां कि दूसरे उन्नत देशों में ८५ से ९५ प्रतिशत तक लोग पढ़े-लिखे हैं।"

"अमरीका में शिक्षा पर सरकार द्वारा प्रति व्यक्ति १४रुपए खर्च किये जाते हैं, जहां कि मैसूर में यह खर्चा छः आने प्रति व्यक्ति से भी कम है। दूसरे उन्नत देशों में कुल आवादी का १ भाग स्कूलों में जाता है। मैसूर में स्कूल जाने वालों की संख्या पचास में एक है।"

"मैसूर की कुल आवादी ६० लाख के क़रीव है, फिर भी यहां कोई विश्वविद्यालय नहीं है। कनाडा की जन संख्या मैसूर की जन संख्या से केवल २५ प्रतिशत ज्यादा है और वहां विश्वविद्यालय हैं। इंगलैण्ड में साढ़े चार करोड़ की जन संख्या के पीछे २० विश्वविद्यालय हैं और जर्मनी में साढ़े छः करोड़ की जनसंख्या के पीछे २१ विश्वविद्यालय हैं।"

"पहले प्रत्येक देश की कुल आवादी में केवल ५ से १० प्रतिशत लोगों को ही शिक्षा दी जाती थी। कृषि, उद्योग या अन्य शारीरिक मेहनत में लगे लोगों को व्यावसायिक शिक्षा देने की ज़रूरत ही नहीं समझी जाती थी, परन्तु अब सभ्य देशों ने इस बात को भली-भांति जान लिया है कि व्यावसायिक शिक्षा कृषि, उद्योग तथा शारीरिक मेहनत के धंधों के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध होती है और यह शिक्षा जितनी अधिक वैज्ञानिक होगी, उतनी ही धन में वृद्धि होगी।"

प्रारंभिक शिक्षा

प्रारंभिक शिक्षा के प्रसार के लिए राज्य मे सरकारी तथा गैर सरकारी स्कूल खोलने का काम बड़े ज़ोर-शोर से शुरू किया गया और स्कूलों की इमारतो के लिए अनुदान दिए जाने लगे। इससे ग्रामीण जनता मे कुछ उत्साह दिखाई देने लगा। एक बार मैं बेलदारा नामक गाव के निकट सड़क पर से हो कर जा रहा था तो उस गांव के लोगो ने रुपयो की एक थैली मेरी कार मे फेंक दी। यह रुपये उन्होंने अपने गाव मे बनने वाली स्कूल की इमारत के लिए इकट्ठे किए थे। उन्होंने मुझसे शिकायत की कि इमारत के लिए उन्होने अपने हिस्से के लिए रुपये इकट्ठे कर लिए हैं, परन्तु इमारत बनाने के लिए सरकार की ओर से अभी तक मजूरी नही आई।

हरिजनो मे शिक्षा के प्रसार के लिये विशेष रूप से अनु ान दिये गए। शिक्षा प्रसार का लक्ष्य यह रखा गया कि आगामी पांच वर्षों में स्कूल जाने वालों की सख्या पहले से दुगुनी हो जाए।

प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के लिए कानून पास किया गया। शुरू-शुरू में यह कानून कुछ चुने हुए क्षेत्रो मे लागू किया गया और जैसे-जैसे समय बीतता गया, इसे अन्य क्षेत्रों में भी लागू कर दिया गया। जून, १९१८ तक इसे ६८ केन्द्रों में लागू कर दिया गया और १७० केन्द्रों में लागू करने की तैयारी की जा चुकी थी।

इन सब प्रयत्नों के फलस्वरूप राज्य मे सरकारी तथा गैर सरकारी स्कूलों की संख्या, जो १९१२ मे ४५६८ थी, १९१८ मे ११,२९४ हो गई। इसी अवधि मे स्कूल जाने वाले बच्चो की गिनती १३८,१५३ से ३६६,८५६ हो गई।

लड़कियो की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दे कर इसे भी प्रोत्साहित किया गया। स्कूल जाने वाले कुल बच्चो मे लड़कियों की गिनती जो १९१२-१३ मे ६.४ प्रतिशत थी; १९१७-१८ मे १४.२ प्रतिशत हो गई।

लड़कियों के लिए नये प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूल खोले गए। मैसूर के महारानी कालेज को १९१७ मे डिग्री कालेज बना दिया गया। मैसूर मे लड़कियो के लिए पहला होस्टल १९१४ में आरम्भ किया गया।

इंजीनियरिंग तथा तकनीकी शिक्षा

सन् १९१३ मे बगलौर मे एक कृषि स्कूल खोला गया। जहा तक संभव हो

सका, स्कूल के पाठ्यक्रम को व्यावहारिक बनाने का प्रयत्न किया गया और किसानों के लिए कन्नड़ भाषा में लघु पाठ्यक्रम की व्यवस्था भी की गई।

बंगलौर में एक इंजीनियरिंग तथा एक वाणिज्य स्कूल स्थापित किया गया। मैसूर के इंजीनियरिंग तथा औद्योगिक स्कूल को मिला कर चामराजेन्द्र टैकनिकल इंस्टीच्यूट का नाम दे दिया गया और इसके लिए मैसूर नगर में एक विशाल भवन बनाया गया। इस संस्थान में वाणिज्य शिक्षा भी दी जाती थी।

बंगलौर के वाणिज्य स्कूल में एक वर्ष के लिए वाणिज्य की प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती थी, जो कि अंग्रेज़ी और कन्नड़ भाषा में होती थी। वाणिज्य की माध्यमिक शिक्षा दो वर्षों के लिए अंग्रेज़ी में दी जाती थी। छोटे-मोटे दुकानदारों के लिए कन्नड़ में प्रारंभिक लेखे-जोखे तथा बैंकिंग की शिक्षा के विशेष पाठ्यक्रम रखे गए।

ज़िले के प्रधान स्थलों में औद्योगिक स्कूल खोले गए और कई हाई स्कूलों में वाणिज्य शिक्षा देने का प्रबन्ध किया गया।

तकनीकी शिक्षा के विकास के लिए बंगलौर में इंजीनियरिंग कालेज स्थापित किया गया। यह क़दम इसलिए उठाना पड़ा, क्योंकि पूना तथा मद्रास के इंजीनियरिंग कालेजों में हर साल मैसूर राज्य के पांच से अधिक छात्र नहीं लिये जाते थे और इससे रियासत की मांग पूरी नहीं होती थी।

विदेश जा कर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए भी विद्यार्थियों को बहुत-सी छात्रवृत्तियां देने की व्यवस्था की गई थी।

मैसूर विश्वविद्यालय

मेरे दीवान पद ग्रहण करते ही सरकार ने मैसूर में विश्वविद्यालय स्थापित करने के बारे में सोच-विचार करना आरम्भ कर दिया।

रियासत की ओर से दो शिक्षा अधिकारियों को नियुक्त करके उन्हें इंगलैण्ड, अमरीका, जापान तथा आस्ट्रेलिया के दौरे पर भेजा गया, जहां से लौट कर उन्होंने बड़ी लाभदायक रिपोर्ट पेश की। उन दो अधिकारियों में एक तो डॉ० सी० आर० रैडी थे और दूसरे श्री थामस डैनहाम थे।

विश्वविद्यालय क़ायम करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए जुलाई, १९१४ में सरकारी सदस्यों तथा प्रमुख शिक्षा अधिकारियों की एक समिति बनाई गई और

छ महीनों तक इस समिति की बैठकें होती रहीं। इसके बाद जुलाई, १९१५ में इस समिति ने एक योजना बना कर भारत सरकार को पेश की। भारत सरकार के राजनीतिक तथा शिक्षा अधिकारियों ने इस योजना में बड़ी दिलचस्पी दिखाई और इस सम्बन्ध में उन्होंने रियासत के अंग्रेज रेजीडेंट सर ह्यू डाली तथा मेरे साथ विचार विमर्श किया। इससे कुछ दिन बाद भारत सरकार के शिक्षा आयुक्त श्री शार्प ने इस योजना की आलोचना कर के उसमें कई नए सुझाव दिए। तब मैसूर सरकार ने उन सुझावों के अनुसार अपनी योजना में संशोधन कर के, फ़रवरी १९१६ में यह योजना भारत सरकार को पेश कर दी।

इसके पश्चात् उसी मास में सर ह्यू डाली तथा मैं भारत सरकार के शिक्षा अधिकारियों से मिले और उनसे इस सम्बन्ध में बातचीत की। शिक्षा अधिकारी हमारे साथ बड़ी अच्छी तरह से पेश आए और उन्होंने इस मामले पर बड़ी सहानुभूति से विचार किया।

चूंकि शैक्षिक वर्ष, आमतौर पर, एक जुलाई को आरम्भ होता था, इसलिए रियासत की सरकार उसी दिन से विश्वविद्यालय का श्री गणेश करने के लिए उत्सुक थी। ऐसा न कर पाने से एक वर्ष और नष्ट हो जाता। तब हमने मार्च, १९१५ में भारत सरकार से प्रार्थना की कि हमें आगामी एक जुलाई से विश्वविद्यालय आरम्भ करने की अनुमति दी जाय। भारत सरकार ने अनुमति तो दे दी, पर साथ में यह शर्त लगा दी कि भविष्य में मद्रास विश्वविद्यालय के साथ भी कुछ सम्बन्ध कायम रखे जायें। इससे पूर्व मैसूर के कालेजों के छात्र मद्रास विश्वविद्यालय से ही डिग्री प्राप्त किया करते थे।

मद्रास विश्वविद्यालय के कुलपति लार्ड एम्पथिल द्वारा इस सम्बन्ध में बातचीत करने के लिए, जून, १९१६, में ऊटकमंड में एक बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक में मद्रास विश्वविद्यालय सिंडीकेट के सदस्य तथा मैसूर की ओर से मैसूर राज्य के रेजीडेंट तथा मैं शामिल हुए।

मद्रास विश्वविद्यालय के प्रतिनिधियों ने मैसूर द्वारा अलग विश्वविद्यालय स्थापित किए जाने का विरोध किया। हमने कहा कि यदि हम अपने पाव पर खड़े हो कर अलग विश्वविद्यालय की स्थापना कर रहे हैं तो मद्रास विश्वविद्यालय के प्रतिनिधियों को इस बात की खुशी होनी चाहिए। खैर, अन्त में सब मतभेद दूर हो गये और नये विश्वविद्यालय ने १ जुलाई, १९१६ से अपना कार्य आरम्भ कर दिया।

विश्वविद्यालय के लिए मैसूर नगर में उचित स्थान का चुनाव करने का निश्चय किया गया। विश्वविद्यालय बिल विधान परिषद् में पेश करते हुए मैंने जो भाषण दिया, वह इस प्रकार था :

"मुझे इंगलैण्ड, अमरीका तथा कनाडा में कई विश्वविद्यालय देखने के अवसर प्राप्त हो चुके हैं। उनमें से अधिकांश विश्वविद्यालय आबादी वाली जगहों में स्थित हैं। मैं विद्यार्थियों को जन जीवन से अलग-थलग रख कर पढ़ाने के पक्ष में नहीं हूँ। ऐसा करने से, जब वे वास्तविकता के संसार में पहुंचते हैं तो, उनके लिए जीवन के साथ निर्वाह करना मुश्किल हो जाता है। विश्वविद्यालयों का लक्ष्य तो यह होना चाहिए कि वह छात्रों का चरित्र निर्माण उन्हीं परिस्थितियों के अनुसार करें जिन परिस्थितियों के साथ उन्हें जीवन में बाद में जूझना है।"

मैंने कहा कि हर विश्वविद्यालय के देश की सभ्यता तथा भौतिक समृद्धि के अनुसार कुछ सामान्य तथा कुछ विशिष्ट उद्देश्य होने चाहिए। सामान्य उद्देश्य की मोटी बात तो यह है कि उच्च-शिक्षा को प्रोत्साहन मिलना चाहिए, जिससे देश के कोने-कोने से अज्ञान का अंधकार दूर हो जाय, ज्ञान की लौ जगमगा उठे और राज्य में सांस्कृतिक केन्द्र स्थापित हो जायें। मैसूर में शिक्षा का विशिष्ट उद्देश्य यह होना चाहिए कि लोगों की मानसिक शक्ति तथा कार्यक्षमता का विकास हो, उन्हें निर्माण कार्य का प्रशिक्षण मिले; राज्य में व्यापारी, अर्थशास्त्री, वकील, इंजीनियर तथा राजनीतिज्ञ तैयार हों।

जैसा कि बताया जा चुका है, १ जनवरी, १९१६ से विश्वविद्यालय ने कार्य आरम्भ किया और इस का प्रथम उपाधि वितरण समारोह १९ अक्तूबर १९१८ को हुआ। महाराज को, जो कि विश्वविद्यालय के कुलपति थे, इस अवसर पर सभा का अध्यक्ष बनाया गया और कलकत्ता के विख्यात विद्वान् सर आशुतोष मुकर्जी ने भाषण दिया। अपने भाषण में महाराज ने विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में कहा :

"मैं चाहता हूँ कि मैं इस सार्वजनिक अवसर पर अपनी ओर से तथा राज्य के लोगों की ओर से रियासत के दीवान सर एम० विश्वेश्वरैया के प्रति आभार प्रकट करूँ।"

उनके देश प्रेम और उनके उत्साह ने रियासत के एक स्वप्न को साकार कर

दिखाया है। उनके अथक परिश्रम से ही इस विश्वविद्यालय का निर्माण हुआ, अतः उनका नाम इस विश्वविद्यालय के साथ सदा के लिए जुड़ा रहेगा।"

उन दिनों किसी भी देशी रियासत में कोई विश्वविद्यालय नहीं था। इस प्रकार का यह पहला प्रयास था और लोगों के लिए यह विश्वास करना कठिन था कि यह काम आगे बढ़ेगा, क्योंकि उन दिनों परिस्थितियां ही कुछ ऐसी थीं। यह तो सौभाग्य की बात थी कि महाराज ने इस सम्बन्ध में हमारी हर प्रकार की सहायता की और भारत के तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिंग की नीति भी शिक्षा के पक्ष में थी।

अध्याय १०

मैसूर में लोक सुधार के कार्य

जब मैं रियासत का दीवान था तब राज्य में शिक्षा, राजनीति तथा प्रशासन सम्बन्धी जो-जो सुधार किये गये थे उनका मैं उल्लेख कर चुका हूँ। स्मरण रहे कि नवम्बर १९०९ में, मैसूर में, चीफ़ इंजीनियर का पद ग्रहण करते समय मैंने इस बात का आश्वासन प्राप्त किया था कि लोकनिर्माण कार्यों के अतिरिक्त मुझे रियासत में शिक्षा तथा उद्योग के क्षेत्रों में विकास करने के अवसर भी प्राप्त होंगे। मैंने महाराज से एक बार फिर कहा कि शासन प्रबन्ध के दैनिक कार्य में कोल्हू के बैल की तरह काम करते रहने से मुझे सन्तोष नहीं होता और मेरे मस्तिष्क में तो वह सब बातें घूमती रहती हैं जिनका अध्ययन मैंने अपनी विदेश यात्राओं के दौरान किया था। जब अन्य देश प्रगति की राह पर बड़ी तेज़ी से दौड़े जा रहे हैं तो क्या हमें यह शोभा देता है कि हम हाथ पर हाथ रखे बैठे रहें और तुच्छ रूप से जीवन-यापन करते रहें?

सो, राज्य में जो दूसरे महत्त्वपूर्ण विकास कार्य किये गये, यहां संक्षेप में उनका उल्लेख करना असंगत न होगा।

राज्य की ८५ प्रतिशत जनता अशिक्षित थी और लोगों के पास जोतने के लिए बड़ी थोड़ी भूमि थी। अतः कृषि उत्पादन में तेज़ी से वृद्धि होने की सम्भावना नहीं थी। फिर भी उत्पादन बढ़ाने के लिए निम्नलिखित तरीक़े अपनाये गये।

सरकारी फ़ार्म खोले गये, खेती-बाड़ी के तरीक़ों में सुधार कर के लोगों में उसका प्रदर्शन किया गया और कृषि में काम आनेवाले औज़ारों में भी सुधार किये गये। इसके अतिरिक्त किसानों को खाद तथा अच्छी क़िस्म के बीज दिये गये और कृषि शिक्षा देने के लिए हैब्बल में एक कृषि स्कूल खोला गया तथा अन्य केन्द्र स्थापित किये गये और अधिक तकावी ऋण बांटने के लिए अनुदान दिये गये। कृषि सम्बन्धी सांख्यिकी एकत्रित करने का प्रयास भी किया गया।

रियासत में बहुत से तालाब थे, परन्तु उनमें से अधिकांश आकार में छोटे थे और उनकी मरम्मत करना ज़रूरी होता था। लोगों को इस बात के लिए तैयार करना कठिन था कि वे स्वयं ही तालाबों की देखभाल और मरम्मत आदि का काम

सभालें। मैंने मारीकानव जलाशय तथा कावेरी नहर द्वारा सिंचित क्षेत्र में सिंचाई की खण्ड प्रणाली लागू करने का प्रयत्न किया, परन्तु अनपढ़ किसानों को यह समझाना मुश्किल था कि अधिक पानी देने से फसलों को विशेष लाभ नहीं होता। पानी को ठीक प्रकार से इस्तेमाल करने के नियमों का आज तक पालन नहीं होता। कावेरी की वादी में भी फसलों को इतना अधिक पानी दिया जाता है कि वह उल्टा फसलों को नुकसान पहुंचाना शुरु कर देता है। ग्रामीण किसी प्रकार के प्रतिबन्ध को सहन नहीं करते और जिला अधिकारी भी, उनका पक्ष ले कर, पानी को नष्ट होने से नहीं रोकते। आशा है कि भविष्य में परिस्थितिया बदलेंगी और सिंचाई सम्बन्धी आवश्यक नियम बना कर उन्हें सख्ती से लागू किया जायगा।

उद्योग

आजकल के समय में किसी राष्ट्र की प्रगति तथा समृद्धि उसके उद्योग-धंधों पर निर्भर है। मेरे समय में मैसूर में जो उद्योग धंधे आरम्भ किये गये थे, वह इस प्रकार है :

रेशम के कीड़े पालना,
संदल का तेल बनाना,
साबुन बनाना,
धातु बनाने का कारखाना,
चमड़ा रंगने का कारखाना,
केन्द्रीय तथा जिला कारखानों की स्थापना,
लघु एव ग्राम उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए अनुदानों की स्वीकृति,
नये घरेलू धंधों की स्थापना,
होटलों तथा छापाखानों की स्थापना,
गैरसरकारी कारखानों को प्रोत्साहित करने के लिए कर्ज देना,
लघु तथा ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए आर्थिक सहायता देना, आदि।

मैसूर का लोहे व लकड़ी का कारखाना, जिसका विस्तारपूर्वक वर्णन बाद में

किया जायगा, का निर्माण १९१८ में आरम्भ हो गया था। इस महत्वपूर्ण काम को शुरू करने से पूर्व चार वर्ष तक उसके बारे में जांच होती रही थी। इस कारखाने की योजना सुयोग्य अमरीकी इंजीनियर श्री सी० पी० पेरिन की सहायता से तैयार की गयी थी, जिन्होंने जमशेदपुर में टाटा के लोहे व इस्पात कारखाने की योजना तैयार की थी।

सन् १९१४ से लेकर १९१८ तक, जब मैंने अपने पद का त्याग किया, महायुद्ध के कारण भारत सरकार नये इंजीनियरिंग उद्योग तथा कारखाने स्थापित करने के पक्ष में नहीं थी। वह चाहती थी कि देश के सारे कारीगर लोग लड़ाई का सामान तथा हथियार बनाने में ही लगे रहें। इन परिस्थितियों में हम सिवाय भावी योजनाएं बनाने के और कर ही क्या सकते थे? सो हमने लोहे, कागज, चीनी और सीमेंट जैसे नये उद्योग स्थापित करने की योजनाएं तैयार कर के रख लीं और उन्हें कार्यरूप देने के लिए युद्ध समाप्ति की प्रतीक्षा करने लगे।

युद्ध के कारण माल बाहर भी नहीं भेजा जा सकता था। फिर भी हमने आयात तथा निर्यात सम्बन्धी नीति की रूपरेखा तैयार कर ली। इसके पश्चात् कामर्स कालेज की स्थापना की गयी। बंगलौर निवासी प्रसिद्ध व्यापारी हाजी सर इस्माइल सैत ने व्यापार मण्डल के भवन निर्माण के लिए आर्थिक सहायता दी। सामान्य व्यापारियों को वाणिज्य विषयों की शिक्षा देने के लिए बंगलौर तथा कुछ तालुकों के सदर मुकामों में रात्रि पाठशालाओं का प्रबन्ध किया गया। मेरे अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् विश्वविद्यालय में बी०काम० की कक्षाएं बन्द कर दी गयीं, परन्तु बाद में उन्हें फिर से आरम्भ कर दिया गया।

सन् १९१७ में व्यापारियों का एक शिष्ट मंडल जापान में भेजा गया। इस मंडल को एशिया के उस प्रगतिशील देश में भेजने का उद्देश्य यह था कि व्यापारी वहां की व्यापार प्रणालियों का अध्ययन कर के उन्हें मैसूर में लागू करें, ताकि यहां का व्यापार भी जापान की भांति प्रगति करे।

पानी से बिजली पैदा करने के साधनों का विकास

पहले बताया जा चुका है कि शिवसमुद्रम् में १३,००० हॉर्स पावर बिजली तैयार की जाती थी और कावेरी जलाशय का कुछ भाग बन जाने से यह बिजली

२५,००० हॉर्स पावर हो गयी थी। इससे कोलार की सोना खानों को उनकी आवश्यकता के अनुसार पहले से अधिक बिजली मिलने लगी थी। यह वृद्धि निश्चित अवस्थाओं में की गयी थी।

इस समय पानी द्वारा कुल ८३,००० हार्स पावर बिजली पैदा की जा रही है। सरकार को बिजली से प्राप्त होनेवाली आय १९११-१२ में १६.६५ लाख रुपए, १९१८-१९ में २४.२ लाख और १९४८-४९ में १.३३ करोड़ रुपए थी।

राज्य की पानी द्वारा बिजली पैदा करने की योजना में जिन दो अमरीकी इंजीनियरों की सहायता से प्रगति हुई थी, वे थे श्री एच० पी० गिब्स तथा श्री एम० पी० फोर्बिस। ये दोनों इंजीनियर जिन्होंने मैसूर में दक्षता से कार्य किया, बाद में सर्वश्री टाटा सन्स, बम्बई की नौकरी में चले गये थे।

शिमोगा जिले में शारावती नदी के जोग प्रपात पर बिजली पैदा करने की एक योजना तैयार की गयी और इसके लिए सर्वेक्षण कार्य आरम्भ हुआ। परन्तु यह महत्वपूर्ण व आकर्षक योजना युद्ध काल में आदमियों तथा धन की कमी के कारण मेरे रहते हुए पूरी न हो सकी। यह बड़ी खुशी की बात है कि बाद में इस योजना के कार्य में बड़ी प्रगति हुई और अब इसके द्वारा ४८,००० किलोवाट बिजली पैदा की जा रही है। अनुमान है कि जब इस योजना का कार्य पूरा हो गया तो १,२०,००० किलोवाट बिजली पैदा की जा सकेगी।

रेलों का विस्तार

जब मैं रियासत का दीवान बना तो रेल के विस्तार का निर्माण कार्य, जो पहले बन्द पड़ा था, पुनः आरम्भ कर दिया गया। रेल निर्माण के लिए श्री ई० ए० एस० बेल की सेवाएं भारत-सरकार से प्राप्त की गयी और उन्हें रेलवे निर्माण कार्यों के लिए चीफ इंजीनियर के पद पर नियुक्त किया गया। इसके अतिरिक्त स्थानीय रेल विभाग की स्थापना कर के स्थानीय इंजीनियरों तथा अन्य अधिकारियों को रेल विभाग में कार्य करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाने लगा। मैसूर तथा दक्षिण मराठा रेलवे से मैसूर-बंगलौर तथा अन्य ब्रांच लाइनों का काम सम्भाल लेने की व्यवस्था की गयी। इस सम्बन्ध में महाराज ने १० अप्रैल, १९१८ के दिन मुझे जो पत्र लिखा, वह इस प्रकार है :

गयी थी। ऐसा होते हुए भी १९१९-२० के वजट को, जो कि मेरे पद त्यागने के कुछ मास वाद ही विधान सभा में पेश किया गया, तत्कालीन दीवान ने 'समृद्धि वजट' के नाम से पुकारा।

शहरों व क़स्वों की हालत में सुधार

वंगलौर तथा मैसूर में भी कुछ सुधार किये गये। मैसूर नगर का विकास तो स्वर्गीय महाराज श्री कृष्णराज वाडियार वहादुर की निजी देख-रेख में हुआ था। इन दोनों नगरों की विकास योजना पर सदा दृष्टि रखी जाती थी। मेरे वाद रियासत के दीवान सर मिर्ज़ा इस्माइल के समय में इन दोनों नगरों के विकास की ओर और भी अधिक ध्यान दिया गया। सर मिर्ज़ा इस्माइल काफ़ी अर्से तक इस पद पर रहे। उन्होंने राज्य के दो मुख्य नगरों तथा अन्य क़स्वों को सुधारने में तथा क़स्वा आयोजन स्कीमों में विशेष दिलचस्पी ली। मैसूर में आधुनिक जल निकास योजना का काम तभी आरम्भ हो चुका था जव मैं रियासत का मुख्य इंजीनियर था।

मैसूर तथा वंगलौर नगरों का विकास रियासत के कई दीवानों, सर के० शेषाद्रि अय्यर, श्री वी० पी० माधव राव, सर मिर्ज़ा एम० इस्माइल के संयुक्त प्रयत्नों से ही हो सका था। इन दोनों नगरों का निर्माण आधुनिक ढंग से किया गया था। सम्भवतः भारत के अन्य वड़े-वड़े नगरों में से कोई भी नगर इन दोनों नगरों की वरावरी नहीं कर सकता।

ग्राम विकास

ग्राम विकास के क्षेत्र में सव से वड़ा काम यह किया गया कि ग्राम सुधार योजना वना कर उसे गांवों में लागू कर दिया गया। इस योजना के अन्तर्गत गांवों में पंचायतें वना कर गांवों की सफ़ाई का काम उन्हें सौंप दिया गया। ग्रामवासियों को आस-पास के गांवों के साथ सम्वन्ध स्थापित करने के लिए सड़कें वनाने तथा गांवों में अन्य सुधार कार्य करने के लिए अनुदान दे कर, तथा प्रचार द्वारा, प्रोत्साहित किया गया। इन सव वातों से गांव के लोगों को वड़ा वढ़ावा मिला और उन्होंने स्वयं

गावों को साफ सुथरा रखने के अतिरिक्त आस पास के गावों तथा कस्बों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए सड़कें बनाने भी शुरू कर दी।

आजकल कावेरी की घाटी में ४६० गावों तथा कस्बों में बिजली दी जा रही है। गावों में उद्योग धंधों को भी प्रोत्साहन दिया गया है।

मलनाड क्षेत्र की भूमि को सुधारने के लिए वहां मलनाड विकास योजना लागू की गयी। इस योजना का उद्देश्य यह था कि उस क्षेत्र की भूमि को सुधार कर वहां उत्पादन तथा लोगों की उपार्जन शक्ति बढ़ाई जाय और मच्छरों का नाश कर के मलेरिया दूर किया जाय। सन् १९१७ में सरकार ने १०० पृष्ठों में अधिक की एक पुस्तिका प्रकाशित की, जिसमें इस क्षेत्र के अन्तर्गत किये गये सुधार कार्यों का ब्योरा दिया गया था।

सामाजिक स्थिति को सुधारने का प्रयत्न

बहुत से क्षेत्रों में विकास कार्य करने की जरूरत थी, परन्तु एक तो राज्य के साधन सीमित थे और दूसरे जनता में, विशेष कर ग्रामीण जनता में, उत्साह की कमी थी।

इस दिशा में सब से पहला महत्वपूर्ण कदम यह उठाया गया कि मन्दिरों तथा अन्य धार्मिक स्थानों को साफ सुथरा रखने की व्यवस्था की गयी और उनकी देख रेख के लिए सरकारी कर्मचारी नियुक्त किये गये।

पहाड़ी स्थानों के विकास की ओर भी ध्यान दिया जाने लगा। सब से पहले बंगलौर से ३३ मील दूर नन्दी नामक पहाड़ी स्थल का विकास किया गया और वहां अधिक से अधिक पर्यटन सुविधा देने की व्यवस्था की गयी। इसके अतिरिक्त बाल हाट गिरी तथा देवायी दुग जैसे अन्य पहाड़ी स्थानों के विकास की ओर भी ध्यान दिया गया। ये दोनों स्थान अंग्रेजी अफसरों के लिए पहाड़ी स्थलों का काम देते थे। नन्दी को एक लोकप्रिय पहाड़ी स्थल बनाने के लिए वहां पर्यटकों के निवास स्थानों का सुधार किया गया तथा अन्य सुविधाएं दी गयी।

मैसूर नगर में नये विश्राम घरों का निर्माण किया गया। इसके अतिरिक्त सरकार की ओर से अनुदान दे कर बंगलौर में आधुनिक ढंग के हिन्दू-होटल स्थापित करने की व्यवस्था भी की गयी और मैसूर में हिन्दू-होटल के लिए आधुनिक ढंग का

एक नया भवन बनवाया गया। बंगलौर में अंग्रेज़ी तरीक़े के दो क्लब 'सेंचुरी क्लब' तथा लेडीज़ क्लब स्थापित किये गये और मैसूर में एक क्लब की स्थापना के लिए सरकार ने अपनी ओर से ज़मीन ले कर दी।

नागरिक तथा सामाजिक सम्मेलन की स्थापना करके एक समिति बनाई गयी, जिसके अध्यक्ष थे सर् के० पी० पुट्टान्ना चेट्टी ।

सामान्य कार्य

अपनी ओर से इस बात का भरसक प्रयत्न किया गया कि मैसूर में उन सब संस्थाओं तथा सेवाओं को बढ़ावा दिया जाय जो कि दूसरे उन्नत देशों में प्रचलित हैं। परन्तु धन तथा साधनों की कमी के कारण इस दिशा में जो विकास हुआ, वह सीमित ही था।

मेरे समय में जो भी विकास कार्य हुए उसका श्रेय उन सब सरकारी अफ़सरों तथा प्रमुख समाज सेवकों को प्राप्त है जिन्होंने मुझे सहयोग प्रदान किया। यह सब विकास इसी ध्येय को ले कर किये गये थे कि राज्य के लोग प्रगति की राह पर आगे बढ़ें और सभ्य लोगों का-सा जीवन व्यतीत करें।

यहां महाराजा सर श्रीकृष्णराज वाडियार बहादुर के सम्मान में कुछ कहना असंगत न होगा। वह उच्चकोटि के देशभक्त राजा थे। राज्य की प्रगति और प्रजा के हितों का उन्हें बड़ा ध्यान रहता था। वह सच्चे अर्थों में लोगों के दिलों पर राज्य करते थे। लोग उनके उच्च चरित्र का बड़ा सम्मान करते थे। राज्य की प्रगति के लिए जितने भी विकास कार्य हुए, उन सब के लिए उन्होंने अपनी ओर से पूरा-पूरा समर्थन प्रदान किया।

यद्यपि मेरी नौकरी के अन्तिम दिनों में मेरे और महाराज के बीच सरकारी मामलों में, विशेषकर विकास कार्यों के लिए अपनायी जानेवाली नीति के बारे में, कुछ मतभेद पैदा हो गये थे, फिर भी हमारे सम्बन्ध अन्त तक मैत्रीपूर्ण रहे।

२४ मई, १९१७ को महाराज ने मुझे ऊटकमंड से एक पत्र लिखा, जो इस प्रकार है :

> "जिन हाल की घटनाओं की आपने चर्चा की है, उनके बारे में मैंने अपने विचार आपके सामने रख दिये हैं। मैं समझता हूं कि सरकारी मामलों

में हमारे जो भी मतभेद हैं, वे दूर हो सकते हैं। मैं आप को इस बात का विश्वास दिलाता हूँ कि सरकारी मामलों पर मतभेद होने पर भी हमारे व्यक्तिगत सम्बन्धों में कोई अन्तर नहीं आयगा और आपके प्रति मेरे मन में जो सम्मान है, उसमें कमी नहीं होगी। आपने रियासत के लिए जो महान् सेवा कार्य किया है, उसे मैं कभी नहीं भुला सकता।"

अध्याय ११

बाद की परिस्थितियां और नौकरी से ऐच्छिक अवकाश ग्रहण

वैधानिक सुधारों पर बहस

सन् १९१७-१८ के आस-पास भारत के राजनीतिक क्षेत्रों में राजनीतिक सुधारों तथा भारत के भावी संविधान के प्रश्न पर बड़े ज़ोर की बहस हो रही थी। इस बहस के साथ भारतीय रियासतों का भविष्य भी जुड़ा हुआ था। भारत के तत्कालीन रियासती सचिव श्री ई० एस० मॉन्टेग्यु १९१७ में भारत के दौरे पर आये। मैसूर में हमने एक समिति इस प्रश्न पर विचार करने के लिए बनायी कि भविष्य में मैसूर के भारत सरकार के साथ किस प्रकार के सम्बन्ध होने चाहिए। इस समिति का अध्यक्ष महाराज को बनाया गया और मैसूर के युवराज ने भी जो समिति के सदस्य थे, इस बैठक में भाग लिया।

भारत के वाइसराय लार्ड चैम्सफ़ोर्ड तथा श्री ई० एस० मॉन्टेग्यु कुछ दिन बाद मैसूर में आये और उन्होंने प्रमुख अधिकारियों तथा भारतीय नेताओं के विचारों से वहां के लोगों को अवगत कराया। उस अवसर पर मैंने भी एक सभा में भाग लिया और बाद में लार्ड चैम्सफ़ोर्ड तथा श्री मॉन्टेग्यु से बातचीत की। मेरी इस बातचीत की चर्चा श्री मॉन्टेग्यु ने अपनी पुस्तक "भारत की डायरी" में इस प्रकार की है:

> "मैसूर के दीवान के साथ कुछ लोग मुझसे कावेरी सम्बन्धी समझौते के बारे में बातचीत करने के लिए आये। मैसूर के दीवान यह भी चाहते थे कि रियासती राजाओं को द्वितीय सदन में सम्मिलित कर लिया जाय। उनका कहना बिल्कुल ठीक है। चैम्सफ़ोर्ड ने इस बात का विरोध किया, परन्तु मैं समझता हूं कि चैम्सफ़ोर्ड इस मामले में ग़लती पर हैं।"

यह बता देना उचित होगा कि लार्ड चैम्सफ़ोर्ड तथा श्री मॉन्टेग्यु ने वैधानिक सुधार सम्बन्धी अपनी रिपोर्ट में इस बात की सिफ़ारिश की कि राजाओं की

परिषद् को सलाहकार समिति के रूप में स्थायी रूप से काम करने दिया जाय, जिससे वह राज्य परिषदों के साथ मिलकर अपने हितों की रक्षा कर सके।

मैं यह बता दूं कि बीकानेर के महाराज सर गंगासिंह बहादुर मैसूर में पधार चुके थे। उन्होंने राज्य के शासन प्रबन्ध का बड़े ध्यानपूर्वक अध्ययन किया था। बाद में बीकानेर पहुंच कर उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा जो इस प्रकार है :

"आपके सुन्दर राज्य की यात्रा करके मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप का राज्य तथा उसकी सरकार यथार्थ में महान् आदर्श प्रस्तुत करते हैं। आपके महाराज, आप तथा दूसरे सहकारी अफसर अपने राज्य के लिए ही नहीं, बल्कि सारे भारत के लिए सराहनीय सेवा कार्य कर रहे हैं। मैंने आप से बहुत-सी बातें सीखी हैं और मुझे आशा है कि हम आगे चल कर भी आपके शासन प्रबन्ध की बहुत-सी अच्छाइयों को अपनायेंगे।"

महात्मा गांधी कई बार मैसूर की यात्रा पर आये। एक बार वह तब आये, जब मैं रियासत का दीवान था और दूसरी बार, मेरे नौकरी छोड़ कर चले जाने के नौ वर्ष बाद, भद्रावती के स्थान पर लोहे का कारखाना तथा मैसूर नगर के निकट कृष्णाराज सागर जलाशय को देखने आये। उन्होंने इन दोनों कामों के बारे में कुछ ऐसी गलत बातें सुन रखी थी जिन पर उन्हें विश्वास नहीं होता था। तब मैसूर की एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए उन्होंने कहा

"कृष्णाराज सागर, जो संसार के बहुत बड़े जलाशयों में से एक है, अकेला ही सर विश्वेश्वरैया की कीर्ति को बढ़ाने के लिए काफी है। इसके अतिरिक्त रियासत में जो अन्य उद्योग-धंधे शुरू किये गये हैं, उनसे पता चलता है कि मैसूर भारत के दूसरे राज्यों से कितना आगे निकला जा रहा है और उसमें उद्यम की कितनी भावना है।"

अपनी इच्छा से अवकाश ग्रहण

सरकारी नौकरियों में ब्राह्मण जाति के लोगों को जो प्रमुत्व प्राप्त था, उसके विरुद्ध मद्रास में १९१७-१८ के आस-पास बड़े प्रदर्शन हुए। इन प्रदर्शनों का प्रभाव मैसूर में भी हुआ। मैं जानता था कि इस क्षेत्र में गैर-ब्राह्मण जाति के लोग उच्च शिक्षा की कमी के कारण ही पिछड़े हुए हैं। रियासत में आने के बाद मैंने शिक्षा

भारतीय रियासतों में विकास कार्यों के रास्ते में आमतौर पर कठिनाइयां पेश आती हैं। इन कामों की आलोचना भी होती है। परन्तु इसे मेरा सौभाग्य कहना चाहिए कि नौ वर्षों की अवधि में मैंने जो-जो काम हाथ में लिये, वह बड़े सुचारु ढंग से पूरे हो गये और उनसे सरकार को तथा लोगों को जो आशाओं से अधिक लाभ हुआ उसने आलोचना करनेवालों का मुंह सदा के लिए बन्द कर दिया।

सो, इस प्रकार मेरी रियासती नौकरी के महत्वपूर्ण अध्याय की समाप्ति होती है। ९ दिसम्बर, १९१८ के दिन मैंने परिषद् के सदस्यों, विभागीय अध्यक्षों, सरकारी सचिवों तथा अन्य अधिकारियों से, जिन्होंने मेरे साथ मिल कर बड़ी लगन से काम किया था, विदा ली। परिषद् भवन में विदाई के समय मैंने जो भाषण दिया, उसका सारांश इस प्रकार है:

"मुझे आशा है कि यदि मैं इस बात का दावा करूं तो आप मुझे क्षमा करेंगे कि दीवान का पद ग्रहण करते समय मैंने जिन उद्देश्यों को पूरा करने का बीड़ा उठाया था, परिस्थितियों के अनुसार जहां तक सम्भव हो सका, उन्हें कार्यरूप देने की पूरी कोशिश की गयी। ग़ैरसरकारी क्षेत्रों में अक्सर यह कहा जाता है कि मैं फलां जाति का समर्थक हूं और फलां जाति का विरोधी। आनेवाला समय अपने आप यह बतायेगा कि मैंने किसी के साथ पक्षपात नहीं किया। परन्तु मैं इस बात को मानने से इनकार नहीं करता कि रियासत का प्रमुख शासन अधिकारी होने के नाते मेरा सब से बड़ा कर्तव्य रियासत के महाराज तथा रियासत की जनता के हितों की रक्षा करना था।

"मुझे दुःख है कि मेरे लक्ष्य अधूरे ही रह गये। मेरे लिए सबसे निराशा-जनक बात तो यह है कि बहुत से काम, जो कि पूरे किये जा सकते थे, अधूरे ही रह गये। परन्तु मैं राज्य की जनता का बड़ा आभारी हूं, जिन्होंने अपनी ओर से मुझे पूरा-पूरा सहयोग दिया और गत छः वर्षों में एक भी ऐसी घटना नहीं घटी जिससे राज्य के प्रशासन को बट्टा लगता। मैंने देखा कि मैसूर के लोगों का व्यवहार, जिनमें राज्य की ग्रामीण जनता भी शामिल है, बड़ा ही सराहनीय रहा है; इसलिए नहीं कि शासन प्रबन्ध ने कोई विशेष कुशलता दिखायी, बल्कि इसलिए कि लोग जानते थे कि सरकार सच्चे दिल से उनके लिए सेवाकार्य करने की इच्छुक है।

"मैं उन सब देशी तथा अंग्रेज़ी समाचार पत्रों के प्रति भी आभार प्रकट

करना चाहता हूँ, जो मेरे समय में प्रशासन के प्रति बड़े उदार और निष्पक्ष रहे।"

"अन्त में मैं महाराज के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने एक पथ-प्रदर्शक के रूप में मुझे सदा ही रियासत की सेवा करने के लिए प्रेरित किया है और हर प्रकार की सहायता दी है।"

१० दिसम्बर, १९१८ के दिन मेरे पूर्व अधिकारी दीवान टी० आनन्द राव ने मुझे एक बड़ा ही महत्वपूर्ण पत्र लिखा, जिसे मैं यहां उद्धृत करता हूँ:

"कल के असाधारण गजट में मैंने आपकी छुट्टी जाने के बारे में पढ़ा और कल शाम का 'डेली पोस्ट' भी देखा, जिसमें आपका कल सचिवालय में दिया गया विदाई भाषण छपा है। मुझे लार्ड मार्ले द्वारा लिखित ग्लैडस्टोन की जीवनी का एक अंश याद आ रहा है। पुस्तक का वह अंश, जिसे मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ, आप पर ठीक लागू होता था:

"आप नहीं जानते कि हम में से वे व्यक्ति, जिन्हें सचाई में विश्वास रखने वाले प्रधान मन्त्री के साथ कार्य करने में अत्यधिक प्रसन्नता होती है, आपका कितना सम्मान करते हैं। हम जानते हैं कि हर आदमी गलतियों का पुतला है, परन्तु जब एक आदमी की सत्य-परायणता पर पूर्ण विश्वास हो, तो इस बात से बड़ा सन्तोष होता है।"

अवकाश ग्रहण करने से पूर्व मैं छः महीनों की छुट्टी पर चला गया। छुट्टी समाप्त होने के पश्चात् मेरे अवकाश प्राप्त करने की घोषणा सरकारी गजट में इस प्रकार की गई:—

"....इस अवधि में सर एम० विश्वेश्वरैया ने रियासत के भौतिक साधनों में वृद्धि करने के लिए बड़ी लगन और परिश्रम से कार्य किया। दीवान के रूप में उनके शासन प्रबन्ध द्वारा शिक्षा, सिंचाई कार्यों, रेल-यातायात तथा उद्योग धंधों का भारी विकास हुआ है। उन्होंने रियासत को प्रगति व समृद्धि की नींव पर लाकर खड़ा कर दिया। सर विश्वेश्वरैया जहां भी जायेंगे, रियासत के हर जाति के लोगों की तथा रियासत के महाराज की शुभकामनाएं सदा उनके साथ रहेंगी।"

हाईकोर्ट के अवकाश प्राप्त जज स्वर्गीय श्री सैंडलर ने १२ फरवरी, १९२६ के 'हिन्दू' में प्रकाशित अपने एक लेख में लिखा:

भारतीय रियासतों में विकास कार्यों के रास्ते में आमतौर पर कठिनाइयां पेश आती हैं। इन कामों की आलोचना भी होती है। परन्तु इसे मेरा सौभाग्य कहना चाहिए कि नौ वर्षों की अवधि में मैंने जो-जो काम हाथ में लिये, वह बड़े सुचारु ढंग से पूरे हो गये और उनसे सरकार को तथा लोगों को जो आशाओं से अधिक लाभ हुआ उसने आलोचना करनेवालों का मुंह सदा के लिए बन्द कर दिया।

सो, इस प्रकार मेरी रियासती नौकरी के महत्वपूर्ण अध्याय की समाप्ति होती है। ९ दिसम्बर, १९१८ के दिन मैंने परिषद् के सदस्यों, विभागीय अध्यक्षों, सरकारी सचिवों तथा अन्य अधिकारियों से, जिन्होंने मेरे साथ मिल कर बड़ी लगन से काम किया था, विदा ली। परिषद् भवन में विदाई के समय मैंने जो भाषण दिया, उसका सारांश इस प्रकार है:

"मुझे आशा है कि यदि मैं इस बात का दावा करूं तो आप मुझे क्षमा करेंगे कि दीवान का पद ग्रहण करते समय मैंने जिन उद्देश्यों को पूरा करने का बीड़ा उठाया था, परिस्थितियों के अनुसार जहां तक सम्भव हो सका, उन्हें कार्यरूप देने की पूरी कोशिश की गयी। ग़ैरसरकारी क्षेत्रों में अक्सर यह कहा जाता है कि मैं फलां जाति का समर्थक हूं और फलां जाति का विरोधी। आनेवाला समय अपने आप यह बतायेगा कि मैंने किसी के साथ पक्षपात नहीं किया। परन्तु मैं इस बात को मानने से इनकार नहीं करता कि रियासत का प्रमुख शासन अधिकारी होने के नाते मेरा सब से बड़ा कर्तव्य रियासत के महाराज तथा रियासत की जनता के हितों की रक्षा करना था।

"मुझे दुःख है कि मेरे लक्ष्य अधूरे ही रह गये। मेरे लिए सबसे निराशा-जनक बात तो यह है कि बहुत से काम, जो कि पूरे किये जा सकते थे, अधूरे ही रह गये। परन्तु मैं राज्य की जनता का बड़ा आभारी हूं, जिन्होंने अपनी ओर से मुझे पूरा-पूरा सहयोग दिया और गत छः वर्षों में एक भी ऐसी घटना नहीं घटी जिससे राज्य के प्रशासन को बट्टा लगता। मैंने देखा कि मैसूर के लोगों का व्यवहार, जिनमें राज्य की ग्रामीण जनता भी शामिल है, बड़ा ही सराहनीय रहा है; इसलिए नहीं कि शासन प्रबन्ध ने कोई विशेष कुशलता दिखायी, बल्कि इसलिए कि लोग जानते थे कि सरकार सच्चे दिल से उनके लिए सेवाकार्य करने की इच्छुक है।

"मैं उन सब देशी तथा अंग्रेजी समाचार पत्रों के प्रति भी आभार प्रकट

करना चाहता हूँ, जो मेरे समय में प्रशासन के प्रति बड़े उदार और निष्पक्ष रहे।"

"अन्त में मैं महाराज के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने एक पथ-प्रदर्शक के रूप में मुझे सदा ही रियासत की सेवा करने के लिए प्रेरित किया है और हर प्रकार की सहायता दी है।"

१० दिसम्बर, १९१८ के दिन मेरे पूर्व अधिकारी दीवान टी० आनन्द राव ने मुझे एक बड़ा ही महत्वपूर्ण पत्र लिखा, जिसे मैं यहां उद्धृत करता हूँ :

"कल के असाधारण गजट में मैंने आपकी छुट्टी जाने के बारे में पढ़ा और कल शाम का 'डेली पोस्ट' भी देखा, जिसमें आपका कल सचिवालय में दिया गया विदाई भाषण छपा है। मुझे लार्ड मार्ले द्वारा लिखित ग्लैडस्टोन की जीवनी का एक अंश याद आ रहा है। पुस्तक का वह अंश, जिसे मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ, आप पर ठीक लागू होता था :

"आप नहीं जानते कि हम में से वे व्यक्ति, जिन्हें सचाई में विश्वास रखने वाले प्रधान मन्त्री के साथ कार्य करने में अत्यधिक प्रसन्नता होती है, आपका कितना सम्मान करते हैं। हम जानते हैं कि हर आदमी गलतियों का पुतला है, परन्तु जब एक आदमी की सत्य-परायणता पर पूर्ण विश्वास हो, तो इस बात से बड़ा सन्तोष होता है।"

अवकाश ग्रहण करने से पूर्व मैं छः महीनों की छुट्टी पर चला गया। छुट्टी समाप्त होने के पश्चात् मेरे अवकाश प्राप्त करने की घोषणा सरकारी गजट में इस प्रकार की गई:—

"....इस अवधि में सर एम० विश्वेश्वरैया ने रियासत के भौतिक साधनों में वृद्धि करने के लिए बड़ी लगन और परिश्रम से कार्य किया। दीवान के रूप में उनके शासन प्रबन्ध द्वारा शिक्षा, सिंचाई कार्यों, रेल-यातायात तथा उद्योग धंधों का भारी विकास हुआ है। उन्होंने रियासत को प्रगति व समृद्धि की नींव पर लाकर खड़ा कर दिया। सर विश्वेश्वरैया जहां भी जायेंगे, रियासत के हर जाति के लोगों की तथा रियासत के महाराज की शुभकामनाएं सदा उनके साथ रहेंगी।"

हाईकोर्ट के अवकाश प्राप्त जज स्वर्गीय श्री सैंटलर ने १२ फरवरी, १९२६ के 'हिन्दू' में प्रकाशित अपने एक लेख में लिखा :

क्योंकि लोहे की क़ीमतें गिर कर पहले से आधी रह गयी थीं। इस अवस्था में महाराज ने रियासत के तत्कालीन दीवान श्री बनर्जी को मेरे पास बम्बई भेजा। महाराज का कहना था कि मैं आकर इस कारखाने का काम संभालूं और इसकी व्यवस्था करने में सरकार की सहायता करूं। सो मुझे इस काम को लेना पड़ा, परन्तु मैंने बता दिया कि खातों की जांच करने के अतिरिक्त मेरे काम में किसी को अधिक दख़ल देने का अधिकार नहीं होगा। कारखाने के काम को ठीक रास्ते पर लाने के लिए एक व्यवस्थापक मण्डल बना कर मुझे उसका अध्यक्ष नियुक्त किया गया। इस प्रकार मैं कारखाने को साढ़े छः वर्षों तक चलाता रहा। इस अवधि में कारखाने के बारे में बहुत-सी निराशावादी भविष्यवाणियां की गयीं। सर आलफ़्रेड चैटर्टन ने, जो पहले रियासत की नौकरी में रह चुके थे, २२ मई, १९२५ के दिन लंदन में रॉयल सोसायटी ऑफ़ आर्ट्स के सामने भाषण देते हुए कहा कि लोहे के इस कारखाने को बन्द करने के सिवा दूसरा कोई चारा ही नहीं। इन सब निराशावादी उक्तियों के बावजूद, तथा कच्चे लोहे और बिक्री के लिए तैयार किये जानेवाले लोहे के माल के भावों में और अधिक कमी हो जाने पर भी, कारखाने के काम में प्रगति होती रही। कारखाने की कार्यकुशलता भी पहले से बहुत बढ़ गयी।

२४ सितम्बर, १९२९ के दिन कारखाने के अध्यक्ष पद से मुक्त होते समय मैंने कारखाने की स्थिति के बारे में जो भाषण दिया उसका सारांश इस प्रकार है :

> "गत छः वर्षों में कारखाने के काम की व्यवस्था में बहुत सुधार हुआ है। कारखाने के लिए कच्चा माल इकट्ठा करने तथा ढोने के खर्चे में भारी कमी हुई है और माल तैयार करने के खर्चे में भी ५० प्रतिशत की कमी हुई है। स्थानीय लोगों को कारखाने में विभिन्न पदों पर काम करने का प्रशिक्षण दिया गया है तथा शासन प्रबन्ध के आधुनिक तरीक़ों को कारखाने में लागू किया गया है। धीरे-धीरे कारखाने को इस अवस्था में पहुँचा दिया गया है कि उनसे अब लाभ की आशा की जा सकती है।"

श्री सी० पी० पैरिन, जिन्होंने इस कारखाने का नक्शा तैयार किया था, जनवरी, १९२७ में इसे देखने आये। वह जमशेदपुर में टाटा इस्पात कारखाने से सम्बन्धित किसी काम से भारत आये थे और वहां से वह कारखाना देखने मैसूर भी चले आये। मेरी उनसे भेंट न हो सकी, क्योंकि उन दिनों मैं यूरोप में था। कारखाने

के निरीक्षण करने के पश्चात् उन्होंने १९ जनवरी, १९२७ को तार द्वारा लंदन में मुझे निम्नलिखित सन्देश भेजा :

"जो व्यवस्था आपने खड़ी की है तथा उससे जो फल प्राप्त हो रहा है, उस सब के लिए आपको बधाई है। कारखाने के काम को देख कर मुझे बड़ी खुशी हुई है और यह बात आज शाम मैं महाराज से भी कहूँगा।

आपका शुभचिन्तक--पैरिन"

बाद में १२ फरवरी, १९२७ के दिन महाराज ने मुझे दिल्ली में एक पत्र लिखा जो इस प्रकार है :

"मैं समझता हूँ कि लोहे के कारखाने का काम बहुत अच्छी तरह से चल रहा है। थोड़े दिन पहले जब श्री पैरिन मैसूर आये थे तो मेरी उनसे भेंट हुई थी। उन्होंने कारखाने की व्यवस्था देख कर बड़ा सन्तोष प्रकट किया था। यह देख उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ था कि आप सारे अमरीकन कारीगरों को हटा कर उनकी जगह पर अपने आदमियों से काम ले रहे हैं। यह एक ऐसी सफलता है जिसके लिए रियासत को गर्व होना चाहिए।"

मैंने सितम्बर, १९२९ में कारखाने के व्यवस्थापक मंडल के अध्यक्ष पद से त्याग पत्र दे दिया। त्यागपत्र देने के कारणों का सम्बन्ध कारखाने के काम से नहीं था।

मेरे त्यागपत्र देने पर महाराज ने ६ अक्तूबर, १९२९ के दिन मुझे एक पत्र लिखा, जो इस प्रकार है .

"पिछले साढ़े छः वर्षों में आपने कारखाने के विकास के लिए जो कार्य किया है, मैं उसकी सराहना किये बिना नहीं रह सकता। मैं समझता हूँ कि इस दिशा में आपने जो महान् कार्य किया है, उसकी प्रशंसा मुझसे अधिक कोई दूसरा व्यक्ति नहीं कर सकता।"

सर मिर्ज़ा इस्माइल ने, जो उस समय रियासत के दीवान थे, मुझे एक पत्र इस प्रकार लिखा :

"यह कहने में ज़रा भी अतिशयोक्ति नहीं कि आप जैसे योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति के बिना कारखाने की बड़ी बुरी दशा होती और मैं समझता हूँ कि वह अब तक बन्द हो गया होता। आपने कारखाने के अध्यक्ष के रूप में बड़ी जिम्मेदारी से अपना कर्तव्य पालन किया।"

मेरे त्यागपत्र देने की खबर सुनकर अमरीकी सलाहकार इंजीनियर श्री पैरिन,

ने २५ नवम्बर, १९२९ के दिन न्यूयार्क से एक पत्र लिखा। पत्र इस प्रकार है :

"मेरे लिए यह कहना कठिन है कि मैसूर राज्य के लोहा कारखाने के व्यवस्थापक मंडल से आपके त्यागपत्र देने की ख़बर सुन कर मुझे कितना दुःख हुआ है।

"आपने कहा था कि कारखाने के निर्माण में हमने जो दिलचस्पी ली उससे कारखाने को बड़ा लाभ हुआ। परन्तु मैं समझता हूँ कि यदि आप इस काम को अपने हाथ में न लेते तो कारखाना कब का बन्द हो गया होता। आपके द्वारा भेजे हुए कागजात को हमने बड़ी दिलचस्पी से देखा और मुझे आशा है कि लोहे के भावों में परिवर्तन होने पर कारखाने को बहुत लाभ होगा और कारखाना बनाने की योजना लाभदायक सिद्ध होगी।

"जहां तक आपका सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि मैंने अपने जीवन के विस्तृत क्षेत्र में आप जैसे लोग बहुत कम देखे हैं। मैं आपके नैतिक चरित्र, देशभक्ति तथा उच्च आदर्शों का ही नहीं, बल्कि आपकी इंजीनियरिंग योग्यता का भी सम्मान करता हूँ।"

जनवरी, १९५० में, यानी कारख़ाने के काम से अलग होने के २० वर्ष बाद, राज्य के उद्योग मन्त्री के कहने पर, मैं उस कारख़ाने को देखने के लिए गया। इस अवसर पर मैंने कारख़ाने की स्थिति के बारे में जो भाषण दिया, वह इस प्रकार है :

"सन् १९४९ तक इस कारख़ाने में कुल १.६९ करोड़ रुपए का माल तैयार होने लगा था और उससे सरकार को १३.१ लाख रुपए की आमदनी होने लगी थी। सरकार ने कारख़ाने पर जितनी पूंजी लगायी थी, वह उसे मूल्य-ह्रास निधि के रूप में वापस मिल चुकी है।

"जैसे-जैसे कारख़ाने का विस्तार तथा विकास होगा, इस पर लगायी गयी पूंजी की रक़म ५ करोड़ रुपए तक पहुंच जायेगी। आशा है कि कारख़ाने का सारा काम पूरा हो जाने के बाद इसमें कुल ५ करोड़ रुपए की क़ीमत का माल बनना आरम्भ हो जायगा और सरकार को इससे ५० लाख रुपए वार्षिक की आमदनी होने लगेगी।"

श्री जय चामराजेन्द्र व्यावसायिक संस्थान

जब मैं कारखाने के काम से अलग हुआ तो मुझे साढ़े छः वर्षों के वेतन के रूप में मिलनेवाली रकम अच्छी खासी हो गयी। मैंने यह रकम सरकार को लौटाते हुए यह प्रार्थना की कि उस से बंगलौर में एक व्यावसायिक संस्थान की स्थापना की जाय। मैंने इस संस्थान की योजना तैयार करके सरकार को भेज दी। सरकार ने, जिसके दीवान श्री एन० माधव राव थे, इस योजना को सहर्ष स्वीकार कर लिया और इस संस्थान को स्थापित करने के लिए अपनी ओर से भी एक बहुत बड़ी रकम खर्च करने को तैयार हो गयी।

मेरे सुझाव पर रियासत के तत्कालीन महाराजा ने मेरे इस सुझाव को भी सहर्ष स्वीकार कर लिया कि संस्थान का नाम उनके नाम पर रखा जाय। सो यह संस्थान आज कल श्री जय चामराजेन्द्र व्यावसायिक संस्थान के नाम से प्रसिद्ध है।

कावेरी नहर समिति

जहां तक कावेरी जलाशय योजना का सम्बन्ध है, मैंने देखा कि सरकार मेरे द्वारा दिये गये सुझावों के अनुसार ही योजना के काम को आगे बढ़ाना चाहती थी और इस काम की हर अवस्था में मेरी सलाह ली जाती थी। जून, १९२४ में महाराज ने मुझे एक पत्र लिख कर यह आशा प्रकट की कि मैं इस योजना के काम में दिलचस्पी लेता रहूंगा, क्योंकि यह बहुत हद तक मेरी अपनी योजना थी।

सरकार की इच्छानुसार कावेरी घाटी में सिंचाई के विकास हेतु कावेरी जलाशय तथा नहर व्यवस्था के निर्माण तथा संरक्षण संबंधी सुझाव देने तथा सिफारिशों के लिए स्थापित समिति का अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया।

समिति द्वारा पेश की गयी योजना सरकार ने मंजूर कर ली और मैं समय-समय पर वहां जा कर नहरों तथा सुरंगों के निर्माण कार्य की देख-भाल करता रहा।

बम्बई प्रान्त में नीरा नहर पर लागू की गयी सिंचाई की खण्ड प्रणाली को यहां भी लागू कर दिया गया और उसकी देख-भाल रियासत के चीफ-इंजीनियर के० आर० सेषाचार को सौंप दी गयी।

कृष्णराजा सागर योजना सिंचाई तथा बिजली की सम्मिलित योजना थी,

और जैसा कि पहले वताया जा चुका है, इससे सरकार को अव प्रत्यक्ष और परोक्ष आय के रूप में लगभग डेढ़ करोड़ रुपए वार्षिक की आमदनी हो रही है।

सन् १९४८-४९ में राज्य के भूतपूर्व चीफ़-इंजीनियर तथा तत्कालीन विशेष मुख्य इंजीनियर द्वारा प्रस्तुत किये गये आंकड़ों के अनुसार सरकार को इस योजना पर लगायी गयी पूंजी पर, प्रत्यक्ष तथा परोक्ष आय के रूप में, १५ प्रतिशत प्रतिफल की प्राप्ति हो रही थी।

वंगलौर की नयी जल-वितरण योजना

वंगलौर की पुरानी जल-वितरण योजना से नगर की आवश्यकताएं पूरी नहीं हो रही थीं। मेरे सुझाव पर सरकार ने अधिक जल देने की नयी योजना तैयार करने के लिए एक समिति वनायी और मुझे उसका अध्यक्ष नियुक्त किया गया। समिति ने ३०,००० लाख घनफुट पानी जमा करने के लिए एक जलाशय वनाने की तजवीज़ पेश की। इस जलाशय से १ करोड़ गैलन साफ़ किया हुआ पानी प्रतिदिन वंगलौर नगर को दिया जाना था।

मैसूर में मोटर कारखाना खोलने का प्रयास

सन् १९३५ में मैं अपनी यूरोप तथा अमरीका यात्रा के दौरान एक मोटर कारखाने की परियोजना तैयार करके लाया था। जैसा कि वाद में २६वें अध्याय में वताया जायगा, भारत सरकार ने युद्ध के कारण इस कारखाने को स्थापित करने की अनुमति नहीं दी। इस कारखाने को वंगलौर में खोलने की तजवीज़ हुई और मैसूर सरकार ने इसके लिए सहायता देना स्वीकार कर लिया। रियासत के दीवान सर मिर्ज़ा इस्माइल इस उद्योग को शुरू करने के लिए वड़े उत्सुक थे और उन्होंने मेरी रिपोर्ट को दोवारा प्रकाशित किया। अमरीका का क्रिसलर कार्पोरेशन कारखाना वनाने के काम में हाथ वटाने तथा सहायता देने के लिए तैयार था। जव यह सव तैयारी हो रही थी, तो ऐसा लगता है कि भारत सरकार ने मैसूर के रेज़ीडेंट से कह कर महाराज को इस तजवीज़ की मंज़ूरी देने से रोक दिया। अतः इस काम को वहीं वन्द कर देना पड़ा।

हिन्दुस्तान हवाई जहाज़ कारखाना

मैंने अपनी विदेश यात्रा में यूरोप तथा अमरीका के तमाम बड़े-बड़े मोटर कारखानों को देखा और भारत लौट कर १९३६ में यहा मोटर कारखाना खोलने के लिए एक योजना तैयार कर के उसे प्रकाशित किया। बम्बई के श्री वालचन्द हीराचन्द इस उद्योग को शुरू करना चाहते थे। उनके कहने पर बम्बई की कांग्रेस सरकार ने १९३६ में उद्योग विभाग के निदेशक श्री पी० बी० अडवानी को तकनीकी सलाहकार के रूप में श्री वालचन्द के साथ अमरीका भेजा।

लौटते समय हवाई जहाज में श्री अडवानी की मुलाकात हवाई जहाजों के जानकार श्री डब्ल्यू० डी० पावले, जो अमरीका के रहनेवाले थे और चीन जा रहे थे, से हो गयी! बातों-बातों में श्री अडवानी ने श्री पावले से भारत के लिए हवाई जहाजों के निर्माण की एक योजना तैयार करके देने को कहा और श्री पावले ने योजना तैयार कर दी। यह योजना श्री वालचन्द ने भारत के सेनापति को भेज दी और कहा कि इस उद्योग को आरम्भ करने के लिए आवश्यक सुविधाए दी जायें। छः महीनों तक इस दिशा में कोई कदम नही उठाया गया। डनकर्क की दुर्घटना के पश्चात् अंग्रेजी सरकार चेती और उसने भारत में हवाई जहाज बनाने का कारखाना खोलने की जरूरत समझी। सो बंगलौर में, श्री पावले की देख-रेख में, हवाई जहाज बनाने का कारखाना खोलने की व्यवस्था की गयी और सर्वश्री वालचन्द हीराचन्द एंड कम्पनी को इसका मैनेजिंग एजेंट नियुक्त कर दिया गया।

कारखाने का निर्माण श्री वालचन्द ने बड़ी सफलतापूर्वक किया। बाद में भारत सरकार ने, मैसूर सरकार की हिस्सेदारी में, इस कारखाने की व्यवस्था अपने हाथ में ले ली। कई कारणों से, शायद भारतीय प्रबन्धकार्य में अविश्वास होने के कारण,हवाई जहाज बनाने का काम एक लम्बे अर्से तक बन्द रहा। आशा है कि भविष्य में इस कारखाने से पूरा-पूरा लाभ उठाया जायगा और जनता तथा सरकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, कारखाने में हवाई जहाजों का निर्माण शुरू हो जायगा।

ग्रामों में उद्योग स्थापित करने की योजना

अखिल भारतीय निर्माता संगठन के अध्यक्ष पद पर काम करने समय मैंने, १९४६ में, ग्रामों के उद्योगीकरण के लिए एक योजना तैयार करके भारत सरकार

को पेश की। भारत सरकार ने उस योजना में अपनी ओर से कोई भी सिफ़ारिश किये बिना उसे तमाम राज्य सरकारों के पास भेज दिया।

मैसूर सरकार ने योजना को तुरन्त स्वीकार करके इसे राज्य के दो ज़िलों में लागू कर दिया। तजवीज यह थी कि यदि इस से इन ज़िलों को लाभ हुआ, तो यह राज्य के सारे देहाती इलाकों में लागू कर दी जायगी।

इस नये काम को चालू हुए अभी छः महीने ही हुए हैं। इस कार्य को मेरे परामर्श के अनुसार राज्य के उद्योग विभाग के एक अधिकारी बड़ी अच्छी तरह से चला रहे हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि इस दिशा में जो प्रगति हुई उसके अन्तर्गत कोई नये उद्योग भी स्थापित किये गये। इन बातों को देखने के लिए पर्याप्त समय ही नहीं रहा।

अध्याय १३

सलाहकार इंजीनियर के रूप में किये गये कार्य

इस अध्याय में उन सब कामों की चर्चा की गयी है जो कि मैंने सरकारी नौकरी से अवकाश प्राप्त करने के बाद एक सलाहकार इंजीनियर के रूप में, किये। इस प्रकार के कामों को चार श्रेणियों में रखा जा सकता है

१. बम्बई तथा कराची के नगर निगमों के शासन प्रबन्ध, धन संबंधी कार्यों, नागरिक सुधार तथा अन्य विकासों के लिए सलाहकार के रूप में;
२. बहुत से शहरों तथा कस्बों के लिए जल-वितरण योजनाएं तैयार करना,
३. कुछ नगरों तथा कस्बों के लिए जल-निकास योजनाएं तैयार करना,
४. अन्य विशेष कार्य।

प्रथम महायुद्ध के समाप्त होते ही बम्बई नगर निगम ने नगर के विकास तथा विस्तार की बड़ी-बड़ी योजनाएं बना डालीं और उन्हें कार्य रूप देने के लिए दिल खोल कर खर्च करना शुरू कर दिया। परन्तु १९२२-२३ में, जब व्यापार में मन्दी आरम्भ हुई तो, योजनाओं के खर्चों में भारी कमी करनी पड़ी और कर्मचारियों की छटनी के लिए एक समिति बनायी गयी। समिति के कहने पर इस काम में सहायता देने के लिए निगम ने मुझे बुला भेजा। मुझसे कहा गया कि मैं खर्च कम करने तथा निगम के शासन प्रबन्ध में सुधार करने के लिए सुझावों की एक प्रारम्भिक रिपोर्ट तैयार कर के दूं।

मैंने करीब डेढ़ महीना लगा कर इस सम्बन्ध में एक रिपोर्ट तैयार कर दी। इस रिपोर्ट में निगम के कुछ विभागों में कर्मचारियों की छटनी कर के १२ से १५ लाख रुपए की बचत करने की सिफारिश की गयी थी। निगम ने १७ जुलाई, १९२४ को मेरी तमाम सिफारिशें मान कर उन्हें कार्यान्वित करना शुरू कर दिया।

मैंने अपनी अन्तिम रिपोर्ट ३१ जनवरी, १९२५ के दिन पेश की। तब तक मेरी पहली रिपोर्ट को व्यावहारिक रूप दे कर, ११.२३ लाख रुपए की बचत की जा चुकी थी। अन्तिम रिपोर्ट दो भागों में थी। पहले भाग में नगर की आर्थिक

आवश्यकताओं तथा जनोपयोगी कार्यों पर प्रकाश डाला गया था और बम्बई नगर के विस्तार के प्रश्न पर भी विचार किया गया था। रिपोर्ट के दूसरे भाग में कर्मचारियों की छटनी करने तथा इंजीनियरिंग विभाग का पुनर्गठन करने के सम्बन्ध में कुछ विशेष सुझाव दिये गये थे।

शासन प्रबन्ध में ये दो महत्वपूर्ण सुधार किये गये, (१) विभागीय अध्यक्षों को शासन प्रबन्ध के स्थानिक अधिकार दे दिये गये, और (२) शासन प्रबन्ध पर नियन्त्रण रखने के लिए अंग्रेजी तरीक़े की एक कार्यवाहक समिति बना दी गयी।

पश्चिम के बड़े-बड़े नगरों, विशेषकर अमरीका के नगरों की भांति, एक म्यूनिस्पिल अनुसंधान कार्यालय स्थापित करने की सिफ़ारिश की गयी। इस कार्यालय का उद्देश्य निगम के काम में कार्य-कुशलता लाना, राजस्व में वृद्धि करना, खर्चे को घटाना तथा कर की दर को कम करना था। शहर में नवयुवकों को तकनीकी तथा वाणिज्य शिक्षा देने की ओर विशेष ध्यान दिया गया और नये कारखानों की स्थापना के लिए कर माफ़ी की व्यवस्था की गयी, ताकि धन उत्पादन की गतिविधियों को प्रोत्साहन मिले। कारीगरों के निवास स्थानों की व्यवस्था करने के सुझाव भी दिये गये। यह भी कहा गया कि बम्बई नगर निगम की ओर से बम्बई के उद्योग-धंधों को कोई विशेष सहायता नहीं दी जा रही। और इस बात पर विशेष बल दिया गया कि बम्बई के पास एक उद्योग क्षेत्र की स्थापना होनी चाहिए।

पानी, गैस तथा बिजली जैसी जनोपयोगी सेवाओं पर, जिनमें पानी को छोड़ कर बाक़ी सेवाओं की व्यवस्था ग़ैर सरकारी कम्पनियों के हाथ में थी, नगर निगम द्वारा सख़्ती से नियन्त्रण रखने पर बल दिया गया।

नगर के उत्तम विकास के लिए यह आवश्यक था कि इस दिशा में काम करने वाले तमाम अभिकरण समान उद्देश्यों को ले कर आगे बढ़ें। यदि जनता को नयी योजनाओं के उद्देश्यों तथा उसकी उपयोगिता के बारे में पूरी-पूरी जानकारी देने की व्यवस्था की जाय तो विकास कार्यों को बहुत अधिक बढ़ावा मिल सकता है। इस बारे में यह सुझाव दिया गया कि सरकार से एक केन्द्रीय मण्डल बनाने को कहा जाय, जिसमें अन्य कई प्रतिनिधियों के साथ उपनगरों के स्थानीय अधिकारी भी हों। बताया जाता था कि इंगलैण्ड में लोग नगरपालिकाओं की योजनाओं में बड़ी रुचि लेते थे। अन्य देशों में भी जनता द्वारा की गयी जांच तथा आलोचना

नगर योजनाओं के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध होती थी। ख्याल था कि यदि केन्द्रीय मण्डल तीन महीनों में एक बार, सप्ताह भर के लिए, बैठक बुला कर नगर में हो रहे विभिन्न योजना कार्यों के बारे में शहर के प्रमुख व्यक्तियों तथा जानकारों के विचार जानने की व्यवस्था करे, तो यही बहुत होगा।

कराची नगरपालिका का शासन प्रबन्ध

कराची नगरपालिका के अध्यक्ष ने २६ जुलाई, १९२४ को एक पत्र लिख कर मुझ से कहा कि मैं कराची नगरपालिका की आर्थिक व्यवस्था की पूरी जांच करके उसमें सुधार करने तथा छटनी करने के बारे में सुझाव दूं। बाद में मुझ से नगरपालिका के विभिन्न विभागों का पुनर्गठन करने के बारे में सलाह मांगी गयी। मैंने छ सप्ताह लगा कर नगरपालिका के शासन प्रबन्ध में सुधार करने के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट तैयार कर के दी, जिसका शीर्षक था 'कराची नगरपालिका की आर्थिक तथा प्रशासन व्यवस्था सम्बन्धी सर्वेक्षण और सुझाव।' रिपोर्ट उस प्रकार के नगर सर्वेक्षण के आधार पर तैयार की गयी थी, जिस प्रकार का सर्वेक्षण अमरीका तथा कनाडा जैसे देशों में किया जाता है और जिसमें नगर की प्रमुख आवश्यकताओं की मोटी-मोटी बातें तथा उन्हें पूरा करने के बेहतरीन तरीकों के बारे में सुझाव और सिफारिशें थीं। रिपोर्ट में नगरपालिका की आर्थिक स्थिति का सर्वेक्षण किया गया था और उसके विभिन्न विभागों के काम की आलोचना की गयी थी। इसके अतिरिक्त भावी योजनाओं के बारे में सुझाव भी दिये गये थे। कर्मचारियों की छटनी से नगरपालिका को ३.६५ लाख रुपए की बचत होने की सम्भावना थी। नगरपालिका में लोकनिर्माण समिति तथा भण्डार समिति की स्थापना करने की सिफारिश की गयी। यह भी बताया गया कि कराची नगरपालिका की आर्थिक स्थिति भारत के अन्य शहरों की नगरपालिकाओं की आर्थिक स्थिति से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। जहां तक उनके बारे में की गयी आलोचना का सम्बन्ध है, रिपोर्ट में कहा गया, "लोग कहते हैं कि नगरपालिकाओं का पैसा बर्बादी के गड्ढे में जा रहा है, लेकिन यह काम इतनी मन्द गति से होता है कि बर्बादी की नौबत ही नहीं आती।" यह शब्द युद्ध के पश्चात् एक अमरीकी ने अंग्रेजी अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्ध में कहे थे।

के पुनर्निर्माण के बारे में परामर्श देने के लिए मुझे दो तीन बार ग्वालियर जाने का अवसर प्राप्त हुआ।

हैदराबाद (सिंध) नगरपालिका की प्रार्थना पर मैंने सिंध नदी पर जल प्राप्त करने वाले कुओं का नक्शा बना कर दिया।

मुझे दो-तीन बार बम्बई नगर की जल-वितरण योजना के बारे में सुझाव देने के लिए बम्बई भी जाना पड़ा। एक बार एक 'कन्सल्टिंग इंजीनियर' ने मुझे इस काम में सहायता दी।

नागपुर शहर की जल-वितरण योजना के लिए निकटवर्ती नदी का जल प्राप्त करने का सुझाव भी मैंने दिया था। इस काम के लिए मैं तीन सप्ताह नागपुर में रहा। इस योजना को कार्य रूप देने के लिए एक समिति बना दी गयी, जिसके सदस्यों की सिफारिश मैंने ही की थी।

गोवा सरकार के कहने पर मैंने गोवा जाकर वहां के बन्दरगाह के लिए एक जल-वितरण योजना तैयार कर के दी।

राजकोट नगरपालिका की प्रार्थना पर मैंने वहां के जलाशय का पुनर्निर्माण करने की तजवीज पेश की। जलाशय के कच्चे बांध में दरारें पड़ गयी थीं।

भावनगर शहर को जिस जलाशय से पानी दिया जाता था, उसका पुनर्निर्माण करके उसे पहले से बड़ा कर दिया गया।

इसके अतिरिक्त बम्बई सरकार की नौकरी में रहते हुए तथा अवकाश ग्रहण करने के पश्चात्, मुझे बड़ौदा, सांगला, मोरवी, पंडरपुर तथा अहमदनगर जैसे कई अन्य नगरों की जल-वितरण सम्बन्धी समस्याओं के बारे में सुझाव देने के अवसर प्राप्त हुए। यह पहले बताया जा चुका है कि जिस समिति ने बंगलौर नगर की जल-वितरण योजना तैयार की थी, उसका मैं अध्यक्ष था।

आधुनिक जल-निकास योजनाएं

सन् १९०८ में मैंने पूना नगर के लिए एक आधुनिक पम्पिंग मलमार्ग योजना तैयार करके दी। मलमार्ग निर्माण करने का काम एक यूरोपियन इंजीनियर को सौंप दिया गया।

हैदराबाद नगर (दक्षिण) की जल-निकास योजना का काम भी मेरी देख रेख में हुआ था।

धुलिया नगर की जल-निकास योजना भी मैंने ही १८९० में तैयार करके दी थी।

जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, सक्खर तथा अदन की जल-निकास योजनाएं भी मैंने तैयार करके दी थी।

इंदौर की जल-निकास योजना का कार्य भी कुछ समय तक मेरी देख रेख में चलता रहा था।

जैसा कि मैं बता चुका हूँ, मैसूर नगर की जल-निकास योजना उस समय तैयार की गयी थी, जब कि मैं रियासत का चीफ इंजीनियर था।

पाठकों के लिए शायद यह बात रुचिकर हो कि जब मैं १९०८ में यूरोप की यात्रा पर गया, तब मैंने कुछ ऐसे नगर देखे जिनकी जल-निकास व्यवस्था बड़ी ही उत्तम थी। मिलान, पैरिस, डुसेल्डोर्फ तथा लंदन में मैंने गहरे जमींदोज मल-मार्गों में जा कर उनकी बनावट का निरीक्षण किया था। उन अवसरों पर मल-मार्गों में प्रकाश तथा वायु का संचालन करने की विशेष व्यवस्था की गयी थी।

अन्य विशेष कार्य

उड़ीसा में मैंने बाढ़ नियन्त्रण सम्बन्धी एक रिपोर्ट तैयार कर के दी। यह रिपोर्ट महात्मा गांधी के कहने पर तैयार की गयी थी। एक कांग्रेसी नेता श्री नित्यानन्द कानूनगो उस समय उड़ीसा में लोक-निर्माण कार्यों के मन्त्री थे। पहले मैंने उड़ीसा जाकर, अप्रैल, १९३८ में, बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया और फिर एक रिपोर्ट तैयार कर के दी। मैंने सुझाव दिया कि इस काम के लिए दो इंजीनियरों तथा कुछ स्थानीय अधिकारियों की एक समिति बना दी जाय। परन्तु उड़ीसा राज्य सरकार के पास पैसे की कमी होने के कारण इस दिशा में कोई विशेष कार्य नहीं हुआ। अब आजकल, केन्द्रीय सरकार की सहायता से, महानदी के ऊपरी भागों में 'हीराकुंड' नामक जलाशय का निर्माण किया जा रहा है।

सन् १९४७ में, मद्रास तथा हैदराबाद (दक्षिण) सरकार के कहने पर, मैं तुंगभद्रा बांध का निर्माण कार्य देखने के लिए गया। किसी एक इंजीनियरिंग

प्रश्न को ले कर, इन दोनों राज्यों के मुख्य इंजीनियरों के बीच मतभेद हो गया था और मुझे उसके बारे में सुझाव देने के लिए बुलाया गया था। बातचीत के पश्चात् इस सम्बन्ध में फ़ैसला हो गया जो दोनों दलों को मान्य था। भोपाल के नवाब के कहने पर मैंने, भोपाल नगर में बिजली पानी की सप्लाई के मामले की जांच पड़ताल की तथा उपयुक्त प्रस्ताव पेश किये।

सौराष्ट्र में पानी जमा करने के लिए कई जलाशयों का निर्माण होना था। इस सम्बन्ध में सुझाव देने के लिए सौराष्ट्र सरकार ने मुझे बुलावा भेजा और १९४९ में मैं वहां गया।

जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, मैंने हैदराबाद (दक्षिण) तथा इंदौर जैसे नगरों के निर्माण कार्य के लिए भी सुझाव दिये थे।

बम्बई नगर के लिए पेश की गयी मेरी एक तजवीज़ की चर्चा करते हुए बम्बई के गवर्नर लार्ड सिडनहाम ने बम्बई में अंधेरी के नये बाजार का उद्घाटन करते समय कहा :

> "... ...और अब मैं साल्सैट के सामान्य विकास के बारे में कुछ कहना चाहता हूं, जिसमें मेरी विशेष दिलचस्पी है। इस प्रश्न की ओर सब से पहले मेरा ध्यान श्री विश्वेश्वरैया की एक रिपोर्ट द्वारा आकृष्ट हुआ था और फिर बाद में मैंने इस योग्य इंजीनियर के साथ इस सम्बन्ध में स्वयं बातचीत की।"

अध्याय १४

सरकारी तथा सार्वजनिक समितियों में

सरकारी नौकरी के दौरान में मुझे कई समितियों मे काम करने का अवसर मिला, परन्तु इस पुस्तक में मैं केवल उन प्रमुख समितियों का ही उल्लेख करूंगा जिनमे मैंने, सरकारी नौकरी से अवकाश लेने के बाद, एक सदस्य या अध्यक्ष के रूप मे काम किया।

बम्बई तकनीकी तथा औद्योगिक शिक्षा समिति, १९२१-२२

नौकरी छोड़ने के बाद मुझे सब से पहले जिस समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया वह थी तकनीकी तथा औद्योगिक शिक्षा समिति (१९२१-२२)। यह समिति बम्बई सरकार द्वारा नियुक्त की गयी थी। सन् १९२० में माटफोर्ड सुधारों के लागू किये जाने के तुरन्त बाद एक कांग्रेसी नेता को शिक्षा मन्त्री बनाया गया। इस समिति मे १० यूरोपियन और ७ भारतीय सदस्य थे। मुझे समिति का अध्यक्ष बनने के लिए कहा गया। समिति का उद्देश्य बम्बई प्रेजीडेंसी मे, तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा के लिए, वर्तमान साज-सज्जा की जांच पड़ताल करना तथा भविष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यापक योजना बनाना था। रिपोर्ट में समिति के कामो के सम्बन्ध मे संक्षिप्त रूप में यह कहा गया था कि इसे इस प्रकार की तकनीकी शिक्षा प्रदान करने के सुझाव देना है जिससे प्रेजीडेंसी के विभिन्न उद्योगों और धंधों के लिए व्यापारिक सस्थाओं मे उच्च पदो को सभालने में उनके संगठकों तथा विशेषज्ञों को सहायता मिल सके और फ़ोरमैन, अधीक्षक तथा तकनीकी सहायकों आदि के अधीन पदो के लिए एक वर्ग तैयार हो सके। इस जाच पड़ताल के पहले दौर मे सब सदस्यों ने बड़े सहयोग से कार्य किया और हमने एक सर्वसम्मत प्रायमिक रिपोर्ट तैयार कर ली।

इस काम में लगभग एक वर्ष लगा, लेकिन, काम के आगे बढ़ने पर, बम्बई के तत्कालीन गवर्नर ने एक भेंट मे मुझ से कहा कि मुझे शिक्षार्थियों के प्रशिक्षण

के सम्बन्ध में सुझाव दे कर ही सन्तोष कर लेना चाहिए। मुझे यह बात रुचिकर नहीं लगी। मैं और समिति के दूसरे भारतीय सदस्य अल्पसंख्या में थे, फिर भी हमने अपनी बात पूरी कही और यह सिफ़ारिश की कि एक तकनीकी संस्थान स्थापित करने के साथ साथ उन आवश्यकताओं को भी पूरा किया जाय जो तकनीकी शिक्षा के लिए जरूरी हैं। लेकिन अन्त में सभी यूरोपियन सदस्य, एकमत होकर ऐसे सुझावों के विरोधी हो गये, जिनका विस्तार किसी भी रूप में स्थायी दिखाई पड़ता था। यह रिपोर्ट दो भागों में थी। एक भाग यूरोपियन सदस्यों का था और दूसरा भारतीय सदस्यों का। मैंने यह रिपोर्ट अपनी देख-रेख में इसलिए तैयार करायी थी जिससे सभी सदस्य इसे मान लें। लेकिन यूरोपियन सदस्यों ने, एकमत होकर, रिपोर्ट को अपनी इच्छानुसार बदल दिया। भारतीय सदस्यों ने मेरा पूरा मसौदा स्वीकार कर लिया, लेकिन हम लोग अल्पसंख्या में थे।

हालांकि समिति की नियुक्ति प्रान्त की नवसंगठित विधान सभा की इच्छा से हुई थी, परन्तु लर्ड लॉयड ने मुझसे जो कुछ कहा था, उससे यह स्पष्ट था कि बम्बई सरकार का उच्चतर तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा देने का कोई विचार नहीं है। बाद में मुझे लगा कि मैंने अपना लगभग एक वर्ष यों ही नष्ट कर दिया।

रासायनिक उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए बम्बई विश्वविद्यालय समिति

जनता को इस बात पर बड़ी निराशा हुई कि समिति के बहुत परिश्रम करने के बाद भी परिणाम कुछ भी नहीं निकला। बम्बई विश्वविद्यालय के अधिकारियों को भी इससे बड़ी निराशा हुई, लेकिन वे जानना चाहते थे कि क्या विश्वविद्यालय अपने साधनों द्वारा तकनीकी शिक्षा के विकास के लिए कुछ कर सकता है? तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा समिति ने यह सिफ़ारिश की थी कि बम्बई विश्वविद्यालय को अपने यहां एक तकनीकी संकाय स्थापित करना चाहिए और बम्बई नगर में एक तकनीकी कालेज की स्थापना की जानी चाहिए। विश्वविद्यालय के अधिकारी इस तजवीज को कार्य रूप देना चाहते थे, परन्तु इस सम्बन्ध में कोई निर्णय होने से पूर्व, बम्बई सरकार ने विश्वविद्यालय में सुधारों के

लिए समिति नियुक्त कर दी। इस समिति ने भी तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा समिति की सिफारिशों से अपनी सहमति प्रकट की।

मार्च, १९३० में बम्बई विश्वविद्यालय की शैक्षिक परिषद् ने इस प्रश्न पर विचार किया और श्री के० एम० मुंशी के एक प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया, जिसमे मेरी अध्यक्षता मे एक समिति नियुक्त करने का सुझाव दिया गया था। समिति से यह कहा गया कि वह विश्वविद्यालय में रसायन शास्त्र का तकनीकी विभाग स्थापित करने के सम्बन्ध में एक ब्यौरेवार योजना तैयार करे।

मार्च, १९३० मे विश्वविद्यालय ने रासायनिक उद्योगों के विकास के बारे में जांच पड़ताल करने के लिए एक समिति नियुक्त की, जिसमे ७ भारतीय और ३ यूरोपीयन सदस्य थे। इस बात के लिए बम्बई विश्वविद्यालय के अधिकारियों की सराहना करनी चाहिए कि उन्होने समिति के लिए रसायनशास्त्र के विशेषज्ञों तथा उद्योगपतियों का चुनाव किया। इस समिति का अध्यक्ष भी मुझे ही बनाया गया था। इस काम मे लगभग छ. महीने लगा कर एक सर्वसम्मत रिपोर्ट तैयार की गयी और विश्वविद्यालय ने उसे स्वीकार कर लिया। रिपोर्ट में दिये गये सुझावों को कार्यरूप देते हुए विश्वविद्यालय ने एक अपना ही रासायनिक तकनीकी संस्थान स्थापित किया और उसे अस्थायी रूप से फोर्ट के इलाके मे रखा गया। बाद में इसे बम्बई के माटुगा क्षेत्र मे स्थायी रूप से स्थापित कर दिया गया। यह संस्थान विश्वविद्यालय अधिकारियों के देश प्रेम का प्रतीक है। कई लोगों ने निजी रूप से दान देकर भी इस संस्थान की सहायता की और अब यह बहुत अच्छी तरह से चल रहा है।

सिंचाई जांच-पड़ताल समिति, १९३८

इस समिति को बम्बई सरकार ने, दिसम्बर, १९३७ के अन्त में, सिंचाई और उससे सम्बन्धित मामलों की पूरी-पूरी जांच करने के लिए तथा आवश्यक सुझाव देने के लिए नियुक्त किया था। समिति में सरकारी तथा गैरसरकारी, कुल मिला कर, १० सदस्य थे। इसमें केन्द्रीय डिवीजन के आयुक्त, कृषि विभाग के निदेशक तथा सिंचाई विभाग के सुपरिटेंडिंग इंजीनियर जैसे उच्च सरकारी अधिकारी शामिल थे। मुझ से इस समिति का अध्यक्ष बनने का अनुरोध किया गया। समिति

भारतीय अर्थ-व्यवस्था जांच समिति, १९२५

केन्द्रीय विधान सभा जिसका संगठन मांटफ़ोर्ड सुधारों के अनुसार किया गया था, यह चाहती थी कि उद्योगों के सम्बन्ध में आंकड़े इकट्ठे कर के जनता के सामने रखे जायें। इस आन्दोलन को समाप्त करने के लिए सरकार ने भारतीय अर्थ-व्यवस्था जांच समिति नियुक्त की। पंडित हरिकिशन कौल, जो बाद में राजा हरिकिशन कौल हो गये, समिति के सदस्य थे और प्रोफेसर बर्नेट हर्स्ट इसके सदस्य व सचिव थे। मुझे समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया।

समिति को ये कार्य करने थे,

"जो भी सामग्री वर्तमान काल में उपलब्ध है उसकी जांच करके एक ऐसा विवरण तैयार करना, जिससे भारत के विभिन्न वर्गों की आर्थिक स्थिति का पता चल सके; इसके औचित्य पर विचार करना और इस प्रकार के सुझाव देना जिनसे सामान्य आर्थिक सर्वेक्षण सम्भव हो सके। इसके साथ ही इन सुझावों को कार्य रूप देने के ख़र्च का अनुमानित विवरण भी देना था।"

इस समिति ने लगभग सात महीनों तक काम किया; देश के विभिन्न भागों का दौरा किया, बर्मा भी गयी क्योंकि तब बर्मा भारत का ही भाग था। और फिर एक रिपोर्ट तैयार की। श्री बर्नेट हर्स्ट ने, जो कि समिति के सदस्य और सचिव थे, रिपोर्ट से असहमति प्रकट करते हुए एक अलग नोट लिखा।

समिति ने अपनी रिपोर्ट में ऐसे आर्थिक सर्वेक्षण पर बल दिया था, जिसका उद्देश्य ऐसे आंकड़े और जानकारी इकट्ठी करना हो जिनसे वर्तमान अर्थ नीतियां निर्धारित करने तथा अर्थ समस्याएं सुलझाने में सहायता मिल सके और देश के साधनों का विकास करके देश को समृद्धिशाली बनाया जा सके। आंकड़े सम्बन्धी उपलब्ध सामग्री का परीक्षण किया गया और तथ्य एकत्रित करने, उत्पादन, आय, श्रम, वेतन, क़ीमतों, निर्वाह-ख़र्च सूचकांक तथा दूसरे सम्बन्धित मामलों के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करके उन्हें सही रूप में प्रकाशित करने के सुझाव दिये गये। कुछ विशेष सिफ़ारिशें भी की गयीं जिनमें एक यह भी थी कि क़ानून बनाकर एक ऐसे सांख्यिकी संगठन की स्थापना की जाय, जिसके केन्द्रीय और प्रान्तीय कार्यालय हों और सांख्यिकी संग्रह के काम में तालमेल रखा जाय। मैंने पश्चिमी देशों में आंकड़े संग्रह करने की पद्धतियों का अध्ययन किया था सो

उन्ही के आधार पर, मैंने स्थानीय परिस्थितियों के अनकूल एक प्रणाली की सिफ़ारिश की।

केन्द्रीय एसम्बली की एक बैठक में तत्कालीन वाइसराय लार्ड रीडिंग ने इस रिपोर्ट की चर्चा करते हुए इससे अपनी सहमति प्रकट की, लेकिन ऐसा लगता है कि इसे कार्यरूप देने के लिये कोई सक्रिय कदम नही उठाये गये और आकडे सम्बन्धी स्थिति अभी तक असंतोषजनक है।

वैक वे जांच समिति, १९२६

यह समिति भारत सरकार ने इलाहाबाद के मुख्य न्यायाधीश सर ग्रिमवुड मियर्स की अध्यक्षता मे नियुक्त की। इसमें तीन और सदस्य थे। दो भारतीय, जिनमें से एक मैं था, और तीसरे एक यूरोपियन सज्जन थे जो मिस्र मे नौकरी कर चुके थे। समिति के सचिव इंडियन सिविल सर्विस के एक यूरोपियन अफसर थे।

समिति के ज़िम्मे वैक वे सुधार योजना के कार्य के इतिहास की जाच करने तथा भविष्य मे इस काम को चलाने के बारे मे सुझाव देने का काम था।

बम्बई मे कई गवाहो से पूछ-ताछ की गयी, जिनमे एक यूरोपियन ठेकेदार तथा बम्बई नगर निगम के सदस्य भी थे।

समिति की बैठकें लदन मे भी हुई। पहले यह बैठकें पार्लमेंट स्ट्रीट मे हुई और बाद में संसद भवन मे। यहा लॉर्ड लॉयड से भी, जो उस समय मिस्र मे हाई कमिश्नर थे, पूछ-ताछ की गयी।

समिति ने एक योजना बना कर दी, जिसमें यह सिफारिश की गयी थी कि जिस क्षेत्र की भूमि पहले सुधार ली गयी है, उसका विकास ढंग से किया जाय और अधिक भूमि को सुधारने का काम रोक दिया जाय तथा योजना के उन भागो मे जिन्हें अभी हाथ मे नही लिया गया था, कमी कर दी जाय।

बंगलौर राजनैतिक उपद्रव जांच समिति, १९२९

जुलाई, १९२८ मे बंगलौर नगर मे हिन्दू-मुस्लिम दंगे हो गये। इन दंगो के बारे मे जाच करने के लिए सरकार ने एक समिति बनायी और मुझे उसका अध्यक्ष

बनने को कहा गया। मैं तो इस काम को हाथ में नहीं लेना चाहता था, परन्तु महाराज मैसूर के कहने पर मुझे ऐसा करना पड़ा। समिति तीन-चार महीनों तक जांच कार्य करती रही। इस अवधि में समिति ने बहुत-सी साक्षियां प्राप्त कीं और फिर अपनी रिपोर्ट पेश कर दी। रिपोर्ट वैसे तो सर्वसम्मत ही थी, केवल दंगों में भाग लेनेवाले दो समुदायों में से एक के नेता ने उससे असहमति प्रकट की थी।

सक्खर बांध निर्माण समिति, १९२९

सिंध नदी पर बननेवाले सक्खर बांध के निर्माण और उसके भावी स्वरूप के बारे में समाचारपत्रों में कई शिकायतें प्रकाशित हुईं। अतः बम्बई सरकार ने यह ज़रूरी समझा कि केवल भारतीय इंजीनियरों की एक समिति बना कर इस सम्बन्ध में जांच करायी जाय। दो सदस्यों की एक समिति, जिसमें मैं और हैदराबाद के चीफ़ इंजीनियर श्री अहमदअली (बाद में नवाब अली नवाज़ जंग) शामिल थे, इस काम के लिए नियुक्त की गयी। हमने, गर्मी के मौसम में, लगभग साढ़े तीन महीने काम किया। इस अवधि में हम बांध तथा उससे निकली नयी नहरों को देखने भी गये और फिर अपनी रिपोर्ट पेश कर दी, जिसे बम्बई सरकार ने स्वीकार कर लिया। बम्बई के तत्कालीन गवर्नर सर फ़्रेडरिक साईक्स ने इस रिपोर्ट की प्राप्ति सूचना देते हुए मुझे एक पत्र इस प्रकार लिखा :

> "रिपोर्ट बहुत ही सन्तोषजनक है। मुझे विश्वास है कि यह रिपोर्ट परियोजना के काम को आगे बढ़ाने तथा उसे सबके लिए लाभदायक बनाने में सहायता देगी।"

मुझे पता चला कि समिति के सुझावों को कार्यरूप देने का काम दस वर्ष बाद आरम्भ हुआ।

अध्याय १५

राजनैतिक तथा अन्य सम्मेलन

भारत सरकार और देशी रियासतों के भविष्य में कैसे सम्बन्ध हों, इस बारे में विचार करने तथा अपने सुझाव देने के लिए, १९१७ में, राजाओं तथा मन्त्रियों (दीवानों) की एक समिति बना दी गयी। जब मैं मैसूर का दीवान था तो समिति का सदस्य होने के नाते मैंने दो बार इसकी बैठकों में भाग लिया। इनमें से एक बैठक बीकानेर में और दूसरी पटियाला में हुई थी। बीकानेर के स्वर्गस्थ महाराज सर गंगासिंह बहादुर इसके अध्यक्ष थे और अलवर के महाराज तथा रायपुर के सर सिन्हा इसके सदस्य थे।

देशी रियासतों के बारे में सुधारों के कई सुझाव रखे गये। उन पर बहस की गयी और प्रस्ताव पास किए गये। चूंकि अब सारी देशी रियासतें भारत में सम्मिलित हो गयी हैं, अतः उस समय जो प्रस्ताव पास किए गये थे या सुझाव रखे गये थे, उनका यहां उल्लेख करने से कोई लाभ न होगा।

सन् १९२३ में भारतीय विज्ञान कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन लखनऊ में हुआ जिसका सभापति मुझे बनाया गया। सन् १९२४ में बम्बई में भारतीय अर्थ सम्मेलन हुआ और उसका सभापति भी मुझे ही बनाया गया। बंगलोर के भारतीय विज्ञान संस्थान के सदस्य मण्डल ने मुझे प्रधान चुना और, १९३८ से, मैं लगातार नौ वर्षों तक इस पद को संभाले रहा। सन् १९४७ में मैंने स्वयम् प्रार्थना की कि मुझे इस पद से मुक्त कर दिया जाय।

मुझे दो राजनीतिक सम्मेलनों में भाग लेने के अवसर भी प्राप्त हुए, जिनका वर्णन संक्षेप करूँगा।

बम्बई का सर्वदलीय सम्मेलन, १९२२

... १९२१ को प्रिंस ऑफ़ वेल्स बम्बई में आये, तो उस दिन
... नगर में विदेशी कपड़े की होली जलायी जा रही थी।
... में दंगा और खून खराबा भी हुआ। उसी दिन कलकत्ता में

एक शान्ति पूर्ण हड़ताल हुई, परन्तु बंगाल सरकार ने कांग्रेस स्वयंसेवकों की भर्ती को ग़ैरक़ानूनी घोषित कर दिया और बहुत-से लोग गिरफ़्तार कर लिये गये, जिनमें कांग्रेस के प्रधान श्री सी० आर० दास भी थे। कुछ दिन बाद वाइसराय कलकत्ता गये, जहां प्रिंस ऑफ़ वेल्ज़ बड़े दिनों में जाने वाले थे। वाइसराय के इस कलकत्ता प्रवास में कांग्रेसी नेता पंडित मदनमोहन मालवीय ने, कुछ दूसरे नेताओं से सलाह कर, वाइसराय से बातचीत की। बातचीत का उद्देश्य एक गोलमेज़ सम्मेलन बुला कर उन प्रश्नों पर विचार करना था जो जनता में रोष का कारण बने हुए थे। बातचीत का परिणाम यह हुआ कि पंडित मदनमोहन मालवीय के नेतृत्व में एक शिष्ट मण्डल २१ दिसम्बर, १९२१ के दिन वाइसराय से मिलने के लिए गया।

पंडित जी के निमन्त्रण पर इस मण्डल में शामिल होने के लिए मैं भी कलकत्ता जा पहुंचा। इस मण्डल ने, जिसमें श्रीमती ऐनी बेसेंट भी शामिल थीं, सरकार के प्रतिनिधियों और देश के सब राजनीतिक दलों के नेताओं के बीच एक गोलमेज सम्मेलन बुलाने की तजवीज़ पर विचार किया। सम्मेलन का उद्देश्य उन राजनीतिक समस्याओं का हल ढूंढ़ना था जो उन दिनों जनता में रोष का कारण बनी हुई थीं। महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन चलाने का निश्चय किया था, परन्तु वह किसी भी ऐसे उचित मार्ग को अपनाने के विरुद्ध नहीं थे जिससे देश की सब से ज़रूरी मांगें पूरी होती हों।

कलकत्ता में हुई बैठक में वाइसराय ने इस बात का कोई स्पष्ट संकेत नहीं दिया कि गोलमेज़ सम्मेलन बुलाया जायगा या नहीं। फिर भी उन्होंने यह कहा कि उनकी किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि सम्मेलन बुलाने से सदा के लिए इनकार कर दिया गया है। उन्होंने कहा :

> "निश्चय ही मैंने किसी भी ऐसे शब्द का प्रयोग नहीं किया, जिसका इस प्रकार का अर्थ लगाया जा सके। मैंने जीवन में बहुत अनुभव प्राप्त किया है और मैं जानता हूँ कि उन लोगों के साथ बातचीत करने का कोई लाभ नहीं हो सकता, जिनके दृष्टिकोण हमारे सोचने के ढंग से बिल्कुल भिन्न हों।"

तब पंडित मदन मोहन मालवीय कांग्रेस की सभा में भाग लेने और महात्मा गांधी, श्री एम० आर० जयकर तथा एम० ए० जिन्ना के साथ स्थिति पर विचार करने के लिए कलकत्ता से अहमदाबाद गये। इस सभा में राष्ट्रीय कांग्रेस ने कांग्रेस

की सारी गतिविधिया स्थगित कर देने के प्रस्ताव पास किये और लोगों से अपील की कि वे स्वयसेवकों मे भर्ती होकर, बिना किसी प्रकार का प्रदर्शन किये, अपने आपको गिरफ्तारी के लिए पेश कर दें। यह कदम व्यक्तिगत और सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन की पूर्व सूचना थी और मनमाने ढंग से चलनेवाली प्रजापीडक सत्ता से निपटने का यही एकमात्र सभ्य तरीका था जो प्रभावशाली सिद्ध हो सकता था। परन्तु महात्मा गाधी उस स्थिति मे भी पडित मदनमोहन मालवीय, श्री एम० आर० जयकर और श्री एम० ए० जिन्ना के प्रयत्नो द्वारा गोलमेज सम्मेलन के आयोजित होने पर उसमे भाग लेने के लिए तैयार थे।

पंडित मदनमोहन मालवीय ने महात्मा गाधी को इस बात के लिए राजी कर लिया कि वह बम्बई मे होनेवाले सर्वदलीय सम्मेलन में भाग लें। देश के सभी राजनीतिक दलो के साढे तीन सौ प्रमुख नागरिकों को बम्बई में होनेवाले इस प्रतिनिधि सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमत्रित किया गया और लगभग दो सौ सज्जन इस में भाग लेने के लिए पहुचे। सम्मेलन में भाग लेनेवाले सज्जनो के नामों की सूची और सम्मेलन की कार्यवाही की रिपोर्ट सम्मेलन के सचिवों श्री एम० ए० जिन्ना, श्री एम० आर० जयकर तथा श्री के० नटराजन द्वारा एक पुस्तिका के रूप में १९२२ मे प्रकाशित की गयी। इस सर्वदलीय सम्मेलन के बारे में जो भी जानकारी इस परिच्छेद मे दी गयी है, वह उसी पुस्तिका से ली गयी है।

जब सम्मेलन आरम्भ हुआ तो सर शकरन नायर को सम्मेलन का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। पहले दिन तो उन्होने सभा की कार्यवाही को चलाया, परन्तु दूसरे दिन उन्होंने कुछ प्रस्तावों से असहमति प्रकट की और सम्मेलन से हट जाने का निर्णय कर लिया। तब उनके स्थान पर मुझे अध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

उक्त पुस्तिका में इस अवसर पर पंडित मदनमोहन मालवीय द्वारा दिये गये भाषण का उल्लेख इस प्रकार है :

"मुझे खेद है कि हमारे मान्य मित्र सर शंकरन नायर, जिन्होने इस सम्मेलन का अध्यक्ष होना स्वीकार किया था, हमारे कुछ प्रस्तावो से सहमत न हो सके और इसलिए सम्मेलन से अलग हो गये। उन्होंने हमे जो सहायता प्रदान की हम उसके लिए उनके आभारी हैं। सर शंकरन नायर के अलग हो जाने पर समिति ने सर विश्वेश्वरैया को अध्यक्ष निर्वाचित किया है। मुझे विश्वास है कि आप सब लोग समिति द्वारा किये गये इस चुनाव का

परिणाम स्वरूप, जसे चौरीचौरा घटना, बारडोली अवज्ञा आन्दोलन, महात्मा गांधी की गिरफ़्तारी और जेल, जो अब ऐतिहासिक घटनाएं बन गयी हैं, समिति को लगा कि अब वातावरण दूसरा सम्मेलन बुलाने के उपयुक्त नहीं है। इसके पश्चात् समिति ने काम करना छोड़ दिया और वह समाप्त हो गयी।

दक्षिण भारत रियासती जनता सम्मेलन, १९२९

एक और महत्त्वपूर्ण सम्मेलन, जिसका अध्यक्ष बनने के लिए मुझे आमंत्रित किया गया, १४ और १५ फ़रवरी, १९२९ को त्रिवेन्द्रम में होने वाला दक्षिण भारत रियासती जनता सम्मेलन था। इसमें मैसूर, हैदराबाद, पुडुकोट्टा, कोचीन और त्रावन्कोर के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

भारतीय वैधानिक सुधार सम्बन्धी प्रश्न अब एक महत्त्वपूर्ण अवस्था में पहुंच चुके थे और यह सम्मेलन इन प्रश्नों को सुलझाने तथा रियासती जनता के हितों को सुरक्षित रखने के लिए बुलाया गया था। इस सम्मेलन में मैंने जो भाषण दिया, उसमें मैंने भारतीय वैधानिक सुधारों पर विचार प्रकट किये, रियासती जनता की आवश्यकताओं की चर्चा की और भावी भारत में देशी रियासतों तथा राजाओं की क्या स्थिति हो, इस पर अपने विचार रखे।

सम्मेलन ने सामान्य सिद्धान्त और प्रस्ताव स्वीकृत किये, जिन्हें एक स्मृति पत्र के रूप में प्रकाशित किया गया। स्मृति पत्र का शीर्षक था "भारत तथा भारतीय रियासतों का प्रभुसत्ता विधान।"

यह स्मृति पत्र विषय समिति ने तैयार किया था और यह १७ सदस्यों की एक स्थायी समिति द्वारा पेश किया गया था। स्थायी समिति इसलिए नियुक्त की गयी थी कि वह भविष्य में इसके अनुसार कार्य कर सके।

अध्याय १६

विदेश यात्रा–यूरोप और अमेरिका के लिए औद्योगिक शिष्ट मंडल

मैंने दूर दूर तक विदेश यात्राएं की हैं। यहा पर मै उनका सक्षेप मे वर्णन करूंगा और यह भी यह बताने के लिए कि उन्होंने मेरे विचारो को किस प्रकार प्रभावित किया। इनमे मुझे अपनी सरकारी नौकरी के अन्तिम दौर मे, विशेषकर मैसूर राज्य की नौकरी में और अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् कुछ नीतिया निर्धारित करने मे सहायता मिली।

मैंने छ बार विदेश यात्रा की, जिसमे से पाच बार मै अमरीका गया। मुझे विश्वास है कि यदि मैं प्रत्येक यात्रा का कुछ विस्तारपूर्वक उल्लेख करू,तो पाठक गण ऊबेंगे नहीं।

१. पहली बार भारत से बाहर मैं सन् १८९८ मे गया। उस समय तक मैं पूना मे केन्द्रीय विभाग (सिंचाई) के मुख्य इजीनियर के सहायक के पद पर कार्य कर चुका था।

मार्च,१८९८ में मैं जापान गया और लगभग तीन महीनो तक उस देश मे भ्रमण करता रहा। वहा मुझे जो कुछ भी नोट करने योग्य लगा वह मैंने नोट कर लिया और वापस आ कर अपने अनुभवो के आधार पर एक छोटी सी पुस्तक लिख डाली। परन्तु मैंने सोचा कि पुस्तक प्रकाशित करने का उचित अवसर नहीं है। इसके अतिरिक्त उस समय मैं बम्बई सरकार का एक जिम्मेदार अधिकारी था। उस समय सरकार की किसी भी नीति या कार्य की आलोचना करना, चाहे वह ठीक ही हो, अनावश्यक बात होती। पूना को उस समय राजनैतिक आन्दोलनों का केन्द्र समझा जाता था। मैं सरकार तथा सार्वजनिक नेताओं, दोनो से सम्बन्ध बना कर रखना चाहता था। उन दिनों सरकार की किसी भी नीति की आलोचना करना सन्देह की दृष्टि से देखा जाता था और इससे एक सरकारी अधिकारी के रूप मे कार्य करते हुए मेरे रास्ते मे कई रुकावटें आ सकती थी।

२. दूसरी विदेश यात्रा मैंने १९०८ में, बम्बई सरकार की नौकरी से अवकाश प्राप्त करने के बाद, की। इस यात्रा का उद्देश्य दो तीन वर्ष यूरोप तथा अमरीका

में विता कर कुछ लाभदायक अनुभव प्राप्त करना था। परन्तु मुझे यह यात्रा बीच में ही स्थगित करनी पड़ी। जैसा कि मैं पहले वता चुका हूँ, जब मैं इटली में भ्रमण कर रहा था तब मुझे एक तार मिला, जिसमें मुझे इंजीनियरिंग की एक वृहत् समस्या का हल करने के लिए बुलाया था, अर्थात् बाढ़ से नष्ट हुए हैदराबाद नगर का पुनर्निर्माण करने तथा भविष्य में बाढ़ से नगर की रक्षा करने की योजना बनाने के लिए बुलाया गया था। ख़ैर, तो निमन्त्रण स्वीकार करने के पश्चात् भी मैं लगभग पांच महीनों तक यूरोप और अमरीका में रहा। इस यात्रा के दौरान मैंने कुछ समय इटली, यूरोप, अमरीका तथा कनाडा की जल-वितरण योजनाओं और बांध, जल निकास, सिंचाई तथा दूसरे कामों के इंजीनियरिंग विकास का अध्ययन करने में विताया। परन्तु भारत लौटने पर मैं इस बुरी तरह से काम में फंस गया कि मुझे अपने अनुभवों को लिखने का समय ही नहीं मिला। हालांकि मैंने जो सामग्री इकट्ठी की थी उससे मेरे विचारों की अभिवृद्धि ही हुई, परन्तु मैं उन्हें ब्योरेवार यात्रा विवरण के रूप में नहीं लिख सका। चूंकि कुछ दिन पहले मैं वम्बई प्रेज़ीडेंसी में इंजीनियरिंग के नक्शे तैयार करने का काम कर चुका था, इसलिए मैंने इटली के जल निकास, सिंचाई और मिट्टी के कटाव की समस्याओं का, दो महीनों से अधिक समय तक, अध्ययन किया। मैं मिलान के चीफ़ इंजीनियर के साथ वहां के ज़मीन दोज़ मल-मार्गों को देखने के लिए गया। उस अफसर ने मेरा स्वागत तो किया, लेकिन पूछने लगा कि मैं इन ज़मीन दोज़ मलमार्गों के नक्शों के वारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए इतनी परेशानी क्यों उठा रहा हूँ, क्योंकि भारत में यह सब काम तो अंग्रेज़ी अफ़सरों ने संभाल रखे हैं। मैंने उसे वताया कि ऐसी वात नहीं है। यदि भारतीय इंजीनियर कड़ी मेहनत करें तो उनके काम की प्रशंसा होती है और उन्हें काम भी दिया जाता है। अपनी इस वात की पुष्टि में मैंने वताया कि १९०६ में मुझे विशेष कार्य के लिए अदन भेजा गया था।

सन् १९०८ और १९०९ में यूरोप के कई भागों में भ्रमण किया जिनमें स्वीडन और रूस भी थे। स्वीडन, डेनमार्क और हालैण्ड तब तक भी बहुत आगे बढ़े हुए देश थे। मैं वाल्टिक सागरको एक नाव द्वारा पार करके, सेंट पीटर्सवर्ग (अव लेनिनग्राद) भी गया। लेनिनग्राद से मैं मास्को गया। वहां पर भी मैंने सभ्यता का वही स्तर पाया जो यूरोप के अन्य भागों में था। परन्तु यहां जार का शासन था, इसलिए

जनता में असन्तोष फैला हुआ था। जिस ओर भी मैं गया, लन्दन मेरी यात्राओं का केन्द्र रहा। लन्दन में मेरे कुछ पुराने सहयोगी और मित्र थे, जिनसे मुझे यात्रा सम्बन्धी हर प्रकार की सहायता मिली।

इसके पश्चात् मैं न्यूयार्क गया, वहां भारतीय व्यापारियों का एक संघ था। ये लोग बड़े उत्साही, जीवन्त और महत्त्वाकांक्षी थे। उनसे मिलने पर मुझे भारत के मुकाबले अमरीका के आर्थिक विकासों के बारे में जानने का अवसर मिला। मैं कनाडा में ओटावा और टोरन्टो भी गया। वहां से डेट्रायट जा कर मैंने फोर्ड कारखाने का अध्ययन किया। वहां एटन बांध जैसे विशाल जलाशय भी थे जिनसे न्यूयार्क को जल पहुंचाया जाता था। परन्तु अमरीका में उस समय सिंचाई साधनों का अधिक विकास नहीं हुआ था।

कनाडा में मुझे उन सब विभागों के सम्बन्ध में आकड़े दिये गये, जिन्हें विकसित किया जा रहा था। इस काम से सम्बन्धित श्री सी० एस० कोट्स ने मेरे साथ बड़ा अच्छा व्यवहार किया। कनाडा छोड़ने के कुछ वर्ष बाद तक भी उनका मेरे साथ पत्र व्यवहार चलता रहा। इस यात्रा के अन्त में लौटते समय मैं लन्दन और पेरिस भी गया। फिर मार्सेल्स से मैं पी० ओ० के एक जहाज द्वारा बम्बई वापस आ गया।

३. अगली विदेश यात्रा मैंने १९१९ में की। तब मुझे मैसूर सरकार की नौकरी से अवकाश ग्रहण किये लगभग तीन महीने ही चुके थे। बम्बई के कुछ मित्रगण, जिनमें कपड़ा उद्योग से सम्बन्धित सर विट्ठलदास दामोदर ठाकरसे और मूलराज खटाऊ प्रमुख थे, विश्व भ्रमण का कार्यक्रम बना रहे थे। इनमें स्त्री पुरुष मिला कर कुल छः व्यक्ति थे। मैं भी इसी दल में शामिल हो गया और हमने श्रीलंका और सिंगापुर से होते हुए विश्व भ्रमण का निश्चय किया। हम पी०ओ० के जहाज में सवार हो कर बम्बई से कोलम्बो, सिंगापुर, हांगकांग, शंघाई होते हुए जापान में नागासाकी नामक स्थान पर उतरे। मैं जापान में लगभग तीन महीने ठहरा। इस देश में मेरी यह दूसरी यात्रा थी और मैं शिक्षा, उद्योग, वाणिज्य और राजनीति में हुए नये विकासों का अध्ययन करने के लिए गया था। वहां से हम अमरीका जाना चाहते थे। हम सब के लिए एक ही जहाज में स्थान पाना कठिन था, अत: मैं योकोहामा से होता हुआ कनाडा जा पहुंचा। कनाडा में जिस बन्दरगाह पर मैं सब से पहले पहुंचा, उसका नाम विक्टोरिया था। यह बन्दरगाह लकड़ी के

व्यापार के लिए प्रसिद्ध था। लकड़ी के बड़े बड़े लट्ठे नदी में बहा दिये जाते थे और उन्हें, विक्टोरिया के निकट, नदी से निकाल कर चिराई के लिए दोनों ओर जमा कर दिया जाता था। लकड़ी की चिराई के लिए बहुत बड़ी-बड़ी मशीनें लगायी गयी थीं। चिराई का सारा काम मशीनों द्वारा अपनेआप होता रहता था और कारखाने में केवल दो या तीन आदमी ही काम करते थे। तब रेल द्वारा यह लकड़ी ३००० मील दूर, न्यूयार्क जैसी देश के भीतरी भागों की अन्य मंडियों तक, पहुंचा दी जाती।

अमरीका में हमने सीमेन्ट और कागज़ जैसे कुछ उद्योगों का अध्ययन किया। मोटर उद्योग के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए हम डेट्रायट गये। चूंकि मेरे पास भारत सरकार द्वारा दिये गये कुछ देशों के लिए परिचय पत्र थे, इसलिए अमरीका और कनाडा के निर्माताओं तथा सरकारी अधिकारियों ने मेरे साथ बड़ा अच्छा सलूक किया। मैं पहले कई वर्षों तक 'शिकागो कामर्स' नामक एक पत्रिका का ग्राहक रह चुका था। शिकागो के कुछ व्यापारी, जो इस पत्रिका की बड़ी क़द्र करते थे, मेरे साथ बड़ी अच्छी तरह से पेश आये।

यह १९१९ के अन्त की बात है। इससे पूर्व १९०८ में जब मैं पहली बार ओटावा गया था, तो मैंने वहां कुछ मित्र बना लिये थे जिन्होंने मेरी बड़ी सहायता की।

एक छोटी सी घटना से इन व्यावसायी व्यक्तियों की निष्ठा का मुझ पर बड़ा असर पड़ा। शिकागो में मैंने एक व्यापारी से एक चीज़ मंगायी। उसने मुझसे कहा कि वह उसे तैयार करवा कर एक, ख़ास तारीख़ की शाम तक, अपनी महिला सचिव के पास छोड़ देगा। तय यह हुआ कि मैं उस चीज़ के लिए ८ डालर दूंगा। लेकिन मैं चाहता था कि वह चीज़ मुझे एक ख़ास समय तक मिल जाय, इसलिए मैंने यह वायदा किया कि मुझे निश्चित समय तक मिल गया तो मैं १ डालर ज़्यादा दूंगा। जहां तक मुझे याद है, मैं लगभग ५ बजे शाम को उसकी दूकान पर पहुंचा था। उस समय वह अपने दफ्तर में नहीं था, लेकिन मेरी चीज़ उसके सचिव के पास तैयार पड़ी थी। मैंने माल की क़ीमत के साथ एक डालर ज़्यादा दे दिया, ताकि वह यह न समझे कि मैंने जो अतिरिक्त डालर देने का वायदा किया था उसे भूल गया हूँ। उस व्यापारी को मेरे ठिकाने का पता नहीं था, परन्तु वह इतना अवश्य जानता था कि मैं अगले दिन सुबह शिकागो से जाने वाला हूँ। मैं यह देख कर बड़ा हैरान

हुआ कि अगले दिन सुबह वह मुझे ढूंढता हुआ एक डालर लौटाने के लिए मेरे होट
मे आ पहुचा। वह बोला कि मेरा पता उसके पास नही था और मुझे ढूढने के लि
उसे दो तीन होटलों में पूछ ताछ करनी पड़ी। मैंने उससे पूछा कि उसने यह ए
डालर चुपचाप जेब में क्यों नहीं रख लिया, क्योंकि बहुत से व्यापारी लोग ऐसा
करते हैं। उसने उत्तर दिया कि यह अतिरिक्त डालर उसकी हक की कमाई
नहीं है।

"ऐसा कर के मैं अपनी मानसिक शान्ति खो बैठता", वह अपना माथा छू क
बोला। इसके अतिरिक्त अमरीका के इस भ्रमण में कुछ और रोचक घटन
भी हुई।

मैं हार्वर्ड विश्वविद्यालय के अध्यक्ष से मिलने गया और पूछा कि क्या कु
ऐसे विषय भी है जिन्हे उनका सुप्रसिद्ध विद्यालय विशेष महत्त्व देता है ? अध्य
का उत्तर था "हम सभी विषयों को महत्त्व देते है।"

मैं अमरीका के मध्यवर्ती एक अन्य विश्वविद्यालय मे गया हुआ था। बातचं
के दौरान मैंने वहा के अध्यक्ष से पूछा कि विद्यार्थियों को अपनी शिक्षा पर साल
कितना खर्च करना पड़ता है। उन्होंने उत्तर दिया "जिन विद्यार्थियों के भा
कम होते है, हम उन्हें भी काम कर के कमाने और विश्वविद्यालय मे पढ़ाई जा
रखने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।" उन्होने मुझे बताया कि अपने विद्यार्थी जीवन
वह स्वयं इसी प्रकार कमा कर पढ़े थे। परन्तु उन्होंने मुझसे कहा कि मैं इस ब
को किसी और पर प्रकट न करू।

सन् १९२० मे मैंने अमरीका की वित्तीय स्थिति का अध्ययन करने का प्रय
किया और इस सम्बन्ध मे वाशिंगटन मे फैडरल रिज़र्व बोर्ड के अध्यक्ष से मि
गया। बातों बातों मे मैंने उनसे कुछ प्रश्न भारत की वित्तीय स्थिति के बारे
पूछे। मैंने यह भी कहा कि क्या वह कुछ ऐसे सुझाव दे सकते है जिससे इस स्थिनि
कुछ सुधार हो सके। वह हीला-हवाला करने लगे और बोले कि सुदूर भारत
परिस्थितियों को वह वहा बैठे कैसे परख सकते है। इस पर मैंने कहा : "मैं आ
पास इसलिए आया हूँ कि यहा के लोगों ने मुझे बताया था, आप इस देश के सा
सब से योग्य वित्त विशेषज्ञ हैं। आप यह कैसी दलील देते हैं कि आप भारत
विशाल देश की वित्तीय स्थिति को नहीं जानते है ?" मेरे साथ एक योग्य प
प्रदर्शक भी था। उसे वह एक ओर ले गये और बोले : "इन सज्जन मे जा कर ब

कि अपने देश लौट जायें और वहां के विधान को एक राष्ट्रीय सरकार के विधान में बदल दें। तब वह मेरे पास आयें और मैं इन्हें उचित सलाह दूंगा।"

वाशिंगटन में मैंने यह सोचा कि श्री हरवर्ट-हूवर, जो उस समय वाणिज्य सचिव थे, से मिल कर विश्व के मामलों पर, विशेषकर उद्योग के सम्बन्ध में, बातचीत कर के कुछ लाभ उठाऊं। अपनी पहली यात्रा में मैंने वाशिंगटन में कुछ मित्र बनाये थे। इनमें से दो सज्जन जो श्री हूवर को जानते थे, यह चाहते थे कि मैं उनके साथ श्री हूवर से मिलूं और उनसे विचार-विमर्श करूं। मैंने श्री हूवर से राष्ट्रीय विकास के विभिन्न पहलुओं पर काफ़ी देर तक बातचीत की। मैं उन दिनों भारत का पुनर्निर्माण' नामक पुस्तक लिखने की सोच रहा था, जो बाद में लन्दन में प्रकाशित हुई। मुझे पता लग चुका था कि श्री हूवर अमरीकन उद्योगों के विकास में काफ़ी दिलचस्पी ले रहे थे। उन्होंने मुझे बताया कि उनके देश में उद्योगों का कितनी तेज़ी से विकास हो रहा था। मैंने उनसे पूछा कि उनके विचार में ऐसी कौन सी बातें हैं, जिसके कारण भारत इतना पिछड़ा हुआ है। वह बोले : 'आप लोगों में कुछ चैतन्यता नहीं है।' कहने का मतलब यही था कि भारतवासी सुस्त और आरामतलब हैं।

तब मैं वहां से लन्दन वापस आ गया और वहां अपनी पुस्तक 'भारत का पुनर्निर्माण' लिखने के लिए लगभग दस महीनों तक रुका रहा। यह पुस्तक लन्दन के सर्वश्री पी० एस० किंग एण्ड संस लि० द्वारा, १९२० में, प्रकाशित की गयी। लन्दन में रह कर इस पुस्तक को पूरा करने में बड़ी आसानी रही, क्योंकि 'इंडिया आफ़िस लायब्रेरी' से मुझे इस पुस्तक से सम्बन्धित हर प्रकार की जानकारी मिल गयी।

लन्दन की 'रॉयल सोसायटी ऑफ़ आर्ट्स' के भारतीय प्रभाग में एक बार भारतीय समस्याओं पर वाद-विवाद हुआ और मुझे भी इसमें भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया। इस बैठक का सभापतित्व श्री एडविन मॉन्टेग्यु न किया, जो उन दिनों भारत के सचिव थे।

बाद में जब मैं श्री मोन्टेग्यु से मिला, तो उन्होंने मुझे राज्य सचिवों की परिषद् का एक पद संभालने के लिए आमंत्रित किया। यह स्थान भावनगर के सर प्रभाशंकर डी० पट्टणी चले के जाने से खाली हुआ था। सर प्रभाशंकर ने भी इस बात पर ज़ोर दिया कि मैं उनकी जगह संभाल लूं। परन्तु वहां मेरी योजनाओं के लिए

कोई स्थान न था और वहां रह कर किसी भारतीय के लिए अपने देश के लिए कोई उपयोगी काम कर पाना कठिन था।

'भारत का पुनर्निर्माण' नामक पुस्तक प्रकाशित होने के बाद मैं बम्बई वापस आ गया।

४. चौथी विदेश यात्रा मैंने १९२६ में की, जब भारत सरकार ने मुझे बैंक के पुनर्निर्माण जांच समिति का इंजीनियर सदस्य नियुक्त किया। इस समिति की स्थापना कैसे हुई और इसने क्या काम किया, इसकी चर्चा पहले की जा चुकी है।

जब लन्दन में इस समिति का कार्य समाप्त हो गया तो मैं इस्पात बनाने और लकड़ी के पकाव से सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करने के लिए यूरोप और अमरीका में भ्रमण करने चला गया। यह कार्य मैसूर के लोहा बनाने के कारखाने से सम्बन्धित था, जिसके व्यवस्थापक मण्डल का मैं अध्यक्ष था। इस भ्रमण के दौरान मैंने अमरीका में भद्रावती (मैसूर) का कच्चा लोहा बेचने का यत्न भी किया। पहले भी मैं दो-एक बार सार्वजनिक रूप से बता चुका हूं कि अमरीका में निर्माताओं को जिस भाव पर कच्चा लोहा मिल रहा था, हम उससे सस्ते दामों पर उन्हें लोहा दे रहे थे। मैंने अमरीका और स्वीडन में, जहां लोहे व इस्पात का उद्योग लकड़ी के कोयले से चलता था, इस उद्योग से सम्बन्धित हर प्रकार की जानकारी प्राप्त की।

इस भ्रमण में मैंने देखा कि सलाहकार इंजीनियरों की एक संस्था बर्लिन और उसके आसपास स्थापित लकड़ी पकाने के लगभग ८० कारखानों की देख-भाल करती थी।

५. पांचवीं बार मैं १९३५ में भारत से बाहर गया। इस बार मैं मोटर उद्योग आरम्भ करने और उसके नक्शे तैयार करने के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए निकला था। मैंने लगभग छः महीने यूरोप तथा अमरीका में बिताये और इस अवधि में मोटर उद्योग का अध्ययन किया।

सब से पहले मैं इंगलैण्ड में कवेंट्री, ऑक्सफ़ोर्ड, बर्मिंघम और डर्बी के कारखाने देखने गया।

बर्मिंघम में मैं लॉर्ड ऑस्टिन से मिला, जिन्होंने बम्बई में एक मोटर कारखाना स्थापित करने के बारे में मुझे अनुमानित व्यय विवरण तैयार कर के दिये। अन्त में उन्होंने मुझे सलाह दी कि भारत के लिए बिचले आकार की अमरीकी कार ठीक

रहेगी। उन्होंने कहा कि यदि हम छोटी कार चाहते हैं तो इसके लिए उनकी अपनी ऑस्टिन कार बहुत अच्छी रहेगी।

फिर मैं वहां से इटली, जर्मनी तथा फ्रांस चला गया और ट्यूरिन के समीप एक्स ला बेन्स के स्थान पर एक महीना रहा।

मैंने ट्यूरिन में वह कारखाना भी देखा जहां फिएट कार बनती थी। फिएट कारखाने की एक विशेषता यह थी कि वह कई मंजिल ऊंची इमारत में बना हुआ था और नीचे से सारा सामान ट्रकों द्वारा ऊंचे उठते घुमावदार रास्ते से ऊपर पहुंचाया जाता था। रास्ते के दोनों ओर कारखाने का काम होता रहता था।

तब मैं वहां से अमरीका चला गया और न्यूयार्क में मेरी भेंट एक रूसी इंजीनियर से हो गयी, जो रूस में मोटर उद्योग स्थापित करने के विचार से आवश्यक जानकारी प्राप्त करने के लिए अमरीका आया हुआ था। उन्होंने मुझे बताया कि इस काम में सहायता देने के लिए उनके साथ ४० रूसी इंजीनियर आये हुए हैं। उन लोगों को रूस में, अमरीकी मॉडल की एक पूरी गाड़ी का उत्पादन करने का विचार कर के, उससे सम्बन्धित तकनीकी तथा दूसरी जानकारी हासिल करनी थी।

इसके पश्चात् मैं फ़ोर्ड कारखाने के सुविख्यात जनरल मैनेजर श्री चार्ल्स ई० सोरेन्सेन से और डेट्रायट में जनरल मोटर्स कारपोरेशन के दो जानकारों, श्री डब्ल्यू० एस० नडसन तथा श्री किटरिज, से मिला। मैंने लगभग एक महीना डेट्रायट में बिताया। इस अवधि में मैं इस बात की जांच करता रहा कि भारत में किस प्रकार एक अच्छे ढंग का कारखाना स्थापित किया जा सकता है। अनुमानित व्यय विवरण तैयार किये गये और अमरीका में कई मोटर कारखानों के अध्यक्षों ने उनकी जांच भी की। मैं पहले बता चुका हूं कि किस प्रकार भारत में इस सारे किये कराये पर पानी फेर दिया गया। बहुत समय तक तो भारत सरकार ने इस उद्योग को आरम्भ करने की अनुमति ही नहीं दी और जब अनुमति मिली, तो बम्बई के व्यवसायियों में कोई एकता नहीं हो सकी, हालांकि १९३४-३५ में वे लोग पूर्णरूप से इस उद्योग के पक्ष में थे और उन्होंने मुझे हर प्रकार की सहायता देने का विश्वास दिलाया था।

अमरीका से मैं जो रिपोर्ट और परियोजना तैयार कर के लाया था, वह भारत में दो बार छापी गयी। इस रिपोर्ट और मेरी व्यक्तिगत प्रार्थना के परिणामस्वरूप बम्बई सरकार ने श्री वालचन्द हीराचन्द और उनके सहयोगियों को बम्बई प्रान्त

में मोटर बनाने का कारखाना स्थापित करने के लिए कुछ सुविधाएं दीं। सरकार ने तकनीकी जांच-पड़ताल तथा अंग्रेजी या अमरीकी मोटर बनाने वाले कारखानेदारों के साथ बातचीत करने के काम में, श्री वालचन्द की सहायता के लिए, तत्कालीन उद्योग निदेशक श्री पी० बी० अडवानी को नियुक्त कर दिया। ये दोनों सज्जन अमरीका के लिए रवाना हो गए और डेट्रायट पहुंच कर श्री हेनरी फोर्ड और उनके जनरल मैनेजर श्री सोरेन्सेन से व्यक्तिगत रूप से बातचीत की। वे फोर्ड कारखाने के इंजीनियरों के साथ कुछ सप्ताह रहे और भारत में मोटर कारखाना स्थापित करने के बारे में तकनीकी और आर्थिक पहलुओं की जांच-पड़ताल की। इस जांच-पड़ताल के बाद जब फोर्ड कम्पनी के व्यवस्थापक इस बात से सन्तुष्ट हो गये कि मूल योजना तकनीकी और आर्थिक दृष्टि से परिपूर्ण है, तब इन दोनों सज्जनों, श्री वालचन्द तथा श्री अडवानी ने, बम्बई सरकार और मुझे तार द्वारा सूचित कर दिया कि योजना पर अमल करना सम्भव है। श्री अडवानी ने फोर्ड कम्पनी के साथ एक समझौते के लिए बातचीत की, जिससे भारतीय संगठन को तकनीकी सहायता प्राप्त हो सके। बाद में श्री हेनरी फोर्ड को यह पता चला कि एक समझौते के अनुसार राष्ट्रमण्डलीय देशों में फोर्ड मोटर बेचने तथा बनाने के सब अधिकार कनाडा की फोर्ड मोटर कम्पनी को प्राप्त है। तब कनाडा फोर्ड कम्पनी से इस सम्बन्ध में बातचीत की गयी। कम्पनी ने बताया कि जब तक कारखाने में उसके ५१ प्रतिशत हिस्से न रखे जायें, वह कोई भी समझौता करने के लिए तैयार नहीं है। परन्तु कम्पनी की यह शर्त नहीं मानी गयी और श्री अडवानी ने डेट्रायट के क्रिस्लर कारपोरेशन से बातचीत शुरू की। जब क्रिस्लर कारपोरेशन को इस बात की तसल्ली हो गयी कि तकनीकी और आर्थिक दृष्टि से बम्बई में मोटर बनाने का कारखाना स्थापित करना एक व्यावहारिक तजवीज है तो कारपोरेशन से एक समझौता कर लिया गया। तब, इस समझौते के परिणाम स्वरूप, बम्बई में प्रीमियर आटोमोबाइल्स की स्थापना की गयी।

हमारे सब प्रयत्नों के बावजूद भारत सरकार ने दूसरे महायुद्ध के दौरान इस उद्योग को विकसित होने का अवसर नहीं दिया। यह बात दो तीन बार दुहरायी जा चुकी है कि किस प्रकार बम्बई के व्यवसायी, मुख्यतः सरकारी सहायता के अभाव में, यह उद्योग चालू नहीं कर पाये। इस प्रकार की किसी भी लाभदायक योजना के लिए लोगों को संगठित करना तब तक बहुत मुश्किल है, जब तक सरकार

औद्योगिक संस्थानों को चलाने तथा विदेशी माल देने के सारे अधिकार अपने हाथ में रखे रहती है।

६. अगली बार, १९४६, में मैं अखिल भारतीय निर्माता संगठन, बम्बई के नौ सदस्यों के एक शिष्ट मण्डल के साथ भारत से गया। सब से पहले इस दल के सभी लोग लन्दन पहुंचे। हम वहां कई उद्योग धंधों को देखने के लिए गये, जिनमें कपड़ा, इंजीनियरिंग, रासायनिक उद्योग और ब्रिस्टल तथा डर्बी के हवाई जहाज़ बनाने के कारखाने शामिल थे। जिन सब फैक्ट्रियों में हम गये, वहाँ के व्यवस्थापकों ने बड़ा ही शिष्ट व्यवहार किया। कुछ ने तो अतिथि सत्कार भी किया और जो जानकारी हम चाहते थे, वह सब तो हमें कई व्यवस्थापकों ने दी।

इंगलैण्ड से हम अमरीका और कनाडा के लिए रवाना हो गये। वहां भी हमने कई बड़े बड़े उद्योगों को देखा जिनमें नियागरा जल प्रपात पर बना बिजली घर और शिकागो के बहुत से इंजीनियरिंग कारखाने भी शामिल थे। कुछ दिन हमने नहर पार के डेट्रायट और विंडसर के कारखाने देखने में लगाये। न्यूयार्क के निकट हमने एक हवाई जहाज़ों का कारखाना भी देखा। चूंकि मुझे टी०वी०ए० (टेनीसी घाटी योजना) में व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी थी, इसलिए मैं अकेला ही न्यूयार्क से नाक्सवील गया और वहां से हवाई जहाज़ द्वारा लौट आया।

अमरीका और कनाडा का भ्रमण समाप्त करने के पश्चात् हममें से कुछ लोग, अलग अलग दल बना कर, फ्रांस और यूरोप के दूसरे हिस्सों में बड़े बड़े उद्योगों को देखने के लिए चले गये।

अपनी वापसी यात्रा पर, इंगलैण्ड से रवाना होने से पूर्व, मण्डल के सभी सदस्य दिसम्बर १९४६ में लन्दन में होने वाले उद्योग मेले को देखने गये। भारत लौट कर मण्डल के सभी सदस्यों ने २९८ पृष्ठों की एक रिपोर्ट प्रकाशित करने में सहयोग दिया। इस रिपोर्ट में सदस्यों के अपने अनुभवों के साथ साथ भारत में उद्योग धंधों को तेज़ी से विकसित करने के बहुमूल्य और व्यावहारिक सुझाव भी दिये गये थे।

अध्याय १७

भावी भारत के लिए कुछ उपयोगी बातें

राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा

अब तक इस पुस्तक में मैंने व्यक्तिगत कार्य और अनुभवों का ही संक्षिप्त विवरण दिया है। मैं यह पहले बता चुका हूँ कि किस प्रकार, ६६ वर्ष पूर्व, बम्बई में सरकारी नौकरी पाकर मैंने अपनी जीवन-वृत्ति आरम्भ की थी। इस काफी लम्बे अर्से में मुझे कई बार राष्ट्र के महत्वपूर्ण प्रश्नों के अध्ययन के अवसर मिले और देशी तथा विदेशी राजनीतिज्ञों, विचारकों और लेखकों के साथ भारत की तुलनात्मक आर्थिक स्थिति के बारे में विचार-विमर्श करने का मौका भी मिला।

इस अवधि में ग्रामीण जनता के हितों की ओर ध्यान देने के भी पर्याप्त अवसर मिले विशेषकर उन दिनों जब कि बम्बई प्रेजीडेंसी में मैं सिचाई सम्बन्धी कामों पर लगा हुआ था और मैसूर में प्रशासन सम्बन्धी कार्य को सम्भालते हुए था। इसके अतिरिक्त बहुत सी देशी रियासतों तथा भारत के अन्य भागों में मुझे सिंचाई, जल-वितरण, जल-निकास, प्रशासन तथा अन्य राष्ट्रीय व प्रादेशिक समस्याओं के बारे में सुझाव देने के लिए जाना पड़ा।

आर्थिक प्रश्नों की ओर मैंने विशेषरूप से ध्यान दिया। मेरे द्वारा प्रकाशित की गयी दो अलग-अलग[1] पुस्तकों[1] में इनकी चर्चा की गयी है। मैं चाहता हूँ कि पुस्तक के इस अध्याय और अगले दो अध्यायों में मैं उन व्यावहारिक समस्याओं पर कुछ विचार प्रकट करूं जिनका सामना भविष्य में हमारे देश को करना पड़ेगा।

अब भारत पराधीनता की बेड़ियां तोड़ कर स्वतन्त्र हो चुका है। इसकी, वर्तमान स्वतन्त्र स्थिति में जहां विकास और प्रगति के कई रास्ते खुल गये हैं, वहां इसके लिए कुछ नये संकट भी पैदा हो गये हैं और जिम्मेदारियां बढ़ गयी हैं।

---

१. 'भारत का पुनर्निर्माण' और 'भारत की अर्थ व्यवस्था'।

यदि सावधानी बरती जाय तो संकट कम हो सकते हैं और जिम्मेदारियों को भी निभाया जा सकता है। परन्तु परमाणु बम और हाईड्रोजन बम जैसे कुछ संकट ऐसे हैं जो अभी-अभी पैदा हुए हैं और जिनसे सारे विश्व को ख़तरा है। यह संकट तो ऐसे हैं कि जिनसे पूरी तरह से बचाव भी नहीं किया जा सकता।

जन संख्या का तेज़ी से बढ़ना

भारत की जन-सख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है जबकि उस अनुपात से न तो उत्पादन में वृद्धि हो रही है और न सन्तोषजनक ढंग से रहन-सहन के लिए आय में बढ़ोतरी हो रही है। न्यूयार्क से प्राप्त हाल ही के एक संवाद से पता चला है कि १९४३ में संसार की जन-संख्या २३,१६० लाख के क़रीब थी। इससे यह पता चलता है कि यह संख्या सन् १९०० की जनसंख्या से ७,००० लाख अधिक है। चीन और जापान की तरह भारत में भी जन्म तथा मृत्यु दर बहुत बढ़े-चढ़े हैं। विभाजन से पूर्व भारत की जनसंख्या जो १९३१ में ३५३० लाख थी, १९४५ में ४०३० लाख हो गई। विभाजन के बाद भारत की जनसंख्या ३३७० लाख थी और हाल के अनुमानों से पता चला है कि यह ३२·५० लाख प्रतिवर्ष के हिसाब से बढ़ती जा रही है।

सन् १९४३, में जब कलकत्ता की सड़कों पर भुखमरी से मरने वालों के चित्र अख़बारों में प्रकाशित हुए, तो उन्हें देख-देख कर भारत की जनता को बड़ा भारी धक्का लगा। इससे पता चलता है कि देश की जनसंख्या देश में उपलब्ध खाद्य सामग्री से अधिक हो गयी है। अतः इस महासंकट से बचने के तीन-चार उपाय हैं, जिन्हें अपनाकर इस संकट को ५०-७५ वर्ष तक टाला जा सकता है।

यह उपाय या तो अधिक अन्न उपजाने के रूप में हो सकते हैं या परिवार नियोजन के रूप में, जैसा कि आबादी रोकने के लिए बहुत-से सभ्य देशों में होता है। अन्यथा यह देश अकाल के भय से मुक्त नहीं हो सकता।

"अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन—अब सरकार अधिक अन्न

उपजाओ आन्दोलन चला रही है और लोगों से यह कह रही है कि देश में अन्न की अधिक से अधिक फ़सलें उगायी जाएं।

पिछले पांच वर्षों में सरकार ने २०९० लाख टन अन्न प्रतिवर्ष के हिसाब से विदेशों से मगाया है। सबसे अधिक अन्न, अर्थात् ४० लाख टन, १९४८-४९ में आया था। अभी हाल ही में सरकार ने यह निर्णय किया है कि अन्न का आयात धीरे-धीरे कम करके, १९५२ के बाद, बिलकुल बन्द कर दिया जायगा। सरकार को इस बात का विश्वास है कि यदि कोई अनहोनी घटना न हो गयी तो, उसकी योजनाओं के अनुसार देश, उस समय तक अन्न में स्वावलम्बी हो जायगा।

अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन को ठीक ढंग से लागू करने के लिए प्रत्येक गांव में निम्नलिखित आंकड़े रखने जरूरी हैं

(क) अन्न की खेती वाली भूमि का क्षेत्र।

(ख) उत्पादन का अनुमान और पिछली फसल की कीमत।

(ग) प्रत्येक क्षेत्र में जमा अनाज का अनुमान।

अगर यह आंकड़े इकट्ठे कर लिये जायें और उनके अभिलेखों को ठीक ढंग से रखा जाय तो ग्रामीण जनता के लिए आंकड़ों को ध्यान में रख कर बहुत कुछ समझना सरल हो जायगा।

भारत एक ऐसा देश है जहां वर्षा के बारे में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। यहां प्रायः हर साल ही ऐसा होता है कि देश के किसी न किसी भाग में सूखा पड़ जाता है और किसी-किसी साल तो इसकी लपेट में आया इलाका विस्तृत हो सकता है और दूर-दूर तक विनाश फैल सकता है, जैसा कि सन् १९४३ में बंगाल में हुआ। अतः यह जरूरी है कि देश में अधिक से अधिक जलाशय बना कर उनमें सिंचाई के लिए पानी जमा करके रखा जाय। भारत सरकार ने पहले इस दिशा में कुछ कदम उठाया भी है।

ग्राम औद्योगीकरण योजना को अपनाने के लिए यह जरूरी है कि या तो ग्राम समितियां बनाकर उनके इलाके में अधिक अन्न उपजाने का काम उन्हें सौंप दिया जाय, या औद्योगिक तथा अन्य उत्पादनों को इस ढंग से नियोजित किया जाय कि वे अपनी आवश्यकताओं के लिए अतिरिक्त अन्न दूसरी जगहों से खरीद

दो वर्षों के लिए खाद्य सामग्री

औद्योगीकरण योजना में यह तजवीज़ भी है कि प्रत्येक ग्राम समिति को अपने क्षेत्र में दो वर्षो के लिए अन्न का भण्डार जमा रखने की जिम्मेदारी भी सौंप दी जाय। इसका यह मतलव नहीं कि हर एक परिवार अलग अलग रूप से दो वर्षों के लिए खाद्य सामग्री जमा करे, वलिक यह कि उस ग्राम क्षेत्र में एकत्रित अन्न वहां की सारी आवादी के लिए दो वर्षो तक काफ़ी हो।

लगभग पचास वर्ष पूर्व हमारे देश में गावों के समृद्ध लोग इस वात की सावधानी वरतते थे और आमतौर पर साधारण अकाल के दिनों में दूसरे लोगों का भरण-पोषण करने की जिम्मेदारी ले लेते थे।

जनसंख्या पर रोक—जनसंख्या इस तेज़ी से वढ़ रही है कि यदि इसे रोकने के उपाय न किये गये तो संभव है कि भविष्य में अकालों की गिनती भी वढ़ जाये। अनुभव इस वात को सिद्ध करता है कि अधिक वच्चे होने से लोगों के पास स्वस्थ परिवार पालने का मौक़ा नहीं रहता तथा आराम देह और स्थिर जीवन नहीं विता सकते।

प्रगति के इस युग में छोटे परिवार वाले व्यक्ति अधिक सुख-सुविधाएं प्राप्त कर सकते हैं और अपना जीवनस्तर ऊंचा उठा सकते हैं। जिन देशों के लोग अपने परिवारों का ठीक ढंग से नियोजन करते हैं, वे भूख और ग़रीवी से वचे रहते हैं।

परिवार नियोजन मण्डल—यह मण्डल अमरीका में पिछले कुछ वर्षो से कार्य कर रहा है। इसका काम जन्म निरोध द्वारा आवादी को सीमित रखने के वारे में प्रचार करना है। इस देश में भी पिछले कुछ वर्षों में कई वड़े-वड़े महिला सम्मेलन हुए, जिनमें जन्म निरोध पर वल दिया गया। यदि भारत में जन्म निरोध को न अपनाया गया तो हो सकता है कि भविष्य में लोगों को अन्न के अभाव का सामना करना पड़े।

सरकार परिवार नियोजन के सिद्धान्त को लोकप्रिय वनाने के लिए वहुत कुछ कर सकती है। वह जन्म-निरोध की समस्याओं को सुलझाने और उसके प्रचार के लिए चिकित्सा विभाग की एक शाखा खोल सकती है।

देश की सुरक्षा

यदि देश अपनी सुरक्षा के लिए पूरी तरह से तैयार नहीं हो, तो दूसरे देशों द्वारा आक्रमण का खतरा सदा बना रहेगा। अत. इस खतरे का सामना करने के लिए पूरी तैयारी होनी चाहिए। सुरक्षा के तीनों अगो—थलसेना, जलसेना और वायुसेना को हर प्रकार के आधुनिक साज-सामान से लैस रखना चाहिए। सेना के प्रशिक्षण की सारी सुविधाएं अपने ही देश के अन्दर उपलब्ध होनी चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षित व्यक्तियो और सब प्रकार के हथियारो की आवश्यकता है। आजकल देश की सुरक्षा में मशीनों का बड़ा भारी महत्व है। भारत को डट कर मुकाबला करना चाहिए ताकि स्पष्ट हो जाय कि कोई भी देश हमारी स्वतत्रता पर हाथ बढ़ायेगा, उससे हम लड़ने को तैयार है। देश की जनता आपस मे भले ही अहिंसात्मक ढग से रहे, परन्तु बाहर के किसी भी हमले का सामना करने के लिए उसे सदा तैयार रहना चाहिए। संसार की इतनी बड़ी-बड़ी शक्तियों के सामने निहत्थे होना, उन्हे आक्रमण के लिए बुलावा देना है।

सैनिक प्रशिक्षण—किसी भी आकस्मिक विपत्ति का सामना एक देश किस प्रकार कर सकता है, इसका उदाहरण दूसरे विश्वयुद्ध से पूर्व जापान द्वारा अपनायी गयी नीति से मिलता है। प्रत्येक गाव की आबादी मे से कुछ लोग (दो से पाच प्रतिशत तक) ऐसे होते थे, जिन्हें युद्ध मे लडने का प्रशिक्षण दिया जाता था। और कभी लडाई छिड जाने पर ये लोग मोर्चे पर जाने के लिए सदा तैयार रहते थे।

आज के इस मशीनी युग में सेना की शक्ति उसके अफसरों के दिमाग मे रहती है। शिक्षित वर्ग मे से अधिक-से-अधिक अफसर भर्ती किये जाने चाहिए। सेना के तीनों अगो के लिए देश के हर हिस्से और हर समुदाय में से नौजवानो का चुनाव होना चाहिए। जल, थल और वायुसेना के अफसरों को प्रशिक्षण देने के लिए अभी दो-तीन कालेज और खुलने चाहिए। विश्वविद्यालयों में सैन्य विज्ञान को उचित प्रमुखता दी जानी चाहिए।

अस्त्र और शस्त्र निर्माण की मशीनों का उत्पादन—सैनिक प्रशिक्षण के बाद यदि किसी बात का महत्व है, तो वह है अस्त्र-शस्त्र बनानेवाली मशीनों का निर्माण। परन्तु यह तब तक सम्भव नहीं, जब

तक आवश्यक उद्योग और अनुसंधान कार्य को साथ-साथ नहीं चलाया जाता।

सैन्य शक्ति का मुख्य स्रोत संगठित और विकसित उद्योग है, जिसके साथ-साथ कच्चे माल के साधनों की उचित जानकारी का होना भी ज़रूरी है। सेना के पास आधुनिक क़िस्म के युद्धपोत, यूवोट, ट्रक, हवाई जहाज और दूसरे हथियार होने चाहिए, जिससे कि वह अपने देश की भलीभांति रक्षा कर सके। देश की सुरक्षा स्थिति, सुरक्षा समस्याओं तथा अस्त्र निर्माण की मशीनों की ओर ध्यान देने की बड़ी भारी ज़रूरत है।

जनता में जो लोग सुरक्षा सम्बन्धी बातों की जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें पूरी जानकारी नहीं मिल पाती। आशा है कि भविष्य में लोगों को इस प्रकार की जानकारी प्राप्त कराने की व्यवस्था की जायगी, ताकि वे इन मामलों में रुचि ले कर आपत्काल में सेना को सहयोग प्रदान कर सकें। देश की रक्षा के लिए आगे बढ़ना एक बड़ी भारी ज़िम्मेदारी का काम है। आशा की जाती है कि यह ज़िम्मेदारी केवल उच्चकोटि के देशभक्त और निष्ठावान् व्यक्तियों को ही सौंपी जायगी।

अमरीका ने पिछली लड़ाई में जो हथियार इस्तेमाल किये थे, उन्हें काफ़ी समय तक वाशिंगटन में प्रदर्शित किया गया था, ताकि लोग उनसे परिचित हो जायें। लेखक ने इस प्रकार प्रदर्शित किये गये बहुत से हथियार वहां १९४६ में देखे थे। इसके अतिरिक्त जनता को जलसेना, थलसेना तथा वायुसेना की शक्ति के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करायी जाती थी।

अणुबम और हाईड्रोजन बम

अणुबम लोगों के लिए एक और ख़तरे का कारण बन गया है। अमरीका और रूस दोनों देश इन बम को बनाने में सफल हो गये हैं। विश्व के कई दूसरे मन्य देश भी गुप्त रूप से इसे बनाने का प्रयास कर रहे हैं। दूसरे विश्वयुद्ध में अमरीका द्वारा जापान के विरुद्ध नागासाकी और हीरोशिमा नामक शहरों पर इस बम का प्रयोग किये जाने का जो घातक परिणाम हुआ, उससे पता चलता है कि यह बम मानवता के लिए कितना विनाशकारी है। जब तक अमरीका और

रूस दोनों मिलकर इस बम पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए राजी नहीं हो जाते, तब तक, इस बारे में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन होगा। यदि यह दोनों देश ऐसा करने के लिए तैयार हो जाय, तो छोटे-छोटे राष्ट्र भी इनका अनुकरण करेंगे। यदि इस प्रकार का कोई समझौता नहीं होगा तो यह अस्त्र हमेशा के लिए सभ्यता और मानवता के लिए एक महान् संकट बना रहेगा।

नए आर्थिक जीवन दर्शन द्वारा खड़ी की गयी कठिनाइयां

समाजवाद : चिन्ता का एक और कारण है, समाज में कुछ वर्गों के बीच विचारों का परस्पर विरोध। यह बात आर्थिक जीवनदर्शन की एक नयी धारा के उदय होने के कारण पैदा हो गयी है। इस दर्शन के प्रचारक इस बात पर जोर देते हैं कि आय की असमानता--जिस के कारण कई लोगों को तो संसार भर के ऐश्वर्य प्राप्त हैं और कई जीवन की आवश्यकताओं से भी वंचित हैं—समाप्त हो जानी चाहिए। कुछ लोगों के पास सम्पत्ति है और दूसरे लोग अपने निर्वाह के लिए उन पर निर्भर हैं। इससे समाज में असन्तोष की भावना फैल गयी है।

वर्तमान समय के उत्पादन के सब साधनों को सम्पत्तिवानों ने अपने हाथ में ले रखा है। यह कहा जाता है कि श्रम का शोषण किया जाता है और उसे धन के उत्पादन में हाथ बंटाने के बदले में जो पुरस्कार मिलना चाहिए, वह नहीं मिलता।

जिनके पास सम्पत्ति है, वे श्रमिकों को रोजगार देने में समर्थ हैं और वे किसी भी उद्यम में लाभ में अपने लिए अनुपात से अधिक हिस्सा रख लेते है, जिससे लोगों के जीवन स्तर में बहुत-सी असमानताएं उत्पन्न हो जाती हैं। पूंजीमूलक उत्पादन के प्रति एक शिकायत यह भी की जाती है कि बहुत से उद्योगों में प्रतियोगिता के स्थान पर पूंजीपतियों का एकाधिकार छा जाता है।

समाजवाद यह चाहता है कि वेतन के अतिरिक्त और सब प्रकार की व्यक्तिगत आय को खत्म कर दिया जाय। यह इस बात पर बल देता है कि व्यक्ति का अधिकार केवल उस आमदनी पर ही होना चाहिए, जिसका वह स्वयं उपार्जन करे। सम्पत्ति, विरासत में मिली जमीन, ब्याज और मुनाफा जैसे अन्य साधनों की आय खत्म हो जानी चाहिए।

समाजवाद के अनुसार उत्पादन के साधनों और वितरण पर पूरे समाज का अधिकार होना चाहिए और उन्हें सहकारी ढंग से चलाना चाहिए। एक और बात जिसने मेरा ध्यान आकर्षित किया है वह यह है कि समाजवाद निजी लाभ को उपभोक्ता माल तक ही सीमित कर देगा।

समाजवाद कई प्रकार का है और विभिन्न स्वरूपों में पाया जाता है। ऐसी किसी एक विचारधारा को आजकल समाजवादी संसार के कई भागों में, उद्योग धन्धों, व्यापार अथवा प्रशासन का नियन्त्रण कर रहे हैं।

साम्यवाद : कुछ लोगों के लिए ऐश्वर्य और बहुतों के लिए ग़रीबी जीवन की एक वास्तविकता है। इससे 'जिनके पास है' और 'जिनके पास नहीं है' के दो भिन्न-भिन्न वर्गों की भावना उत्पन्न हो जाती है और समाजवाद साम्यवाद के नाना रूपों में दिखलायी पड़ने लगता है। पूंजीपति या सम्पत्तिवान वर्ग सीमित है और श्रमिक वर्ग बहुसंख्यक। श्रमिक वर्ग ने एक जुट होना सीख लिया है और अपने मालिकों की परवाह न करके उन्हें सुविधा देने पर मजबूर करता है।

चूंकि प्रत्येक प्रजातन्त्र में वयस्क व्यक्ति को मत देने का अधिकार है, इसलिए यह कहा जाता है कि अमरीका जैसे देश में भी श्रमिक वर्ग के मत प्राप्त करने के लिए उन्हें सुविधाएं दी जाती हैं।

पूंजीवाद से साम्यवाद की दिशा में संतरण की चार अवस्थाएं बतायी जाती हैं—पूंजीवाद, श्रमिक वर्ग की तानाशाही, समाजवाद और साम्यवाद।

सोवियत रूस में सार्वलौकिक जनवादी इस विचारधारा की अत्यन्त वामपन्थी नीतियों को दृढ़तापूर्वक अपना रहे हैं और मास्को अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवाद का केन्द्र बन गया है। ऐसा लगता है कि रूस संसार के कई भागों में लोगों को व्यक्तिगत तथा सामुदायिक रूप से प्रेरणा दे रहा है।

१९३६ के सोवियत विधान ने उत्पादन के साधनों के सामूहिक स्वामित्व की व्यवस्था की।

कहा जाता है कि रूस के आर्थिक प्रजातन्त्र का आदर्श यह है कि व्यक्ति को उसकी उत्पादन क्षमता के अनुपात से पुरस्कार दिया जाय। लेकिन इस प्रकार की कोई जानकारी जनता को उपलब्ध नहीं, जिससे यह विश्वास हो कि इस बात में ईमानदारी बरती जाती है।

ऊपर समाजवाद और साम्यवाद का जो वर्णन दिया गया है, वह उन विश्वसनीय स्रोतों के आधार पर है, जो हमें उपलब्ध है। इनमे से कोई भी नीति किसी स्थायी स्वरूप में बहुत समय तक व्यवहार में नही आयी है। परन्तु रूस में जो साम्यवाद है वह तो है ही।

यूरोप और अमरीका में लोग बहुत बड़ी संख्या मे साम्यवाद का विरोध करते हैं। आज संसार इन दो परस्पर विरोधी आर्थिक और राजनीतिक जीवन दर्शनों के बीच भटक-सा रहा है।

कुछ लोग साम्यवाद को मुक्ति का साधन मानते है, दूसरे इसे महानाश समझते हैं।

बहुत से लोग आधुनिक जीवन की बुराइयों को दूर कर पाने में असमर्थ है। लोगों की चिन्ता ही साम्यवाद को जन्म देती है।

इस अध्याय मे जो कुछ भी लिखा गया है, उससे पता चलेगा कि केवल भारत के लोग ही नहीं, बल्कि सारी मानव जाति ही पिछले ५० वर्षों मे ऐसे नये खतरों और आपदाओं में आ फसी है जिनके लिए वह तैयार नहीं थी। विज्ञान की धुआँधार प्रगति और आर्थिक तथा राजनैतिक जीवन दर्शन के परिवर्तनों के बीच उन कठिनाइयों के लिए जो आज उठ खड़ी हुई है किसी स्थायी हल की भविष्यवाणी कर पाना मुश्किल है।

आज केवल एक ही क्रियात्मक पग उठाया जा सकता है और वह यह कि अनुसंधान जारी रखा जाय और गतिविधियों पर नजर रखी जाय। इस प्रकार की सावधानी बरतने के लिए दो जानकार समितियां होनी चाहिए—एक वैज्ञानिक पहलुओं के लिए और दूसरी आर्थिक व अन्य धाराओं के लिए। इनका काम यह होगा कि ये उन खतरों से बचने के लिए, जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है, यथा सम्भव कुछ उपाय खोजने में लगी रहे।

अध्याय १८

राष्ट्रीय चरित्र

यदि आप एक अच्छे राष्ट्र की नींव रखना चाहते हैं तो उसके नागरिकों को बनाइए। एक सफल राष्ट्र वह होता है जिसके नागरिकों की बहुसंख्या कुशल, चरित्रवान् और अपने कर्तव्य को समझने वाली हो। जैसा कि हम सब जानते हैं, व्यापार की नींव साख होती है। यह साख विश्वास पर निर्भर है और विश्वास चरित्र के सहारे खड़ा होता है।

एक कुशल राष्ट्र बनाने के लिए यह आवश्यक है कि, देश के योग्य सलाहकारों के सुझावों के अनुसार, आधारभूत राष्ट्रीय आदर्शों, ज़िम्मेदारियों और विशिष्ट नीतियों की एक योजना और कार्यक्रम बनाया जाय।

इस समय हमारे देश के अधिकांश लोग न तो प्रशिक्षित हैं और न उन्हें अनुशासन की कुछ परवाह है। केवल बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो वांछित स्तर पर पूरे उतरते हैं। लोगों की बहुसंख्या तो लिखना पढ़ना भी नहीं जानती और रूढ़ियों का शिकार बनी हुई है।

विदेशी राष्ट्रों से यह आशा नहीं की जा सकती कि वे भारतीयों को परामर्श दें कि वह अपना विकास एक कुशल राष्ट्र के रूप में किस प्रकार कर सकते हैं। यह उत्तरदायित्व सरकार तथा देश के नेताओं का है कि वे लोगों का चरित्र निर्माण करें और उन्हें अच्छी आदतें डालें।

राष्ट्रीय चरित्र के विकास की नीति सरकार की दीर्घकालीन नीतियों में होनी चाहिए। जो भारतीय यह समझते हैं कि भारत का संसार के अन्य राष्ट्रों में अपनी कुशलता और उच्च राष्ट्रीय चरित्र के लिए नाम हो, उन्हें चाहिए कि वे इस नीति को पूरा प्रोत्साहन दें।

अन्ततः चरित्र और कुशलता से उच्च कार्यक्षमता, सुखमय जीवन और दीर्घायु प्राप्त होती है। इस दृष्टि से पश्चिम के विकसित देशों की, जैसे अमरीका की, जनता ने जो प्रतिमान हासिल किए हैं, उनमें और वर्तमान भारतीय प्रतिमानों में बहुत अन्तर है।

शिक्षा और नियोजित जीवन

यह बार बार कहने की जरूरत नहीं है कि औसत हिन्दुस्तानी की उपार्जन क्षमता कम होने का कारण यह है कि हमारे देश की अधिकांश जनता अनपढ़ है। निरक्षरता के अलावा, लोगों की गरीबी और फूहड़पन का जो एक और कारण है वह कि लोग एक ही धंधे पर टिक कर काम नहीं करते।

औसत भारतीय मुख्यतः इन्हीं कमियों के कारण परम्पराओं पर आधारित अनियमित जीवन बिताता है। प्रगतिशील जीवन व्यतीत करने के लिए उसे किसी का मार्ग दर्शन नहीं मिलता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बहुत से ऐसे लोग भी हैं जो अशिक्षित होते हुए भी अपने सीमित क्षेत्र में बड़ी समझदारी का सबूत देते हैं। लेकिन आम तौर पर शिक्षा की कमी के कारण वे ऊंचे जीवन स्तर से वंचित रह जाते हैं।

कुछ लोग अशिक्षित होते हुए भी अपनी प्रकृति प्रदत्त प्रतिभा के कारण अपना प्रभाव जमा लेते हैं और समृद्ध बन जाते हैं। परन्तु उच्च शिक्षा, अनुशासन में ढली आदतें और योजनाबद्ध जीवन--ये सब ऐसी बातें है जो व्यक्ति के चरित्र और रहन-सहन के स्तर को काफी ऊंचा उठाते हैं।

अमरीका जैसे देश के लोग क्यों अधिक समृद्धिशाली, प्रगतिशील और दीर्घायु हैं—इनका कारण यही है कि उन्हें संसार में सर्वोत्तम प्रकार की शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध हैं और वे संसार की सभी समस्याओं के प्रति जागरूक हैं। उनका जीवन योजनाबद्ध और अनुशासित होता है।

औसत अमरीकी शिक्षा, व्यावहारिक कुशलता, यांत्रिक उपकरणों और विज्ञान की दृष्टि से कहीं अधिक सम्पन्न है। अमरीका के लोग अधिक कुशल संगठनकर्ता और उद्यमकर्ता होते है और भारत के लोगों से अधिक परिश्रमी हैं। उनके नेता योग्य तथा क्षमता सम्पन्न होते है। उन्होंने अपने धंधों में कई पीढ़ियों के अनुभवों का निचोड़ इकट्ठा किया होता है, जो उनका मार्ग दर्शन करता है।

दूसरी ओर भारत की अधिकांश जनता अशिक्षित है और बहुत से लोग, जो अब तक पुराने ढर्रे का जीवन बिता कर ही सन्तुष्ट थे, जिनमें आकांक्षाएँ और आगे बढ़ने की इच्छा न थी, अब आबादी बढ़ जाने के कारण, अपना निर्वाह भी नहीं कर पा रहे।

शिक्षा के अभाव ने लोगों को आलसी बना दिया है और उनकी आकांक्षाएं मर गयी हैं। संगठन क्षमता और सृजनात्मक शक्ति या तो कम है या बिल्कुल नहीं है। मुख्यतः शिक्षा की कमी के कारण औसत भारतीय की उपार्जन शक्ति एक अमरीकी की उपार्जन शक्ति के दसवें भाग से भी कम है।

अत भारत में प्रगति के लिए जिस एक बात की बहुत अधिक ज़रूरत है वह है अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा। अपने देश में सुधार करने के लिए रूस ने सबसे पहले इसे ही लागू किया था। आशा है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार इस बहुत बड़ी कमी की ओर अधिक समय तक लापरवाही नहीं दिखायेगी।

सन् १९४६ में शिक्षा विभाग, न्यूयार्क के अधिकारियों ने लेखक को बताया था कि यदि स्कूल जानेवाली आयु का कोई बच्चा किसी स्कूल में नहीं जाता तो उसके माता-पिता को गिरफ़्तार किया जा सकता है। परन्तु भारत में नियम और आदेश मनवाने के लिए इस प्रकार की सख़्ती नहीं बरती जाती।

जीवन के कुछ बुनियादी विचार और विश्व-घटनाओं का ज्ञान

इस सम्बन्ध में कुछ बुनियादी विचार निर्धारित किये जा सकते हैं, जो सुधारों की पृष्ठभूमि का काम करेंगे। जैसा कि उपलब्ध परिणामों से पता चलता है, औसत भारतवासी की कार्य शक्ति बहुत कम है, क्योंकि जन संख्या गुज़ारे के साधनों की अपेक्षा अधिक तेज़ी के साथ बढ़ रही हैं। हालांकि भारत एक कृषिप्रधान देश है, फिर भी यहां इतना अन्न पैदा नहीं होता जो देश की सारी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। यहां के लोग अभी दूसरे काम-धंधों से भी इतना उपार्जन नहीं कर रहे जिससे कि बाहर से मंगवाये अन्न की क़ीमत चुका सकें।

पश्चिमी देशों का आम नारा है जिसकी महत्ता भारतीय नागरिक कुछ कम ही समझ पाये हैं; वह नारा है :—यदि काम नहीं करोगे

तो खाओगे भी नहीं।"

अपने काम से ही तो व्यक्ति अपने निर्वाह के लिए कमा पाता है। प्रत्येक व्यक्ति को इतना काम करना चाहिए जिससे वह अपना तथा अपने परिवार का भलीभांति निर्वाह कर सके और दूसरों के ऊपर बोझ न बने। उसे इसके अलावा

के काम आना चाहिए। अधिक कुशलता या आकांक्षा से किये गये कार्य में साधारणतः अधिक फल की प्राप्ति है।

कार्य कुशल बनने के लिए औसत भारतवासी के लिए यह जरूरी है कि वह पहले से अधिक परिश्रम करे और अपनी आदतों को अनुशासन के साँचे में ढाले तथा जहाँ तक सम्भव हो, संसार की सामान्य घटनाओं की जानकारी प्राप्त करे। प्रत्येक प्रगतिशील व्यक्ति को इन बातों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। अधिक योग्य तथा क्षमतावान व्यक्तियों को अपने काम में अधिक कार्यकुशलता लानी चाहिए। जितने भी महान् व्यक्ति अब तक संसार में हुए हैं, वे सब निरन्तर परिश्रम के कारण ही महान् बन सके।

भारत में हम लोगों को इस स्तर तक पहुँचने का प्रशिक्षण नहीं दिया जाता। हम लोग धुंधले आदर्शों की छाया में पलते हैं और हमें जोखिम झेलने की शिक्षा भी नहीं दी जाती। पश्चिम के उद्योगपतियों को इन बातों की सीख मिली होती है। उनका जन्म ही उस जाति में होता है जो संघर्ष और उद्यम की आदी है।

अमरीका आज सबसे धनाढ्य राष्ट्र है और अमरीकावासियों का जीवन-स्तर संसार में सबसे ऊँचा है। लेकिन फिर भी जब कभी उद्यम का अवसर आता है, वे हर एक बात के लिए तैयार रहते हैं और अपना जीवन तक बलिदान करने से पीछे नहीं हटते।

यहाँ भारत में हमारा जीवन दर्शन ही कुछ और है। इसमें न गति है और न महत्वाकांक्षा।

अमरीकी केवल व्यापारी जीवन की सुरक्षा से ही सन्तुष्ट नहीं हो जाते। हारवर्ड विश्वविद्यालय, बोस्टन के एक प्रोफेसर श्री सम्नर स्लिचर ने कुछ वर्ष पूर्व एक सार्वजनिक सभा में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था :

> "मनुष्य के आदर्शों में सुरक्षा का स्थान निस्सन्देह बहुत ऊँचा है। परन्तु हमें यह याद रखना चाहिए कि कोई भी राष्ट्र केवल सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील रहने पर ही महान् नहीं बन सकता। मनुष्य में जो सर्वोत्कृष्ट है, उसे उभारने के लिए ठोस और गतिशील आदर्शों की आवश्यकता है। जो भी राष्ट्र महान् बनने के इच्छुक हैं, उन्हें सुरक्षा से अधिक महत्व उद्यम को देना होगा। कुछ लोगों के चलाये हुए उद्यम अनगिनत लोगों को रोजगार देते हैं। इसलिए देश के आविष्कारों, प्रयोगकर्ताओं और उद्यमकर्ताओं को

विशिष्ट स्थान प्राप्त होना चाहिए, और उनके लिए हर तरह से अनुकूल वातावरण बनाना चाहिए।"

"देश को इस बात के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए कि उसमें ऐसे उद्यमकर्ताओं की गिनती बढ़े, जो दूसरों के पास नौकरी न करके अपने यहां दूसरों को नौकरी देते हैं।"

आधुनिक राष्ट्रों ने बहुत-सी अच्छी बातों को ग्रहण किया है : जैसे—परिश्रम, एकता, दूरदर्शिता, महत्वाकांक्षा। इसके अतिरिक्त उन्होंने काम को सुचारु रूप से करना भी सीख लिया है।

काम को सर्वांगपूर्ण ढंग से करने के प्रयत्न का एक उदाहरण 'न्यूयार्क वर्ल्ड' के विख्यात पत्रकार श्री जोसेफ़ पुलिट्ज़र के जीवन से मिलता है। इस सम्बन्ध में पियर्सन्स पत्रिका के मार्च, १९०९ के अंक में एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसका कुछ अंश इस प्रकार है :

"समाचार पत्रों में काम करते समय श्री पुलिट्जर अपनी मानसिक तथा नैतिक शक्तियों को तुरन्त काम में जुटा देते थे और किसी तथ्य को विचार को पूर्णरूप से प्रभावशाली बनाने के लिए घंटों प्रयत्न करते थे। अनुशासन का परिणाम ऐसा ही होता है।"

आज के इस कोलाहलपूर्ण जीवन में यदि कोई समुदाय सफल व्यवसायी बनना चाहता है, तो उसके लिए अच्छी आदतें और अच्छा बर्ताव बहुत जरूरी है। एक औसत नागरिक अनुभव द्वारा यह देखेगा कि योजनाबद्ध कार्य तथा अनुशासन बद्ध आदतों से मनुष्य स्वस्थ रहता है तथा दीर्घायु बनता है।

काम के नियमित घंटे, काम करने के लिए ठीक समय पर पहुंचना, अच्छी व्यावसायिक आदतें और समय की क़द्र ये सब कुछ ऐसी बातें हैं, जो व्यक्ति को समृद्ध, चिन्तारहित और स्वस्थ जीवन बिताने में सहायता देती हैं।

लोगों की प्रकृति प्रदत्त बुद्धि और क्षमता में अन्तर हो सकता है, परन्तु उन्हें दूरदर्शिता, परिश्रम और संकल्प शक्ति द्वारा विकसित किया जा सकता है।

किसी भी व्यापार या धंधे में व्यक्ति विशेष की सफलता बहुत हद तक उसकी क्षमता, व्यक्तित्व, निष्ठा और दूरदर्शिता पर निर्भर करती है। जीवन में मनुष्य की सफलता उसकी अपनी भाग दौड़ पर ही निर्भर है। जीवन में जो विपत्तियां आती हैं, उनमें से शायद सब संयोग मात्र नहीं होतीं, (मोनिस्ट नामक पत्रिका

के एक पुराने अंक से उद्धृत) बल्कि उनका कारण यह होता है कि लोग आराम का जीवन बिताना चाहते हैं और कठिनाइयों से दूर भागते हैं। जिस व्यक्ति ने कठिनाइयों से कतराने और आराम को पाने का सिद्धान्त बना रखा हो, वह एक न एक दिन जरूर मुसीबत में फंसेगा। सुख-दुःख के साथ समान रूप से निबाह करना ही जीवन में स्थायी सफलता का आधार है। नैतिक कार्यों पर निष्ठा की छाप होती है और यही किसी महान् व्यक्ति की महानता की सबसे बड़ी शर्त है।

आचार नियम

आचार नियमन करने के लिए जो भी नियम बनाये जायें, इतने संक्षिप्त रूप में होने चाहिए कि भारतीय नागरिक उन्हें आसानी से याद रख सकें। इन नियमों की रूपरेखा को मैंने चार भागों में बांटने का प्रयत्न किया है।

१. कठोर काम : औसत भारतीय हर एक काम को गंभीर रूप से नहीं करता। साधारणतः वह बहुत थोड़ा काम करता है। इसका नतीजा यह है कि देश में कार्य-कुशलता का स्तर तथा आर्थिक स्थिति बहुत हीन है।

पश्चिमी देशों में लोग कड़ी मेहनत करते हैं, काम ठीक ढंग से होता है और इसलिए उनकी उपार्जन शक्ति अच्छी है और जीवन-स्तर भी ऊंचा है।

२. नियोजित तथा अनुशासित कार्य : यदि काम को अनुशासित ढंग से किया जाय और दिन में काम के घंटे निश्चित कर दिए जायं तो इससे काम के मूल्य में बड़ी वृद्धि होगी।

अनुशासित ढंग से किये जाने वाले कठोर श्रम के फलस्वरूप व्यक्ति स्वस्थ रहता है और दीर्घायु होता है।

आराम करने से हर परिस्थिति में स्वास्थ्य को लाभ पहुंचता है, इस भ्रान्त धारणा को अब त्याग देना चाहिए। बहुत से लोग आराम के लिए अपने काम में परिवर्तन कर लेते हैं, उनके लिए आराम इलाज नहीं, बल्कि काम इलाज।

३. कार्यकुशलता : कार्यकुशलता का अर्थ है कि जहां तक सम्भव हो सके, मनुष्य अपने काम को परिश्रम, महत्त्वाकांक्षा, अनुशासन तथा नियम के साथ करे। साधारणतः काम करने का स्तर जितना ऊंचा होगा, उतना ही अधिक उस का पुरस्कार भी मिलेगा।

४. विनय और सेवा : पश्चिमी देशों में दूसरों के साथ मिल कर काम करने की भावना को बहुत सराहा जाता है। भारत में इस मित्रतापूर्ण भावना का अभी तक अभाव है।

साथ में काम करनेवालों या पड़ोसियों के प्रति प्रत्येक नागरिक का वर्ताव सद्भावना और मैत्रीपूर्ण होना चाहिए।

जो भी नागरिक जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहता है और समाज का एक योग्य सदस्य बनना चाहता है, उसे चारों सूत्र सदा ध्यान में रखने चाहिए।

ये सब लाभदायक गुण बिना प्रशिक्षण के प्राप्त नहीं किये जा सकते। इस प्रकार का प्रशिक्षण शिक्षा संस्थानों में दिया जाना चाहिए और वयस्क लोगों को, सरकार के निदेशन, में प्रचार द्वारा यह सब कुछ सिखाया जाना चाहिए। जापान में ऐसा ही होता था।

चूंकि अब हमारे देश में एक राष्ट्रीय सरकार है, इसलिए हमारे मन में नयी इच्छाएं और नई आकाक्षाएं जागृत हो उठी हैं।

ऊपर जिन चार नियमों का उल्लेख किया गया है, उनका ल य जनता में मेल-जोल और एकता स्थापित करना तथा उनमें कर्तव्य और दायित्व की भावना को बढ़ाना है।

अध्याय १९

राष्ट्रीय निर्माण और राष्ट्रीय कार्यकुशलता

पश्चिम के राष्ट्र इस बात को मानते हैं कि देश की उत्पादन शक्ति, उपभोक्ताओं की मांग, प्रशासनिक कार्यकुशलता, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधियों, राजनैतिक शक्ति, काम धंधों तथा सांस्कृतिक योग्यता में संतुलन बनाये रखना चाहिए। इसलिए हमें अपने देश में भी इस दिशा में कुछ काम आरम्भ करना चाहिए। पहले हमें काम-धंधों के बारे में खूब सोच-विचार कर एक भावी योजना बनानी चाहिए। यह काम-धंधे जनता के हित के लिए हों और जनता द्वारा ही चलाये जाएं। इसके लिये सरकार से भी सहयोग लेना चाहिए। जिससे भावी कार्रवाइयों को सफलता के पथ पर चलाया जा सके।

राष्ट्रनिर्माण और उसके उद्देश्य

आयोजना का अर्थ है काम करने का वह तरीका जो विशेष प्रकार के विकास, उद्देश्य या प्रयोजन को पाने के लिए आवश्यक समझा जाय। जन प्रशासन में जनता की भलाई के लिए योजना बनाने का विचार अन्तर्निहित है।

किसी भी राज्य या क्षेत्र के लिए आर्थिक आयोजना एक ऐसे योजनाबद्ध कार्यक्रम की रूपरेखा होगी, जो अपने साधनों और मनुष्य शक्ति को सर्वोत्तम ढंग से काम में ला कर, जनता की आय, जीवन-स्तर और भौतिक समृद्धि को बढ़ा कर देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए अमल में लायी जायगी।

कभी न कभी, आर्थिक आयोजना के साथ-साथ राष्ट्रीय जीवन के दूसरे क्षेत्रों में सुधार और पुनर्निर्माण के प्रश्न अपने आप आगे आएंगे। ये प्रश्न प्रशासनिक, सुरक्षा, राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में होंगे। ये एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और इनमें परिवर्तन करना जरूरी होगा। इन सब क्षेत्रों में आयोजना का जो व्यापक रूप होगा, उसे हम राष्ट्रीय योजना या राष्ट्रनिर्माण के नाम से पुकारेंगे। यदि इन सब क्षेत्रों में आर्थिक योजना को सफलता मिलती

है तो इससे राष्ट्रनिर्माण के तथा राष्ट्रीय कार्यकुशलता के अन्य प्रयोजन भी सिद्ध हो जायेंगे।

प्रारम्भ में निर्माण कार्यों के सामान्य उद्देश्य निम्न होने चाहिए:—

१. जनता के लिए पर्याप्त काम और अन्न इकट्ठा करना।

२. गुण और मात्रा की दृष्टि से काम बढ़ाना, उत्पादन में उन्नति करना, रोजगार बढ़ाना तथा आय में वृद्धि कर के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाना।

३. साथ ही धीरे-धीरे अन्य राष्ट्रनिर्माण के कामों को आगे बढ़ाना और उनके द्वारा ऐसा स्वस्थ, सुदृढ़ तथा समृद्ध राष्ट्र बनाने की कोशिश करना, जो कई दृष्टियों से आत्मनिर्भर तथा आत्मतुष्ट हो।

किसी राष्ट्र की आर्थिक सुदृढ़ता के लिए नियोजित जीवन सबसे ज़रूरी चीज है। आर्थिक सुदृढ़ता आ जाने पर इसकी सहायता से राष्ट्रनिर्माण के बहुत से दूसरे काम किये जा सकते हैं।

भारत में लोगों का व्यक्तिगत या राष्ट्रीय जीवन आयोजित नहीं है। ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि इस देश में सरकारी संगठन ने आर्थिक समस्या का कभी सम्पूर्ण रूप से सामना किया हो। यहां राष्ट्रीय प्रगति के प्रति सचेत रहने या उसे बढ़ावा देने की प्रथा ही नहीं रही।

जनसंख्या में वृद्धि, अन्न प्राप्ति, निरक्षरता निवारण, पूरी मोटर तैयार करना, हवाई जहाज बनाना या ऊंची श्रेणी की मशीनें निर्माण करने जैसी महत्त्वपूर्ण समस्याओं को हल करने की ओर पूरा-पूरा ध्यान नहीं दिया गया। इस दिशा में जो भी क़दम उठाये गये, उन्हें अधूरा ही छोड़ दिया गया। इन सब कमियों को दूर करने के लिए उपयुक्त योजनाओं या उपायों को लागू करने में अब देर नहीं की जानी चाहिए।

राष्ट्रीय योजना आयोग

सरकार ने अब विकास कार्यों का बढ़ाने और सुधारों तथा पुनर्निर्माण के कार्यों की ओर ध्यान देने के लिए राष्ट्रीय योजना आयोग स्थापित कर दिया है।

आयोग को जो काम तुरन्त अपने हाथ में लेना चाहिए वह है—देश के साधनों की दक्षता से पूरा लाभ उठा कर लोगों को अधिक सोचने और अधिक काम करने

के योग्य बनाना, अन्न की उपज बढ़ाना, देश के साधनों को काम मे लाकर आर्थिक शक्ति बढ़ाना तथा लोगों के जीवन-स्तर को ऊचा उठाना।

भविष्य मे पुनर्निर्माण की जो भी नई योजना बने, उसके बारे मे यह स्पष्ट रूप से बता दिया जाना चाहिए कि उसमे कितने परिणाम की आशा है और वह कितने समय के अन्दर पूरी हो जायगी।

राष्ट्र निर्माण से सम्बन्धित विषयों की गणना

यह वाछनीय है कि योजना आयोग को उन सब कमियो और आवश्यकताओ के बारे मे जानकारी हो जिन्हें राष्ट्रीय योजना या कार्यक्रम मे स्थान मिलना जरूरी है। इस प्रकार के कुछ विषयो का सक्षिप्त रूप मे नीचे उल्लेख किया जा रहा है।

१ ऐसे सुधार या विकास कार्य जो अत्यत जरूरी हैं।

धन की कमी के कारण शुरु-शुरु मे केवल उन सुधारो या विकास कार्यों को ही लागू किया जा सकता है जो बहुत जरूरी है।

इस देश के औसत नागरिक को यह बात याद दिलाई जानी चाहिए कि उसकी उपार्जन शक्ति कम और जीवन स्तर नीचा होने का कारण यह है कि वह अपनी हालत मे सन्तुष्ट है और अपनी मानसिक और शारीरिक शक्ति का ठीक ढंग से प्रयोग नही करता। उसे यह सीख नही दी गई कि काम हर प्रकार की समृद्धि का स्रोत है।

देश की यह नीति होनी चाहिए कि वह प्रत्येक नागरिक को अपने समय का सदुपयोग करने और कठोर परिश्रम करने के लिए उभाडे, ताकि वह अपने तथा अपने परिवार का निर्वाह कर सके। जब भी सम्भव हो और जितना बन पडे, हर नागरिक को आय का कुछ अश राष्ट्रीय सम्पत्ति और सुरक्षा के निर्माण के लिए देना चाहिए।

छोटे किसानो, कारीगरो तथा दुकानदारो को लाखो की सख्या मे प्रारम्भिक उद्योग धधों मे लगातार सिलसिलेवार प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

इस्पात, मशीनी औजार और मशीनें, मोटर गाड़ियां, हवाई जहाज और पानी के जहाज बनाने जैसे कुछ उद्योगो को जो ऐसे कारणों से पिछड़े है जिन्हें जनता नही जानती, उनका विकास करना चाहिए और उन्हें सन्तोष-

बड़े पैमाने पर शिक्षा : बड़े पैमाने पर शिक्षा प्रसार का काम, जिसकी ओर अब तक ध्यान नहीं दिया गया, तेज़ी से आरम्भ होना चाहिए।

जैसा कि सोवियत रूस में किया गया था, देश में अनिवार्य शिक्षा को दृढ़ता-पूर्वक लागू कर देना चाहिए। हमारे देश में यह काम बड़े बेमन से किया जाता है। इस काम में आर्थिक कठिनाइयां हो सकती हैं, परन्तु स्थानीय प्रयत्नों द्वारा शिक्षा का प्रसार किया जा सकता है। हर क्षेत्र में प्रगति के लिए बड़े पैमाने पर शिक्षा प्रसार परम आवश्यक है। इसके बिना देश उन्नति की चरमसीमा को प्राप्त नहीं हो सकता।

व्यावसायिक शिक्षा : लाखों की गिनती में लोगों को काश्तकारी, दस्त-कारी और छोटे पैमाने पर दूकानदारी का प्रशिक्षण देने के लिए विशेष प्रबन्ध करने की ज़रूरत की ओर पहले ही ध्यान दिलाया जा चुका है।

उच्च क्षमता वाले लोगों को प्रशिक्षण के अनुकूल अवसर मिलने चाहिए, जिससे देश में पर्याप्त संख्या में उच्चकोटि के संगठक, तकनीकी विशेषज्ञ और वित्त व्यवस्थापक तैयार हो सकें।

सांख्यिकी सम्बन्धी प्रशिक्षण : भूतकालीन स्थिति से वर्तमान स्थिति की तुलना करने के लिए आंकड़े बड़े लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं और इस से यह भी पता चल सकता है कि भारत की तुलना में अन्य प्रगतिशील देश किस रफ़्तार से और किन साधनों द्वारा उन्नति कर रहे हैं।

उच्च शिक्षा के लिए अंग्रेजी भाषा का माध्यम : जापान ने शुरू से ही अपने विश्वविद्यालयों में अंग्रेज़ी भाषा को बनाये रखकर बहुत लाभ उठाया। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ही जापान को संसार के दो अग्रगामी देशों, अम-रीका और इंग्लैण्ड में होनेवाली सभी प्रकार की उन्नति से निकट सम्पर्क स्थापित करने में सहायता मिली।

अंग्रेज़ी भाषा को अपने यहां चालू रखने में भारत को इस समय जो लाभ है, उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि विश्व की परिस्थितियों में कोई ऐसा परिवर्तन न हो जाय जिससे अंग्रेज़ी को त्यागना जरूरी हो जाय।

उन्नति में बाधक कुछ पारस्परिक असंगतियों और कमियों को दूर करना

जो लोग व्यावसायिक और तकनीकी दृष्टि से योग्यता प्राप्त है, उन्हें देश के प्रत्येक क्षेत्र में सेवा कार्य करने के अवसर मिलने चाहिए। ऐसा करते समय दलगत भावनाओं को महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

यह सरकार का एक मूल कर्तव्य है कि वह उन लोगों के लिए काम की व्यवस्था करे, जो काम करने के लिए तो तैयार है पर उनके पास काम नहीं है। चाहे वो किसी भी दल या जाति के हों।

अक्सर होता यह है कि नौकरियों के मामले में अपने सगे-सम्बन्धियों, अपनी जाति या क्षेत्र के लोगों को प्राथमिकता दी जाती है और योग्यता धरी की धरी रह जाती हैं। यदि यह बातें शीघ्र ही खत्म न की गयी तो भारत कभी भी प्रगति के पथ पर आगे नहीं बढ़ सकता।

यहां पर मैं राष्ट्रीय जीवन और चरित्र (नेशनल लाइफ एण्ड केरेक्टर) के लेखक चार्ल्स एस० पियर्सन ने इन सामान्य किन्तु अत्यन्त हानिकारक बातों के बारे में जो कुछ लिखा है, उसे उद्धृत करता हूँ :

> "उन देशों मे जहां योग्यता के आधार पर तरक्की देना प्राय कोई भी नही जानता, वहा असैनिक सेवा मे नियुक्त छोटे अधिकारियों मे उत्तरदायित्व की भावना नाममात्र होती है और कर्तव्यपालन में भी उन्हें विशेष कष्ट उठाने की प्रवृत्ति नहीं होती। इसलिए, जैसा कि सम्भव ही है, यदि सरकार उद्योग पर निरन्तर अपना नियन्त्रण बढ़ा रही है और ज्यादा से ज्यादा लोगों को नौकरिया दे रही है तो फिर सेवाओं में होड की भावना बिल्कुल लुप्त हो जायेगी और हर विभाग में काम का स्तर इतना नीचा हो जायगा कि चरित्र विकास की शिक्षा ही खत्म हो जायगी।"

इन बातों को ध्यान में रखते हुए सरकार को ऐसे देशभक्त नेताओं की एक समिति बनानी चाहिए, जो महत्वपूर्ण सरकारी पदों के लिए योग्य और क्षमतावान व्यक्तियों का चुनाव कर सके।

जो लोग चुने जायें वे सरकार का काम-काज चलाने में उच्चस्तर की कार्य-कुशलता नैतिकता, और उत्तरदायित्व का सबूत दें।

कुछ व्यावसायिक पद्धतियां आज भी भारत में अधूरी है और उनमें सुधार

करने के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की जरूरत है। इस प्रकार का प्रशिक्षण देने वाले सर्वोत्तम कालेज और स्कूल अमरीका के वोस्टन नगर में हैं।

सरकारी कर्मचारियों की व्यवहार संहिता में न कोई नियम है, न कोई प्रणाली। इसमें उचित सुधार होना चाहिए। कार्याधिकारियों के लिए सही कार्य व्यवहार के नियम बनाने चाहिए और एक उपयुक्त व्यापार व्यवस्था बनायी जानी चाहिए। एक भारतीय रियासत के शासन प्रबन्ध में लेखक ने अधिकारियों में अनुशासन क़ायम रखने के लिए एक नियमावली लागू की थी। लोक सेवा कार्य के कुछ विभागों में इस प्रकार के नियमों का होना बड़ा ज़रूरी है। राष्ट्रीय चरित्र शीर्षक के १८वें परिच्छेद में औसत नागरिक के कार्य व्यवहार में कुछ नियमित आदतों तथा अनुशासन की ओर ध्यान दिलाया गया है।

प्रति व्यक्ति उत्पादन बढ़ाने और उत्पादन का ख़र्चा घटाने के लिए अधिक मशीनों तथा मशीनी औजारों के इस्तेमाल को प्रोत्साहन देना चाहिए।

५. धंधे आदि

धंधे : कहा जाता है कि ५५० लाख से भी अधिक अमरीकी प्रतिदिन, प्रतिवर्ष अपना दिमाग़ हज़ारों तरह के व्यापार, दस्तकारियों, धंधों और व्यवसायों के लिए खपाते हैं। वे अपने समय और अपनी योग्यता को सदा अमरीका को समृद्ध बनाये रखने और अपना पुरस्कार प्राप्त करने में लगाते हैं।

अमरीका और कनाडा, दोनों देशों में लोगों के धंधों को दस वर्गों में बांटा गया है। भारत में भी लगभग यही वर्गीकरण किया गया है। लेकिन अमरीका में इन दस मुख्य वर्गों को कई अन्य धंधों में बांटा गया है और एक तालिका बना कर यह बताया जाता है कि एक धंधे में कितनी स्त्रियां और कितने पुरुष काम करते हैं। इससे रोज़गार ढूंढ़ने वालों को यह पता चल जाता है कि किसी एक इलाक़े में किस प्रकार का काम किया जाता है।

रोज़गार की स्थिति के बारे में लोगों को जानकारी प्राप्त कराने के लिए आसपास के नगरों में विशेष सुविधाएं दी जाती हैं, जिससे काम खोजने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए संतोषजनक धंधा चुन सके।

भारत में भी इसी ढंग से धंधों की ठीक ठीक ब्योरेवार सूची तैयार की जानी

जरूरी है। आशा है कि आगामी जनगणना में यह जरूरत पूरी हो जायगी।

राष्ट्रीय चरित्र : राष्ट्रीय योजना आयोग को चाहिए कि वह राष्ट्रीय चरित्र पर नजर रखे और उसे उन्नत करने के लिए कदम उठाये। राष्ट्रीय चरित्र अपने आप ऊंचा नहीं होगा। इसका निर्माण तो अनुशासन और चरित्र सम्बन्धी अन्य गुणों द्वारा ही होगा।

राष्ट्रीय सुरक्षा : सत्रहवें अध्याय में हम राष्ट्रीय खतरों के बारे में अपने विचार प्रकट कर चुके हैं। यह खतरे केवल भारत के सामने ही नहीं, बल्कि संसार के दूसरे देशों के सामने भी विद्यमान हैं। इस दिशा में जो कदम उठाये जा सकते हैं, वह यही हैं कि भारत को भी अनुसंधान कार्य में लगे रहना चाहिए और इन खतरों के स्वरूप में जो परिवर्तन हों, उन पर दृष्टि रखनी चाहिए।

कुछ दूसरे छोटे-मोटे खतरे भी हैं, जिनके प्रति सचेत रहना आवश्यक है। आजकल मोटर यातायात और हवाई जहाज चलाने के लिए पेट्रोल आदि काम में लाया जाता है, जो निरन्तर प्राप्त होता रहना चाहिए। यदि किसी कारण से लड़ाई छिड़ जाये और पेट्रोल आदि मिलना बन्द हो जाये तो यातायात में काफी बाधा पड़ सकती है। इन खतरों के प्रति भी सरकार को सचेत रहना चाहिए।

पंचवर्षीय योजना

पांच वर्षों के अन्तर्गत ऊपर दी गयी राष्ट्रीय समस्याओं को राष्ट्रीय योजना आयोग ठीक ढंग से निपटा सकता है। ऐसा माना जाता है कि इस जिम्मेदारी के काम को पूरा करने के लिए आयोग अपनी मदद खातिर अपने नियन्त्रण में तीन मंडल नियुक्त करेगा। ये मंडल आयोग की योजनाओं और कार्यक्रमों के लिए आवश्यक तथ्य और सामग्री प्राप्त कराने के हेतु छानबीन और अनुसंधान का काम अपने हाथ में लेंगे।

मण्डल १ : शासन प्रबन्ध जिसमें राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएं और सुरक्षा शामिल है।

मण्डल २ : आर्थिक महत्व की समस्याएं और तजवीज जिनमें आयोग, कृषि, व्यापार, परिवहन, शिक्षा आदि शामिल हैं।

मडण्ल ३ : अन्य सभी सामाजिक तथा सांस्कृतिक सुधार और विकास।

जैसा कि पहले वताया जा चुका है, उन योजनाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, जिनसे राज्य के वित्त और दूसरे साधनों में उन्नति हो।

प्रत्येक मंडल को अपने काम पर नज़र रखनी चाहिए और सभी वाञ्छित सूचना और तथ्य इकट्ठे करके आवश्यकतानुसार योजनाएं या तजवीज़ें तैयार करने के लिए उन्हें, समय समय पर, आयोग के सामने रखना चाहिए। इनमें राष्ट्र की वह तमाम कमियां और आवश्यकताएं भी शामिल होंगी, जिनकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है।

राष्ट्रीय योजना आयोग को पहले एक पंचवर्षीय योजना बनानी चाहिए और प्रत्येक वर्ष के प्रारम्भ में आगामी वर्ष के कार्यक्रम की तजवीज़ तैयार की जानी चाहिए।

रूस में इस प्रकार की योजनाओं से क्रान्तिकारी विकास हुए, इसलिए पंच-वर्षीय योजनाएं बहुत लोकप्रिय हो गयी हैं। परन्तु इस बात का यह अर्थ कदापि नहीं कि योजना किसी और अवधि के लिए, जैसे छः वर्ष के लिए, नहीं बनाई जा सकती। बात सिर्फ़ यह है कि पंचवर्षीय योजना एक परिचित नाम है।

हर साल होनेवाले परिवर्तनों के अनुसार पंचवर्षीय योजना में आवश्यक संशोधन भी किये जा सकते हैं।

यदि योजना आयोग उचित समझे तो एक दस वर्षीय योजना बनायी जा सकती है और उसे लक्ष्य के रूप में सामने रखा जा सकता है।

नयी योजनाओं का चुनाव करते समय योजना आयोग इन बातों का ध्यान रखेगा कि देश के व्यावसायिक कितना व्यय कर सकते हैं या सरकार के पास इस प्रकार की योजनाओं को पूरा करने के लिए कितने साधन हैं। तीनों मण्डलों की सहायता से योजना आयोग अधिक महत्त्वपूर्ण सुधारों और विकास कार्यों को वार्षिक तजवीज़ और पंचवर्षीय योजना में शामिल कर सकता है।

इस प्रकार आयोग समयानुकूल महत्त्वपूर्ण योजनाओं का चुनाव कर के राष्ट्र निर्माण के काम में निरन्तर सहायता करता रहेगा।

योजना आयोग अपनी पूरी शक्ति लगा कर उत्तरोत्तर देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने और कार्यकुशलता का स्तर ऊंचा करने का प्रयत्न करेगा। ज्यों ही किसी योजना की मंजूरी दी जाय, त्यों ही उसके काम को उचित गति

से चलाने की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि उसकी प्रगति में कोई बाधा न उठ खड़ी हो।

यदि किसी योजना की प्रगति में धन की कमी के कारण बाधा पड़ जाय तो उसे स्थगित नहीं कर देना चाहिए। जनता को प्रचार द्वारा उस योजना का महत्त्व समझाना चाहिए और धन इकट्ठा होने पर योजना के काम को पुन चालू कर देना चाहिए।

जिन तीन मडलों का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, वे अनुसधान कार्य करने के साथ-साथ योजनाओं की प्रगति पर भी नजर रखेंगे और उनके मार्ग में आने वाली रुकावटों के बारे में योजना आयोग को सूचित करेंगे।

इस दौरान में देश के साधनों पर दृष्टि रखी जानी चाहिए और वार्षिक तजवीजें बनाते समय हर दिशा में होनेवाले विकास को ध्यान में रखना चाहिए।

भारत को अमरीका और जापान जैसे देशों के उन अनुभवों को भी ध्यान में रखना चाहिए, जिनमें से होकर उन देशों को तब गुजरना पड़ा था, जब कि ससार के आर्थिक मामलों में अभी उनका प्रभाव नहीं जमा था।

भारत सरकार, योजना आयोग तथा तीनों मण्डलों को चाहिए कि वे भारत की सारी कमियों और आवश्यकताओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें।

अन्त में मैं इस बात की ओर विशेष रूप से ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि हमारी जनता में अनुशासन और सामान्य कार्यकुशलता सम्बन्धी जो दोष है, उन्हें जल्दी से जल्दी दूर किया जाना चाहिए, ताकि देश व्यवसायिक और आर्थिक दृष्टि से उन्नति करके शीघ्र ही ससार के दूसरे उन्नत देशों के स्तर तक पहुँच जाय।

भविष्य में एक महत्त्वपूर्ण विकास यह करना होगा कि कमियों को दूर करने और राष्ट्रव्यापी सुधारों को लागू करने की जिम्मेदारी का स्थानीयकरण कर दिया जाय, अर्थात् जहाँ तक संभव हो सके, जनसख्या और साधनों के अनुपात से हर छोटे-छोटे इलाके को भी इस जिम्मेदारी का भागीदार बना दिया जाय। यदि आकडे रखने की उचित व्यवस्था की जाय, तो हर विभाग में जहाँ-जहाँ विकास की आवश्यकता है, उसकी सही तस्वीर सामने आ जायगी चाहे किसी प्रान्त में, राज्य में अथवा सारे भारत में, तो हमेशा पथप्रदर्शन किया जा सकता है। पूरे देश की प्रगति की सही तस्वीर सदा हमारे सामने रह सकती है।

इसलिए निकट भविष्य में जो नीतियाँ बनें, उनका उद्देश्य यह होना चाहिए